

थॉमस पेन के राजनैतिक निबन्ध

Common Sense and other Political Writings by
Thomas Paine)

संपादक

मेल्सन एक एडवार्ड्स

अनुवादक

भागीरथ रामदेव बीशित



पुस्तक पब्लिशिंग प्राइवेट लिमिटेड बम्बई-१

मूल्य ५० रुपये केवल

सिक्स बार्दम प्रेस इन्कोर्पोरेसन, न्यूयार्क यू० एस० ए०
की स्वीकृति से
भारत में मुद्रित

शैलिक ग्रंथ का प्रथम हिन्दी अनुवाद ।

पुनर्मुद्रण के समस्त अधिकार प्रकाशक द्वारा सुरक्षित ।

प्रथम संस्करण—१९५८

प्रकाशक जी० एम० गीरबंशीधारी वर्म पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड,
१२, बालराम मेन्शन (रीमल सिनेमा के सामने) महारवा गंगी रोड,
बम्बई-१

मुद्रक : प्रल्लितान टी० राह
मिषिका प्रेस कुली राह, बंबरी ।

अनुक्रमसिका

१. दार्शनिक दृष्टि का परिचय	पृष्ठ १
२. सामान्य बुद्धि	३
३. अमेरिका की वर्तमान कार्य-स्थिति की विवेचना	२२
४. अमेरिका की वर्तमान शोषण तथा दुःख विविध विचार	३८
५. अमेरिका का संकट - १	४८
६. अमेरिका का संकट - २	५८
७. मनुष्य के अधिकार भाग - १	६८
८. मनुष्य के अधिकार : भाग - २	८१
९. सरकार के मूल तत्वों की विवेचना	११६
	१८४

परिचय

मैंने वेन माइक-हमात्र के द्विती की रक्षा करने वाली उन महान आत्माओं में से एक था जो अपने मृत्यु में आत्मिक आलोक भर दिया करती है। अठारह प्रमुख राजनीतिक और सामाजिक विमर्शों का अध्ययन करते समय उसे मुख्यतः मानव प्रेमी मानना चाहिए। मनुष्य के दुर्गों को देखकर वेन के हृदय में स्वभावतः जीवन-भर विद्रोहात्मक भावनाएँ उत्पन्न होती रहीं। राज्य के नामों में आत्मिक छवि रखनेवाले अपने सक्रिय अस्तित्व के सहारे वेन ने मानास इस बात का क्या तपाया कि विश्व में अन्याय और अत्याचार के कारण क्या है। वेन अपने जीवन में कभी भी निराशावादी नहीं रहा। सर्व-विध दुस्तूरों परीशों में जो वह करने चाहिये था कम-से-कम कुछ विरोध प्रकट करता था। उसका अविद विरोध था कि यदि जनता को अच्छे प्रयास के सिद्धान्तों से अवगत करा दिया जाए तो निरपेक्ष ही उनके दुर्गों को दूर किया जा सकता है। उनकी भावों के समुच्च वह स्पष्ट था कि "हम जिन्हें भय देना चाहते हैं, वहाँ के अधिकांश मानव नियन्त्रण और स्वतन्त्रता की स्थिति में हैं। वेन ने मानवीय स्वतन्त्रता के इस शोचकारक चित्र के लिए अत्याचारी शासन को दोषी माना। वह दुष्सा है कि क्या कारण है कि निर्बलों के अतिरिक्त अन्य व्यक्तियों का अनाधिक ही अल-अप-प्रतिष्ठा जाता। वहाँ तक गलत का अनुभव है कि वेन की महत्ता थी कि राजतन्त्र (Monarchy) मानवजाति के विरुद्ध है, क्योंकि एकत्र किये हुए व्यक्ति व्यक्तियों के लिये के लिए कार्य करते हैं। सरकार और मानव-जाति की एकत्र में अनेक सम्बन्ध - वह वेन का निश्चित भेद था जिसकी कारण दुष्प्रचार फैलता है उनके उन बातों से शुरू होकर वेन की महत्ता थी कि वेन मानवीय के सिद्धान्तों पर आधारित है। वेन के बहुमूल्य दान सिद्धान्तों को विश्व-व्यापी अविद रूप के अन्वय में मान्यता का उद्देश्य है। उनके जीवन और कृतियों के-आधार पर इसी विश्व का अविद अध्ययन इस 'परिचय' का उद्देश्य है।

यदि हम यह कहें कि वेन जैसे महान मानवजाती व्यक्ति के कुछ सम्बन्ध-आधार अविद रहे होंगे तो हमें उन अवशिष्ट तथ्यों पर विचार करने से बचना भी नहीं

बाहिए जिन्होंने वास्तवमें उसकी मानवतावादी प्रकृति को स्थिर किया और उसे बल प्रदान किया। हमें सबसे यह स्मरण रखना चाहिए कि वेन को अठारहवीं शती में रहने का सुयोग प्राप्त था। तथापि उस युग की सैद्धान्तिक पृष्ठभूमियों की समीक्षा करते समय प्रारम्भ ही में हमें यह समझ लेना चाहिए कि वेन न तो अधिक अभ्यसनीय व्यक्ति रहा, और न अपने मिन टॉम जेफर्सन के समान विद्वान ही था। उन्होंने जो कुछ मानोपार्जन किया वह केवल अनुभव-जन्य था। परन्तु उसे उन महान विचारों की पूर्ण जानकारी थी जिन्होंने अठारहवीं शती के उत्तरार्ध को राजनीति के मौलिक सिद्धान्तों और गुणों के लिए अत्यंत उत्तर बना दिया था। इसके लिए वेन को अभ्यसनीय की कोई आवश्यकता न पड़ी होगी। जैसा कि प्रोफेसर राबर्ट मिसबर्ट जिनाई ने शंकेत किया है 'हमें यह स्वीकार करना पड़गा कि कभी-कभी ऐसे अवसर आते हैं जब कि विचार सामुदायिक की वस्तु बन जाते हैं जब कि वे जनसाधारण की सम्पत्ति समझे जाते हैं और जब वह बहुत समयमय असम्भव हो जाता है कि समूह विचार समूह व्यक्ति के मौलिक चिन्तन की अपेक्षा है। अठारहवीं शती का समय निस्सन्देह रूप से ऐसा ही था।'

यदि हम वेन की समस्त कृतियों पर विचार करें तो यह जानकर हमें आश्चर्य होगा कि उनमें सचमुचे और अठारहवीं शताब्दियों के महान विचारकों का उल्लेख कदाचित् ही हुआ है। अधिभूतवादी (Physiocrat) कोस्ले और दुर्योध तथा दार्शनिक मीन्टेस्का के नाम वेन की कृतियों में बत-बत मिलते हैं। परन्तु ऐसा प्रतीत होगा कि उनके विचारों का प्रभाव वेन पर अल्पतम पड़ा है। इसी और एबरेनस की रचनाओं के विषय में वेन का मत था कि 'उनमें स्वतंत्रता के पक्ष में व्यक्त किया गया मान-नीतिर्वै है जो सम्मान को उत्तेजित करता है तथा मानव-शक्तियों को उत्प्रेरित करता है। वे पाठक का उत्साहवर्धन तो करती हैं; किन्तु वे उस उन्माद की क्रिया का निर्दोष नहीं करती। वे व्यक्ति में एक वस्तु के प्रति प्रेम भाव का उद्रेक कर देती हैं, किन्तु वे यह नहीं बताती कि उसकी प्राप्ति के साधन क्या हैं।' वास्तव में वेन की विचारधारा में ऐसा कोई तत्व नहीं है, जो वस्तु के भाव प्रणय आदर्शवाद की ओर संकेत करे, उसमें ऐसा कुछ नहीं है जिसे उसी के अनुसार 'प्रकृति के पास सीटम' कहा जा सके। तद्वतः वेन का

सम्बन्ध बनायी जाती के दो बहुत विचारकों, उनके बीच मूल्य के साथ स्थापित करना अधिक जटिल होता है। उनके विद्वानों का मतलब है कि वे बहुत प्रभाव रहा था। अपने कहीं-कहीं मूल्य की जो विशेषता की है बनाया सबसे राजनीति के विद्वानों से सर्वाधिक सम्बन्ध है। मनुष्य के अधिकार, ज्ञान दो में से निश्चय है—“उत्तम की भूमिका को न देखना बिना ही उत्तम करना बहुत दुष्ट को प्रतिष्ठित करना है। प्रकृति का हर काम बुद्धिमत्ता होता है। किन्तु वह एक ऐसी साधन-प्रणालि है, जो प्रकृति के विपरीत कार्य करती है।

प्रकृति अपने सभी कार्यों में व्यवस्था रखती है, इसे इष्टतम रूप में करके वास्तव में वेन में मूल्य की सुविधा-सम्बन्धी व्यवस्था की ओर संकेत किया है। किन्तु यह स्पष्ट नहीं होता कि उत्तम मूल्य की सुविधा-विषयक व्यवस्था का विशेष किस प्रकार का होता है। वेन का यह कथन भी अधिक कार्यात्मक प्रतीत होता है कि विपरीत का सम्पूर्ण भार उन्हीं स्थिति में दूर किया जा सकता है जब कि केवल इन विद्वानों के आधार पर व्यवस्था की ऐसी व्यवस्था की जाए कि वह 'पारसी की प्रणालि' (System of Pulleys) के अनुसार कार्य कर सके। अतः हम बुद्धि-विषयक मूल्य के विद्वानों के प्रति वेन की इच्छा को स्वीकार कर सकते हैं, क्योंकि राजनीति और सरकार के विषय में उनके द्वारा प्रस्तुत कार्य की इस प्रणालि से इन पूर्णतया सहमत नहीं हो पाते।

वेन अपनी रचनाओं में जिन जगह का अधिक जल्लोष नहीं करता है। जीवन के अन्तिम दिनों में अपने इस अन्तिम विचारक की जो वास्तविकता बताई की है वे वेन जीवन के इस कथन का विशेष करती है कि 'आवागम्य बुद्धि तथा 'मनुष्य के अधिकार' निश्चय तब तक वेन तक से बहुत अधिक प्रभावित था।

उनका कथन है—“वेने जहाँ जहाँ गया जहाँ स्थिति से विचार बहुत नहीं किया। मनु १८३० ई. के लगभग इंग्लैंड में जिन युग के पूर्णतः पूर्ण कथन में, सर्वप्रथम वेने अल्पक की सरकारी प्रणालियों की ओर ध्यान दिया। प्रणालि के उत्तमोत्तम उदाहरण कठोर के विषय में जिन युग में निजा कि 'अज्ञात के घर के लिए वे उदात्त स्थिति है क्योंकि उनमें

आमुरी प्रवृत्ति की पर्याप्त माना है। इस कथन में मुझे इस बात पर सोचने के लिए विवश कर दिया कि क्या ऐसी कोई वास्तव-व्यवस्था नहीं हो सकती जिसके लिए आमुरी प्रवृत्ति की आवश्यकता न पड़े? किसी व्यक्ति की सहायता प्राप्त किए बिना ही मुझे इस विद्या में सफलता मिली।”

पेन के राजनैतिक विचारों में जो पड़े देनेवाले तत्त्व के रूप में एक और सिद्धान्त हमारा ध्यान आकर्षित करता है। पेन का विचार उन दिनों 'धार्मिक-प्रचारक-दल' का सदस्य था। पेन भी उस संस्था के सिद्धान्तों का समय-समय पर समर्पण करता रहा। इसलिए मानसपूर्व कानवे में दंग बात पर धार्मिक दल दिया है कि पेन के प्रजातन्त्रीय विचारों पर निम्न-मंड (धार्मिक प्रचारक-दल) के सिद्धान्तों का प्रभाव पड़ा था। मुद्र के समय पैम्सिलेनेनिया के उपर्युक्त दल के सदस्यों के प्रति पेन को उनका भी भ्रम नहीं था। 'क्राइसिस' नामक अपने पत्रक के तीसरे अंक में तथा अन्य स्वप्ना पर भी पेन ने उन सदस्यों के धार्मिक-स्थापना प्रवृत्ति की निरसंबोध निंदा की। तथापि मुद्र के बाद बिप्लव वर्ष १८२६ में जब वह अमेरिका लौट आया तब उसने उपर्युक्त संस्था के सदस्यों के लिए लिखा कि ये सदस्य अन्य संस्थाओं के सदस्यों की अपेक्षा अधिक चरित्रवान और नियमनिष्ठ हैं।

वास्तव में यह स्मरण रखने के लिए यह विचार था कि वह उस संस्था के मत की माननेवाले एक कुस की सन्तान है। बिप्लव उस समय जब वह समाज के गरीबों की देखभाल और उनका संस्था की शिक्षा-व्यवस्था करने के लिए उन सदस्यों की प्रशंसा करता था। मृत्यु के पूर्व पेन ने अपनी प्रसिद्ध दृष्टि व्यक्त की कि 'मेरी बात उन सदस्यों के चरित्रानुसार में बनायी जाय यदि वे इसका लिए अनुमति प्रदान करें कि उनका चरित्रानुसार में एक ऐसा व्यक्ति का दृष्टाया जाय जो उनकी संस्था का सदस्य नहीं था। अतः हमें मानना पड़ेगा कि इस संस्था के मानवतावादी एवं समाजवादी गम्भीर महान सिद्धान्त प्रारम्भ में पेन के प्रजातन्त्रीय विचारों के अनुक्रम अन्तर्गत २, होंगे।

पेन के राजनैतिक सिद्धान्तों की पृष्ठभूमि की समीक्षा का उपसंहार करत हुए हमें उन तत्त्वों को भी नहीं भूलना चाहिए, जिनहन उनका प्रारम्भिक जीवन में उसे विद्युत की मौमिक नहीं उन्मत्त प्रणामी की ओर आकर्षित किया। पेन

का काम ऐसे मॉन्टान के घर में हुआ था, जो बड़ी कठिनाइयों के साथ लड़ रहा हो रहा था। तेरह वर्ष की अवस्था में उसने अपने पिता के साथ काम करना प्रारम्भ किया। कई वर्षों तक अपनी परिस्थिति को सुधारने के लिए उसे बनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। २२ वर्ष की अवस्था में वह बार वापि-विभाग का एक कर्मचारी नियुक्त हुआ। किन्तु तीन वर्षों बाद ही इस पर से हटा दिया जाने पर उसने कैमिनिपेटन के एक स्कूल में अध्यापन कार्य किया। वर्ष १७६८ ई. में कुछ वर्ष आबकारी-विभाग में पराधिकारी नियुक्त हुआ। वही उसने यह अनुभव किया कि कर्मचारियों को उचित वेतन नहीं दिया जाता। अतः वह आबकारी परामर्शियों द्वारा उल्लेखित किए जाने पर उसने तत्कालीन मंत्र के नाम आबकारी-विभाग के अधिकारियों की दया का मत पत्रक प्रकाशित किया जिसमें उसने उस समय के आबकारी विभाग में काम करने वाले व्यक्तियों की हीन दशा का वर्णन किया है। इस पत्रक में व्यक्त विचारों से वेन के मानवतावादी दृष्टिकोण का पूर्वबोध होता है।

वेन ने लंडन के सदस्यों को व्यक्तिगत रूप से इस विषय में प्रभावित करना चाहा। परिणाम यह हुआ कि सरकार ने उस पर अग्रिम ध्यान करने का आदेश नवांबर सन् १७७४ ई. में उसे नौकरी से अलग कर दिया। तत्पश्चात् वेन बार और भी कई कठिनाइयों कायी और वह अंततः विवर्ण बन गया। अंततः उस रिश्वत संग्रह में से। उस उन्ने वेन की दशा का ज्ञान हुआ तो उन्होंने उनकी बड़ी सहायता की। उन्नी वर्ष के आय में लैडीज वर्गीक वेन अमेरिका पहुँचा। वहाँ उसके जीवन का नया अध्याय प्रारम्भ हुआ।

जैसा कि हमने देखा वेन मानवता को प्राप्त करने से वीरित करनेवाली कुराहियों को वर्गी-मॉर्ति धार कृपा था। अमेरिका में प्राप्त अनुभवों द्वारा अपने जीवन-विषयक मानवतावादी तथा प्रगतिशील विचारों को लौट बनाने का कार्य वेन के लिए ईश्वर का। यदि हम अमेरिका में निजी तथा वेन की प्राथमिक श्रम को बड़े और तत्पश्चात् उनकी अनुयायी दृष्टियों का अनिवार्य अध्ययन कर तो हम अपने विचार को इन प्रदान करनेवाली प्रमुख प्रेरणा का परिचय प्राप्त कर सकते हैं।

पराविन्द पूर्वजन्म विमल के विचारों ने वेन के अमेरिका पहुँचने के पीछे ही बार दृष्टियों की शक्ति सम्बन्धी कुराहियों की ओर उनके ध्यान की

आइट किया। जो कुछ हो अमेरिका में प्रकाशित प्रारम्भिक निबंधों में से एक का सीपेंड था— अमेरिका में अफ्रीकियों की दासता। इस संक्षिप्त रचना में ऐसा कुछ नहीं है, जो यह व्यक्त कर सके कि वेन की व्यक्तिगत रूप से दलित के हर्षाश्रितों के दुःखों का अनुभव था। किन्तु यह निबन्ध अमेरिकियों के नाम पर लिखा गया था और स्पष्ट वेन के अधिकृत लेखों के रूप में लिखे संदेश से अपरि मनुष्य जाति को प्राकृतिक अधिकारों के सिद्धांत से अवगत करने के लिए लिखा गया था।

वास्तव में उरनिबेगों के लिए अत्यंत राजनैतिक संघटन में वेन अमेरिका पहुँचा। नाटकीय परिस्थितियों के प्रति वेन की जाँच सदैव खुली रहती थी। सन् १७६२ ई० के 'स्टैन एक्ट' के समय से ही अमेरिका की दासता में उकड़ने के लिए की गयीं कानूनी टोरियों के अभाव सब सोच अच्छी तरह जानते थे। वेन जिस वर्ष अमेरिका पहुँचा उसके आरम्भ के दिनों में ही कई अभिनय करने लगे। वास्तव, वातावरण कुछ विविध तथा अलग बन चुका था। हर ओर उत्तम और अति की भाव सुनने लगी थी। सन् १७७३ ई० में राज-घोषणा हुई कि 'राज-विद्रोह को दबाने के लिए हमारे सैनिक और अर्धसैनिक पदाधिकारी तथा सशस्त्र प्रयत्न करने पर विवश हैं। इस घोषणा से केवल उरनिबेगों में राज नतिक तनाव और भी बढ़ गया। विद्रोह की इस बढ़ती हुई भाव से प्रेरित हो कर वेन ने 'सामान्य-बुद्धि' (Common sense) की रचना की। यह सन् १७७६ ई० में प्रकाशित हुआ।

'सामान्य-बुद्धि' की सफलता ने कहावत वेन को भी आश्चर्यचकित कर दिया था। वास्तव में वेन ने उस समय देखभाली व्यक्ति भावना का दर्शन किया और उस भावना को उसने स्पष्ट एवं सतत जन-जागृति में साकार कर दिया। यद्यपि वेन किसी राजनैतिक दल से नियंत्रित सम्बद्ध नहीं था फिर भी सन् १७८० ई० में उसने राज्यों के अधिकार के विरुद्ध संघीय इन्डिपेंडेंस का समर्थन किया। वेन हज़रद संघीय सरकार की आवश्यकता पर निरन्तर जोर देता रहा।

'अद्विष्ट' के एक विशेषांक में उसने अमेरिका के निवासियों के नाम सन् १७८३ ई० में लिखा कि, केवल संघगत होकर काम करने के द्वारा ही विदेशी राज्यों द्वारा किये गये व्यापार-स्वार्थपर के अवहरण को निष्पन्न बनाया जा

बना है, और अमेरिका के राष्ट्रिय को सुरक्षा प्रदान की जा सकती है।
 सन् १७८२-८३ ई. में अपने रोड द्वीप (Rhode Island) के नाम का
 पत्र लिखे को 'प्रॉविदेन्स बस्ट' में प्रकाशित किये गये थे। उन पत्रों में पहले
 एक बात यह बतलाना कि हवाई शक्ति 'संघ' में ही अवस्थित है। इस प्रबल
 में वेन नागरिकों का सम्मान सर्वप्रथम उनके राज्यों से और तत्पश्चात् संयुक्त
 राज्य से प्राप्त करने का प्रयत्न करता है।

अमेरिका के प्रत्येक निवासी की नागरिकता को प्रकार की है। वह जिस
 राज्य में रहता है उसका नागरिक है, और संयुक्त राज्य का भी। यदि वह
 जोशिय और सारा के साथ इस द्वितीय नागरिकता का निर्वाह नहीं करता तो
 अनिवार्यतः वह अपनी प्रथम नागरिकता को बरत कर देता। प्रथम प्रकार की
 नागरिकता के द्वारा वह अपने नक्षेत्रियों के बीच सुरक्षित रहता है और दूसरी
 के द्वारा संसार के बीच।

सन् १७७५ ई. और १७८७ ई. के बीच जबकि पहले स्वतंत्र के लिए
 प्रयत्न किया, वेन ने अमेरिकी राजनीति में जो योग दिया उसकी उचित वहाँ
 भी इस स्थान पर बोझनीय है। 'प्रतिरसात्मक बुद्धि-विषयक विचार' और 'मिन्-
 शैप' के लेखकों के नाम लिखे गये पत्र (जो 'सावाम्य-बुद्धि' के नवीन संस्करण
 में जोड़ दिये गये हैं) में वेन ने इन लेखकों की व्यक्ति-स्वायत्ता सम्बन्धी प्रवृत्ति
 की दिष्ट की। यह प्रवृत्ति को बुद्धि निर्वाह के लिए बाधा समझता
 था। सन् १७७६ ई. में 'पेंसिल्वेनिया' के संविधान के समर्थन में लिखे गये वेन
 के कई विभिन्न आर्थिक ऐतिहासिक महत्त्व के हैं। औद्योगिक राजनीति में
 सक्रिय नाम लेने के बाद सन् १७७३ ई. में कांग्रेस के द्वारा वह वैदेशिक कार्यों
 के लिए नियुक्त समिति का अध्यक्ष चुना गया। वेन व्यवहार-कुशल नहीं था।
 वह मूलतः अन्त-स्वयं अमेरिकी अधिवक्ता 'सिलसडीने' (Silas Deane) के
 साथ कार्यरत बाद विचार में उलट गया। वेन का कहना था कि सिलसडीने ने
 फ्रांस की सरकार के साथ व्यवहार करने में आर्थिक लाभ किया है। विस्मय
 वेन ने निरन्तर कहा है समिति को वह आर्थिक सति है बताया जा रहा को
 इसके बाद में सिलसडीने के कारण हुई थी। सिलसडीने-समिति के सचिव
 के रूप में उसे जिस लोगों को इस रखना चाहिए था उनमें से भी पहले
 अन्तर्विदेश के कारण मुख्यतः प्रकाशित कर दी। सन् १७७८-७९ ई. के

‘पेन्सिल्वेनिया पैक्ट’ में प्रस्तावित पक्षों के साथ उसने जीने की कुछ इसी प्रकृति की। इस पक्ष से हटाये जाने की वेदना मूल्य के कुछ साण पूर्व तक उसके हृदय में पसकती रही। सन् १८०८ ई० में जीने के साथ हुए भगड़े में अपना बंधन प्रस्तुत करते हुए उसने अपने वेतन की मांग की, जो उसे उस समय उचित रूप से मिलना चाहिए था।

क्रान्ति के समय देश की आर्थिक समस्याओं के साथ पन के राजनीतिक कार्यों की इसनी अनिष्टता रही है कि हम राष्ट्र के आर्थिक कार्यों की पुनर्ध्वन्यता करने में पन के महत्त्व की उल्टा पूछता नहीं कर सकते। सन् १७७६ ई के अन्त में पन ‘पेन्सिल्वेनिया’ की समा का हार्क नियुक्त हुआ और सन् १७८० ई में उसने समा में वाणिज्यन का पक्ष पड़ा जिसमें वाणिज्यन न बड़े प्रयत्न के साथ उन परिस्थितियों के बुढ़ा के विषय में अपना मत व्यक्त किया या या सेना के धर्म को समाप्त कर रही थी। वाणिज्यन ने यह भी लिखा कि हम सेना में सर्वत्र विद्रोह तथा उत्तमना के अत्यधिक भयानक लक्षण देखा रहे हैं। ‘फाइसिए’ के सर्व संस्करण में वाणिज्यन द्वारा बलिष्ठ परिस्थितियों से अपने दलवासियों को परिचित बनाने के अभिप्राय से पन ने लिखा कि ‘फिनादेशिष्म’ के प्रमुख निवासियों और व्यापारियों की एक संस्था राज्य के नये भाग का सार जोर बाँधी के मुख्य घर स्वीकार और मुगलान करने के लिए तैयार हुई है। पन ने स्वयं पाँच सौ डालर दण काय हेतु दिये और इस प्रकार वह अपने राज नैतिक प्रतिद्वन्द्वी ‘राबर्ट मोरिस’ के साथ क्रान्ति की आर्थिक सहायता के राष्ट्र उद्देश्य से ‘बैंक ऑफ मार्श अमेरिका’ की स्थापना में निमित्त बना। युद्ध के मां सन् १७८६ ई में जो लोग विद्रोह ने स्थान पर कागज के पाट या गमपन करते थे, उन्होंने ‘बैंक-नियम’ (Bank-Charter) को रंग करना चाहा। उसी वर्ष ‘सरकारी चर्चा बैंक के काम और काय के मोट’ नामक पत्रक में जो कि अमेरिका छोड़ने के पूर्व पैसा का अन्तिम पक्ष था पन ने यह का बंधन पक्ष प्रस्तुत किया। कागज के मोर्गे के विरुद्ध पैस की पारणा में उद्युक्त बंध की स्थापना-नाम से मोर्गे परिवर्तन नहीं हुआ। उसका कहना था कि कागज के मोट अपिन-से-अधिक पानी के बुलबुले हैं। जब उन्हें सम्पत्ति के रूप में मान लिया जाता है तो यह मानना बिना मसगज है कि विधान-मन्त्र जिसका अधिकार समय के साथ-साथ समाप्त हो जाता है उस मोर्गे का मुख्य और

विचारों का प्रकाश कर सकती है। स्पष्टतः येन चिन्तियों का साथ है रहा था। इसी इस आर्थिक नीति के विषय में सार्वजनिक बत बिपद गया। कुछ लोगों का कहना था कि येन सामान्य अनुप्य के दृष्टि को धुन गया। इसी कर्मयोग चर्चा के लिए यह बरन सम्पन्न बरित है। वस्तु, इसका कहना पर्याप्त है कि येन के इस विषय में सार्वजनिक आर्थिक आश्चर्यवादों की पुष्टि करनी बाही। उनसे स्पष्ट बन मे यह सम्पन्न कि केवल सोने और चाँदी के सामाजिक मूल्य को बनाये रखना ही इसी के बन में महीन एक के उद्भव और विचार मकर है। यदि हमारी आश्चर्यवाद के दृष्टि का परिणाम कहा जा सके तो बात सुनरी है।

अन्ति की उच्छाति के साथ येन ने अमेरिका में अपना काम समाप्त सम्पन्न। अपने 'अच्छाति' बरक के उपसंहार में येन ने उक्ति किया था कि 'इसके बाद कोई मे किसी की देख में नहीं। हेनरी डी. थोरो (Henry D Thoro) ने वास्वन (welden) में श्रम करने अनुभव को जीवन का केवल एक सम्मान माना जिसने उसे कई अन्य जीवन जीने के लिए छोड़ दिया। उसी प्रकार येन ने इन समय स्वयंसेवा के समर्थन सम्पन्न देखों में जाना बाहा। अमेरिका में उसके प्रथम प्रकाश का परिणाम मानवता-विषयक समझी पूर्ण मान्यताओं की निम्नतर बाहरी हुई सीमाओं की श्रद्धा करता है। अन्ति की मर्माति के एक वर्ष पूर्व उसने एबे रेयनल (Abbe Raynal) के नाम का प्रकाशित किया जो विचारधारा तथा चरित्र—विषय पर येन ने विचार करना आरम्भ कर दिया था—की ओर कुछ संकेत प्रस्तुत करता है। एबे ने अमेरिका की अन्ति के विषय में जो कुछ लिखा था उसकी बुद्धियों की दूर करने का स्पष्ट प्रयत्न करते हुए येन ने विचार की वास्तव्य और विज्ञान का एक एका के रूप में पिरोने की ओर संकेत किया।

अन्ति के बाद करने अकस्मात्-भाग में येन अन्तिव्य आधिपत्याँ की ओर झुन हुआ जिसमें सर्वाधिक महत्त्व का था—अनुसंधान लीह पुन। उस पुन के एक वक्तु को करने लम्बुक में एकर येन सन् १७८७ ई के अन्तिव्य बन में बाप के लिए बन गया। यह वक्तु है कि विषय में उस पुन ने लीहो का सम्मान आर्वाता दिया जिन्हा हमारे अन्तिव्य के लिए यह सम्पन्न

अधिक महत्वपूर्ण है कि वेन गुरल फॉस और इम्मेन्ड की राजनीति में उत्तम मया। प्रश्न की क्रांति के आरम्भ होने पर एडमण्डबर्क ने सन् १७९० ई० में 'फॉस के क्रांति विपक्षक विचार' प्रकाशित किया। इसके पूर्व वेन बर्क का मित्र था; परन्तु ब्रिटिश राजतंत्र के बचाव के साथ बर्क ने फॉस की क्रांति के ऊपर जो प्रहार किया, उसने वेन को दुःख कर दिया और सन् १७९१-९२ ई० में वेन ने 'मनुष्य के अधिकार' की दो भागों में प्रकाशित किया। बर्क के प्रति इस वैदित्यपूर्ण विरोध ने वेन के सभी राजनीतिक और सामाजिक चिन्तनों को एक घंघ में जड़की किसी अन्य दृष्टि की अपेक्षा कदाचित् अधिक परिमाण में व्यक्त किया। 'मनुष्य के अधिकार' मुख्यतः फॉस और इम्मेन्ड की राजनीति से सम्बन्धित है। तो भी आज का पाठक उसे पढ़ते समय यह अनुभव करता है कि यदि वेन को अमेरिका में राजनीतिक अनुभव के बावजूद क्यों—जब कि उसने क्रांति के समय और उसके उपरान्त प्रस्तुत होनेवाले कतिपय आर्थिक एवं राजनीतिक संघटनों में बड़ी समय के साथ काम किया था—का बस न प्राप्त होता तो कदाचित् वह विषय को ऐसी दृष्टि न दे पाता। वास्तव में वह निर्मास्य-गत प्रजातंत्र के अन्तर्गत रह चुका था। अमेरिका-निवासी के रूप में राजतंत्र के बचन में बड़े इम्मेन्ड के प्रति अपने विचारों को सापेक्ष व्यक्त करना वह अपना विरोधाभास समझता था। वेन के मतानुसार राजनीतिक विषय में अमेरिका ही एक ऐसा देश था जहाँ सार्वजनिक गुणों के सिद्धान्त उत्पन्न हो सकते थे। अमेरिका प्रजातंत्र का गौरवपूर्ण अन्वेषण है। उसने ब्राउचरन जैसे महान व्यक्ति को उत्पन्न किया। वास्तव में 'मनुष्य के अधिकार' का प्रथम भाग मनुष्य राज्य अमेरिका के अन्वेषण को समर्पित किया गया। उस गणराज्य में वेन ने लिखा था—आपके अनुकरणीय उदात्त गुणों ने स्वतंत्रता के जिन सिद्धान्तों की स्थापना में अत्यधिक योग्यपूर्ण सहयोग प्रदान किया उनके समर्थन में मैं आपको यह सपु दृष्टि समर्पित करता हूँ।

कम-से-कम वेन के लिए अमेरिकी-क्रांति ने कर्पूर के वातावरण को साठ करके विश्व में राजनीतिक गुणों के लिए मूल आधार की स्थापना की। वेन का विश्वास था कि राजतंत्र और कुलीनतंत्र की सभी पद्धतियाँ निर्बल और दूषित आधार पर स्थित हैं। संतप्त में वे प्रकृति के सिद्धान्त का विरोध

करती है। मनुष्य के अधिकार प्राकृतिक अधिकार है। इसे तब तकने के लिए
 ही वेन द्वारा स्थापित 'प्राकृतिक-अधिकार' और 'नान्वरिक्त-अधिकार' के अन्तर
 की परीक्षा करनी चाहिए। इसका मतलब है कि प्राकृतिक अधिकार वे अधिकार
 हैं जिसका सम्बन्ध मनुष्य के अस्तित्व से है। सभी शैक्षिक अधिकार, मौलिक
 के अधिकार तथा व्यक्तिगत रूप से अपने मानव एवं सुविधा के लिए कार्य
 करने के वे सभी अधिकार, जो दूसरों के प्राकृतिक अधिकार के लिए बाधक
 नहीं हैं—इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं। दूसरी ओर नान्वरिक्त अधिकार
 वे अधिकार हैं जो मनुष्य को समाज के सदस्य होने के लिये प्राप्त होते हैं।
 निश्चय रूप से प्रत्येक व्यक्ति को कुछ प्राकृतिक अधिकार प्राप्त हैं उन्हें
 क्रियान्वित करने में जबकि उन्हें सफल बनाने में बाधा यह व्यक्ति के रूप में
 उत्पन्न होता है। इसलिए वैयक्तिक जीवन को संभव बनाने के लिए यह
 अन्य व्यक्तियों का साथ करता है। वेन के अनुसार प्रत्येक नान्वरिक्त अधिकार
 किसी प्राकृतिक अधिकार के उत्पन्न होता है। प्राकृतिक रूप से प्रत्येक व्यक्ति को
 अपने स्वतंत्र और अपनी सुरक्षा को संभव बनाने का पूर्ण अधिकार है। वास्तु
 यदि यह अकेला है तो उसे इस बात का बोध हो सकता है कि व्यक्ति और
 अधिकार के अनुसार जो कुछ करता है उसे यह प्राप्त नहीं कर सकता।
 इसलिए सामाजिक समझौते की जो कानूनी व्यवस्था द्वारा जीवन-निर्वाह को
 सम्भव बना लें, आवश्यकता सामग्री होती है। फिर भी वेन की मान्यता
 की कि इन सामाजिक समझौते को मनुष्य के वैयक्तिक अधिकारों पर आक्रमण
 नहीं करना चाहिए क्योंकि 'समाज के सभी महान नियम व्यक्ति के नियम हैं।'
 वेन की मान्यता है कि किसी भी राष्ट्र को एक मूल से अधिक नहीं रखना
 चाहिए, जो एक 'राष्ट्रिय धर्म' से प्राप्त होता है। 'नियम व्यवस्थाओं के अन्तर्गत
 को बनाए रख दिया जाता है, सभी राष्ट्र समाज कार्य करना आवश्यक कर देता
 है। एक सामान्य संरक्षण उत्पन्न होता है और सामान्य हितों के कारण सभी
 व्यक्ति सुरक्षा सभी रहती है।'

वेन आनुवंशिक राजतन्त्र (Hereditary Monarchy) को आदर्श
 पुराण इसलिए मानता था कि इस व्यवस्था के अनुसार पारंपरिक और नान्वरिक्त
 रूप से निर्देश एक व्यवस्था या एक व्यवस्था नहीं है। अधिकारी होता है। वेन ने लिखा
 है कि 'हीरेन्ट राजतन्त्र तब सभी व्यक्तियों को सम्मिलित करने में सफल है, जिन्हें

अधिक महत्वपूर्ण है कि वेन तुल्य फोस और इम्मेन्ड की राजनीति में उसका समा। फ्रांस की क्रांति के आरम्भ होने पर एडमण्डबर्क ने सन् १७९० ई० में 'फ्रांस के क्रांति विषयक विचार' प्रकाशित किया। इसके पूर्व वेन बर्क का मित्र था। परन्तु ब्रिटिश राजतंत्र के बचाव के साथ बर्क ने फ्रांस की क्रांति के ऊपर जो प्रहार किया, उसने वेन को दुःख कर दिया और सन् १७९१-९२ ई० में वेन ने 'मनुष्य के अधिकार' को दो भागों में प्रकाशित किया। बर्क के प्रति इस पक्षिणपूर्ण विरोध ने वेन के सभी राजनैतिक और सामाजिक विश्वों को एक संघ में, उसकी किसी अन्य कृति की अपेक्षा क्याचित् अधिक परिमाण में व्यक्त किया। 'मनुष्य के अधिकार' मुख्यतः फ्रांस और इम्मेन्ड की राजनीति से सम्बन्धित है। वो भी आज का पाठक उसे पढ़ते समय यह अनुभव करता है कि यदि वेन को अमेरिका में राजनैतिक अनुभव के बाह्य बर्णों—जब कि उसने क्रांति के समय और उसके उपरान्त प्रस्तुत होनेवाले कतिपय आर्थिक एवं राजनैतिक संघटनों में बड़ी समय के साथ काम किया था—का बल न प्राप्त होता तो कदाचित् वह विश्व को ऐसी कृति न दे पाता। वास्तव में वह निर्माण-युक्त प्रजातंत्र के अन्तर्गत रह चुका था। अमेरिका-निवासी के रूप में राजतंत्र के बंधन में वह इम्मेन्ड के प्रति अपने विचारों को साधिकार व्यक्त करना वह अपना विधेयाधिकार समझता था। वेन के मतानुसार राजनैतिक विश्व में अमेरिका ही एक ऐसा देश था जहाँ सार्वजनिक सुधार के सिद्धान्त उत्पन्न हो सके थे। अमेरिका प्रजातंत्र का पौरवपूर्ण अन्तर्भाव है। उसने ब्राडिंगटन जैसे महान व्यक्ति को उत्पन्न किया। वास्तव में 'मनुष्य के अधिकार' का प्रथम भाग संयुक्त राज्य अमेरिका के अध्यापक को समर्पित किया गया। उस समर्पण में वेन ने लिखा था—आपके अनुकरणीय उदात्त गुणों में स्वतंत्रता के जिन सिद्धान्तों की स्थापना में अत्यधिक मोहपूर्ण सहयोग प्रदान किया उनके समर्पण में मैं आपको यह समु कृति समर्पित करता हूँ।

कम-से-कम वेन के लिए अमेरिकी-क्रान्ति ने परंपरा के बातावरण को साफ करके विश्व में राजनैतिक सुधार के लिए मूल आधार की स्थापना की। वेन का विश्वास था कि राजतंत्र और कुलीनतंत्र की सभी पद्धतियाँ निर्दम और बर्हिस्त आधार पर स्थित हैं। संतोष में वे प्रकृति के सिद्धान्त का विरोध

करती है। मनुष्य के व्यवहार प्राकृतिक व्यवहार है। इसे हमारी के लिए हमें वेन द्वारा स्थापित 'प्राकृतिक-व्यवहार' और 'नागरिक-व्यवहार' के अन्तर की समझ करनी चाहिए। इसका मतलब है कि प्राकृतिक व्यवहार के व्यवहार है जिसका सम्बन्ध मनुष्य के अस्तित्व से है। सभी वैयक्तिक व्यवहार, पतिव्रत के व्यवहार का व्यापकतम रूप से अपने आपमें एवं परिवार के लिए कार्य करने के से सभी व्यवहार, जो दूसरों के प्राकृतिक व्यवहार के लिए बाधक नहीं है—इसी पैली के अन्तर्गत आते हैं। दूसरी ओर नागरिक व्यवहार के व्यवहार है जो मनुष्य को समाज के सदस्य होने के लिये प्राप्त होते हैं। विचार करने से प्रत्येक व्यक्ति को कुछ प्राकृतिक व्यवहार प्राप्त हैं, उन्हें नियमित करने में अपना उन्हें सकल बनने में प्रायः वह व्यक्ति के रूप में अतिरिक्त रहता है। इसलिए वैयक्तिक जीवन को संभव बनाने के लिए वह अन्य व्यक्तियों का साथ करता है। वेन के अनुसार प्रत्येक नागरिक व्यवहार में प्राकृतिक व्यवहारों के उत्पन्न होता है। प्राकृतिक रूप से प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यवहार और अपनी सुरक्षा को संभव बनाने का पूर्णव्यवहार है। परन्तु यदि वह अपना है तो उसे इन बात का बोध ही लगता है कि प्रकृति और व्यवहार के अनुसार जो कुछ उत्पन्न है उसे वह प्राप्त नहीं कर सकता। इसलिए सामाजिक समझौते की ओर सामूहिक प्रयत्न द्वारा जीवन-निर्वाह को संभव बना उसे आवश्यकता प्राप्त होती है। फिर भी वेन की मान्यता थी कि इन सामाजिक समझौते को मनुष्य के वैयक्तिक व्यवहारों पर बाध्यता नहीं करनी चाहिए क्योंकि 'समाज के सभी महान विषय प्रकृति के नियम हैं।'

वेन की मान्यता है कि किसी भी राष्ट्र को वह कुछ से संबंध नहीं रखना चाहिए, जो एक 'राष्ट्रीय धर्म' के प्राप्त होता है। 'विश्व धर्म औपचारिक कारणों की घोषणा कर दिया जाता है, उन्हीं द्वारा समाज कार्य करना आवश्यक कर होता है। एक सामान्य समझ उत्पन्न होता है, और सामान्य हितों के कारण सामं-वर्तिक सुरक्षा बनी रहती है।'

वेन सामूहिक राजतन्त्र (Hereditary Monarchy) की अवस्था प्रतिष्ठित इसलिए मानता था कि इस व्यवस्था के अनुसार प्राकृतिक और नागरिक कार्य के निर्देश एक वक्ता या एक वक्ता नहीं का अधिकारी होता है। वेन के विचार हैं कि प्रेसीडेंट या सिविल सर्वेंट सभी व्यक्तियों की समझ करके से कार्य है, जिन्हें

राजा कहा जाता है। अमेरिका ने बार्थिंगटन को सर्व-सम्मति से अपना प्रतीक चूना। अमेरिका का यह कार्य हासबुद्ध अथवा जर्मनी से किसी व्यक्ति को बुसा कर उसे राजा बनाने के कार्य से कितना भिन्न है। इस प्रकार प्रतिनिधि प्रजातन्त्र (Representative Democracy) की स्थापना पर विचार करते समय पेन ने अपने निजी निरीक्षणों और अनुभवों का अत्यधिक सहारा लिया है। पेन की मान्यता है कि राजतन्त्र के निर्वाह में जो धन व्यय होता रहा है उसका उपयोग निर्धनों को आर्थिक सहायता प्रदान करने में हो सकता है। उसने एक स्थल पर अपने मानवतावादी दृष्टिकोण ठे सिरा है कि 'प्रतिष्ठा की सर्वाधिक सजग चेतना के साथ सामाजिक धन को घूना चाहिए। न केवल धनियों ने अपितु निर्धनों ने अपने कठोर परिश्रम के बल पर इसका उत्पादन किया है। अभाव और दुःख की कटुता का भी इस सामाजिक धन के उत्पादन में योग होता है। गमियों में या गड़कों पर घूमने वाला अथवा मिटनेवाला ऐसा एक भी मिश्रक नहीं है जिसका अंत उस राशि में नहीं है। निर्धनों को आर्थिक सहायता देने और उनकी अपेक्षाकृत अधिक सुखी बनाने के उद्देश्य से पेन ने कई विविध प्रस्ताव भी प्रस्तुत किये हैं।

'मनुष्य के अधिकार' के दोनों भागों का अधिक प्रचार हुआ। उन्हें ईस्टर की स्वतन्त्रता को बढ़ाने के उद्देश्य से स्थापित संस्थाओं में विशेष प्रतिष्ठा मिली। किन्तु कुछ अभ्यवस्थित लोगों अनुमागत सरकार द्वारा उत्तेजित व्यक्तियों ने 'टॉम पेन' की प्रतिमा जलायी और उसके विरुद्ध अन्य प्रदर्शन किये। जून सन् १७९२ ई० में पेन पर सरकार द्वारा राजबिद्रोह का प्राथमिक अभियोग लगाया गया और मुकदमे की सुनवाई के लिए एक विधि निर्दिष्ट की गयी। कहा जाता है कि अंग्रेज कवि विलियम ब्लेक (William Blake) ने उसे बठा दिया था कि योद्धा ही उसे गिरफ्तार किया जायगा। पेन गुरत पाँच भाग गया और वहाँ से अपने अभियोग के विरुद्ध तीव्र मत्सनापूर्ण सेवा सिराने लगा। यदि 'मनुष्य के अधिकार' में राजबिद्रोह के बीज थे तो इस सेग में प्रत्यक्ष राजबिद्रोह था।

इसी सेग में पेन ने इस आशय का भी एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रस्ताव किया है कि एक राष्ट्रीय परिषद (National Convention) बनायी जाय जो उचित रूप से राष्ट्र के प्रत्येक भाग के मत और बुद्धि को एकत्र कर सकेगी।

ब्रिटिश राजतन्त्र पर बिने मने पैम के प्रहारों की वर्षा की समाप्त करते समय हुआ समझौता आवश्यक है कि जन-मानस पर परंपरा का जो प्रभाव पड़ता है, उसे समझने में 'पैम' असफल रहा। वहीं वहीं नरत्न सामान्यतः प्राकृतिक व्यवस्थाओं में विश्वास रखनेवाले सभी वैज्ञानिक इस बात की समझने में सक्षम बन रहे हैं। पैम प्रायः ऐसा महसूस करता था कि यदि मनुष्यों को राजनैतिक विद्वानों से पूर्ण अवगत करा दिया जाय तो वे उत्तम सरकार के व्यापार-मार्ग स्वरूपों को अस्वीकार कर देंगे। मछाछूरी घाटी के कतिपय बुद्धिवादी (Perfectionist) व्यक्तिओं के विश्वास—जो वर्षपूर्वक एक सहस्र वर्षों के समय की प्रतीक्षा कर रहे थे—'पैम' थीम ही कम-गति का इच्छुक वा और पूर्ण आशान्वित था।

पैम ने जिनके राजनैतिक विद्वानों ने अपने व्यवहारिक सार्वजनिक धर्मों का प्रमाण दिया था अपने युग की विम्वरकत संसदीय के साथ हड़तालपूर्वक कहा कि 'मैं इस बात में विश्वास नहीं करता हूँ कि यूरोप के किसी भी जाति देश में राजनैतिक तथा भूमीनतन्त्रीय सरकार आज से सात वर्षों तक अस्तित्व में रह सकती है।

सन् १७७७ ई. में पैम के फ्रांस जाने के समय से लेकर सन् १७९१ ई. में लक्ष्मण के वापस आने तक का समय अत्यंत और आनन्द के क्षणों में बीता। इस अवधि में उन्होंने फ्रांस और ईंग्लैंड के बीच कई यात्राएँ कीं। फ्रांस में पैम को जेफ़रसन (Jefferson) के जो कि सन् १७७६ ई. तक प्रधान मंत्री रहे मिलने का पर्याप्त अवसर मिला। इसके बीस ही बाद, 'पैम' ने फ्रांस की राजनैतिक के 'नव्य वर्ग' में बिने। लेफ़ायेट (Lafayette) के साथ उनकी मित्रता भी लेफ़ायेट ने वापस आने की पारी वापस आने को मँजूर करने के लिए पैम की दी। कहा जाता है कि 'अभिजातों की शोषण' की कम-ऐसा नकार करने में उन्होंने पर्याप्त सहयोग प्रदान दिया था। पैम ने 'जो कि' वाली इतिहास के माध्य में करने की रचना करके पत्र लिखा कि फ्रांस की कति से 'नव्य वर्ग' था। सन् १७९१ ई. की जुन में शुरू के मास्के के प्रवास के फ्रांस 'पैम' ने 'फ्रांस के 'अभिलाष' को निम्न करते हुए जनता को निम्नर विरोध की प्रेरणा देने के निमित्त एक जनतन्त्रीय घोषणा-पत्र जो फ्रांस के पत्रों के एक और ही लिखा गया था—प्रकाशित किया जिसमें उन्होंने

राजतन्त्र की समाप्ति के लिए अपना परिचित तर्क प्रस्तुत किया। कहा जाता है कि 'वेन' डूचेतेलेट (Duchatelet) ने पेरिस के मकानों की दीवारों पर इस 'घोषणा-पत्र' को बिपकाया और समा मयन के द्वार पर भी उसकी एक प्रति सटका दी।

ईसाई से बच निकलने के बाद वेन के फ्रांस की क्रांति में भाग लेने का दूसरा अध्याय सन् १७९२ ई. में आरम्भ होता है। उपर्युक्त वर्ष के आरम्भ में सभा ने 'वेन' को नागरिक की पक्षी प्रशम की और बाद में यह राष्ट्रीय परिषद् के लिए प्रतिनिधि निर्वाचित हुआ। अपने भाषण में वेन ने अपने प्रति प्रदर्शित किये गये इस सम्मान को कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार किया और अपने सह-नागरिकों को बताया कि एक क्रांति (अमेरिका की क्रांति) के आरम्भ और पूर्ण स्थापना में अपने कर्तव्य को पूरा करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। किन्तु वेन की फ्रांस की भाषा और इससे भी बढ़कर फ्रांस के दस्तिक का अस्य ज्ञान था और वहाँ की राजनीति को समझने में वह अवलत रहा और परिणाम-स्वरूप सकट में पड़ गया। वेन का जीवन-परिच सिजनवासियों में से कुछ का विश्वास है कि वेन का सम्बन्ध मुख्यतः बिराष्ट्रियों (फ्रांस की क्रांति के समय मन्त्र जनतंत्रीय दल के सदस्यों) से था और वे 'बिराष्ट्रिस्ट' वेन का उपयोग अपने राजनैतिक उद्देश्य की सिद्धि के साधन स्वरूप करते थे। वेन ने जिन परिवर्तन विरोधी कार्यों का समर्थन किया उनमें से राजा की प्राणदान देने का सम्बन्ध एक था। रॉबेस्पियर (Robespierre) और जैकोबिन्स (Jacobins) के अधिकार प्राप्त करने पर वेन का प्रभाव कम हो गया। जब यह राष्ट्रीय-परिषद् की बैठकों में प्रायः कम जाता था। सन् १७९ ई. के अन्त में यह गिरफ्तार कर लिया गया। अमेरिका के मंत्री गवर्नर मोरिस (Governor Morris) ने जो कि वेन के कट्टर शत्रुओं में से थे वेन की कारागार से छुड़ाने का कदाचित् कोई प्रयत्न नहीं किया। यद्यपि उन्होंने अमेरिकी सरकार को यह विश्वास दिलाया कि उन्होंने इस दिशा में कुछ उठान नहीं रखा। इस महीनों तक वेन का कारागार में बन्द रहा और इस बीच में वह मयानक रोय से पीड़ित भी था। अन्त में गये राजदूत जेम्स मनरो (James Manroe) ने, अत्यधिक राजनैतिक प्रयत्नों के बाद उसे कारागार से छुड़ाया।

बखारह महीनों तक मनरो के मकान में वेन स्वास्थ्य-लाभ करता रहा।

सन् १७९१ ई. में बनने काँग्रेस की राष्ट्रीय परिषद् में जो इस समय बंदिमान पर विचार कर रही थी अपना स्थान प्राप्त करने का बुद्धिमान प्रयास किया। इन विचारों के अनुसार परिषद् में उसके नाम पर उक्तका वापस बड़ा काम देने में सरकार के प्राथमिक विचारों की पूर्ति (Dissertation on first Principles of Government) नामक पुस्तिका सन् १७९१ ई. में प्रकाशित की और उसे बसमें में विरचित किया। इस दृष्टि में वेन के राजनैतिक विचारों का वास्तविक उत्पत्ति होता है। 'मनुष्य के अधिकार' नामक लेख में व्यक्त करने सरकार-विषयक कुछ प्रधान विचारों के उत्पत्ति इस दृष्टि में वेन ने अधिकार-नाम के विचारों पर जोर दिया है। उन्होंने लिखा कि 'अभिनिविष्ट के लिए वह है का अधिकार वह नीतिक अधिकार है, जिसके द्वारा अन्य अधिकारों की सुरक्षा होती है।' सन् १७९१ ई. में वेन परिषद् के सम्मुख बड़ा हुआ और एक सचिव (Secretary) ने उन्हें आपा में उक्तका वापस पढ़कर सुनाया। वेन ने अपने इस वापस द्वारा वह स्पष्ट कर दिया कि मतदान पर प्रस्तावित (सामयिक) बन्धन 'अधिकार-बोध' का उत्पत्ति करते हैं। किन्तु किसीने न तो वेन का समर्थन किया और न संविधान की अन्तिम स्वीकृति के समय उसके प्रस्ताव पर ध्यान ही दिया। उसके बाद वेन कभी भी परिषद् की बैठकों में सम्मिलित नहीं हुआ।

वेन जिसने किसी एक 'मनषी' के मकान में रहा अपने समय तक उक्तका जीवन दुःखी रहा होगा। एक छोटी बहुत धार्मिक रीति से प्रेरित वा दूधरी और वह बाद में मनोव्यवस्था की अवस्था डिजाइन के कारण स्पष्ट रूप के विचारों की वा। किन्तु वह वेन ने यह सोचा कि काँग्रेस के कुछ आदेशों के अन्तर्गत के कारण ही वह लक्ष्यमर्त्य के कारणों में बन्ध नहीं रहा। बाद में उक्त के समय उन्होंने जिसकी सहायता की थी और अपने प्रकाशित लेखों द्वारा जिसकी आर्थिक प्रणाली की थी अमेरिका के एक व्यक्ति—थॉमस पार्थियन—की सुरक्षा और वर्तमान-विप्लव के कारण यह अपने दिनों तक वेन में बन्ध रहा तो उसकी निष्ठा विफल और बहुतों में बन्ध नहीं। सन् १७९१ ई. में वेन ने थॉमस पार्थियन के नाम की एक लिखा उसे अमेरिका के निवासी प्रवासित हुए दिना प्रकाशित नहीं वह बन्धे। फिर भी, यदि हम सोचें एक विचार पर निष्ठा रूप से विचार करें, तो वह स्पष्ट ही आपा कि वेन के कारणों

राजतन्त्र की समाप्ति के लिए अपना परिचित तर्क प्रस्तुत किया। कहा जाता है कि 'वेन' और दुचेटेलेट (Duchatelet) ने वेरिग के मकानों की दीवारों पर इस 'पोपुला-नथ' को बिपकाया और समा-मनन के द्वार पर भी उसकी एक प्रति भटका दी।

ईर्म्सड से जब निकलने के बाद वेन के फ्रांस की क्रान्ति में भाग लेने का दूसरा अध्याय सन् १७९२ ई. में आरम्भ होता है। उपर्युक्त वर्ष के आरम्भ में समा ने 'वेन' को नागरिक की पदवी प्रदान की और बाद में वह राष्ट्रीय परिषद् के लिए प्रतिनिधि निर्वाचित हुआ। अपने माघरा में वेन ने अपने प्रति प्रसिद्ध किये गये इस सम्मान को कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार किया और अपने सह-माघरिकों को बताया कि एक क्रान्ति (अमेरिका की क्रान्ति) के आरम्भ और पूर्ण स्वागता में अपने कर्तव्य को पूरा करने का सीमाव्य मुझे प्राप्त हुआ है। किन्तु, वेन को फ्रांस की भाषा और इससे भी बढ़कर फ्रांस के मस्तिष्क का अत्यन्त ज्ञान था, जहाँ वहाँ की राजनीति को समझने में वह असफल रहा और परिणाम-स्वरूप संकट में पड़ गया। वेन का जीवन-चरित्र सिखनवालों में से कुछ का विश्वास है कि वेन का सम्बन्ध मुख्यतः गिराण्डिस्टों (फ्रांस की क्रान्ति के समय नम्र जनतंत्रीय दल के सदस्यों) से था और वे 'गिराण्डिस्ट' वेन का उपयोग अपने राजनैतिक उद्देश्य की सिद्धि के साधन स्वरूप करते थे। वेन ने जिन परिवर्तन विरोधी कार्यों का समर्थन किया उनमें से राजा को प्राणशान देने का समर्थन एक था। रॉबेस्पियर (Robespierre) और जेकबिन्स (Jacobins) के अधिकार प्राप्त करने पर वेन का प्रभाव कम हो गया। जब वह राष्ट्रीय-परिषद् की बैठकों में प्रायः कम जाता था। सन् १७९१ ई. के अन्त में वह विरक्तार कर लिया गया। अमेरिका के मंत्री गवर्नर मोरिस (Governor Morris) ने जो कि वेन के कट्टर राज्यों में से वे वेन को कारागार से छुड़ाने का कशबिह कोई प्रयत्न नहीं किया। यद्यपि उन्होंने अमेरिकी सरकार को यह विश्वास दिलाया कि उन्होंने इस दिशा में कुछ उठा नहीं रखा। इस महीनों तक वेन कारागार में बन्ध रहा और इस बीच में वह भयानक रोग से पीड़ित भी था। अन्त में नये राजपूत जैम्स मनरो (James Manaroc) ने अत्यधिक राजनैतिक प्रयत्नों के बाद उसे कारागार से छुड़ाया।

अन्तर महीनों तक मनरो के मकान में वेन स्वास्थ्य-लाभ करता रहा।

मान देव के विचारों एवं भावों को पूर्ण समय के अनुगम पावेंगे। येरी हासिक कामना है कि अपने उपयोगी प्रयत्नों की जारी रखने के लिए और पुरस्कार तथा राह की सुझाव प्राप्त करने के लिए मान अधिक दिनों तक जीवित रहे।

सन् १८६१ ई. में पेन में बैल्टिमोर के प्रेसिडेंट चुने जाने पर सम्भवतः देते हुए निम्नलिखित 'येरी मैण्ड' द्वारा अमेरिका का भाग मुझे इस समय बखीकार है। इसी वर्ष के शिष्टाचार महीने में पेन बैल्टिमोर (Baltimore) पहुँच गया। किन्तु वाशिंगटन के नाम लिखे पत्रे करने बुझात बन तथा 'बीटिक-डूम' नामक देश में विधिक बय पर प्रहार करने के कारण अमेरिका में पेन को बहिष्कार का से जैसा ही प्राप्त हो सकी। पेन को यह भी प्राप्त हुआ कि बैल्टिमोर भी उसे करने से दूर रख रहे हैं। किन्तु रॉबर्ट फाल्श (Robert Fulton) और जॉन वेस्ली (John Wesley) मिलके वर में पेन जीव महीनों तक रहा उनके अपने विषय विडि हुए।

अमेरिका छोड़ जाने पर राजनीतिक दल से सम्बन्ध होने तथा उनके विद्वानों के विरुद्ध लड़ने के अतिरिक्त पेन के लिए अन्य कोई मार्ग नहीं था। अमेरिका के वाहन-काल में पेन की राजनीतिक दृष्टियों में से 'संयुक्त राज्य के नागरिकों के प्रति' (To the citizens of United States) लिखे गये बात शार्वनिक पत्रों का संग्रह सर्वाधिक महत्व का था। करने अन्य दृष्टिपथ निम्नलिखित और पत्रों के द्वारा पेन ने जनता की दृष्टि से लक्ष्य का प्रयत्न किया। हममें से 'करने निम्नलिखित को प्रकट करने के लिए संवैधानिकों को चुनौती' एक है। लक्ष्यदर्शन में करने कारावास और वाशिंगटन की निष्ठा करने के बाद से पेन की विधि दुर्बल नहीं रही। जो गरीब स्वाधीनता का उपयोग करने के लिए शान्त हुआ था उसका अन्य वापस आमाशुर्त रहा। अपनी बुद्धिमत्ता में वह एक देशीन व्यक्ति के रूप में रह गया। बैल्टिमोर की हानि भी अपने देशवासियों की दृष्टि में 'पेन को उगा न मारी'। विद्विदापन और विरक्ति में पेन ने अपनी जीवन-श्रीला प्रभाव की।

हैर भी 'डॉम पेन' का वह अन्तिम सुधारण नहीं होना चाहिए। हमें यह आशा है कि हमने यह प्रकट किया है कि प्रजिवा के नाम अन्तिमार्थः अपने सभी माननीय दुर्बलताओं के बावजूद भी पेन एक महान् आत्माओं में से एक था जो करने दुन न अन्तिम अन्तिम भर दिया करती है।

की व्यक्तिगत जीब न करके वाशिंगटन ने संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रेसिडेंट के कर्तव्यों की उपेक्षा की। मचनर मोरिस ने, जो कि अमेरिका के फ्रांस विपक्षक नायों के मंत्री थे वाशिंगटन को यह बताया कि वेन को कारागार से मुक्त करने के लिए सब सम्भव प्रयत्न किये गये थे किन्तु इससे वाशिंगटन दोष मुक्त नहीं हो सकते थे क्योंकि वे मोरिस और वेन की पत्रवृत्त को जानते थे। फिर भी वेन का पत्र जो कि अस्वास्थ्य के द्वारा उत्तेजित कटुता की मानसिक स्थिति में लिखा गया था स्पष्ट रूप से अविवेकपूर्ण था। जिस समय यह पत्र लिखा गया था उस समय तक अमेरिका दो तीव्र विरोधी राजनैतिक दलों में संघीय (federalists) और जनतन्त्रीय (Republicans) दलों में विभक्त था। वेन ने दूसरे दल (जनतन्त्रीय दल) से सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक समझा। यद्यपि वेन संघीय संविधान (Federal Constitution) से कुछ विषयों में असहमत था। फिर भी, जैसा कि उसने अपने उस पत्र के आरम्भ में लिखा है 'राज्यों का संघ-सरकार' में सम्मिलित होने का समर्थन करने के नाते वह संवादियों में से था। इसलिए उसे 'संघविरोधी' नहीं कहा जा सकता था और वह तथा वाशिंगटन आवश्यक रूप से राजनीति के क्षेत्र में एक दूसरे के 'नितान्त विरोधी' नहीं थे। वेन ने अपने पत्र में लिखा है—'मेने अमेरिका की क्रांति में जो भाग लिया वह सर्वविदित है।' वेन का यह कथन नितान्त सत्य है। विदेशों में राजनैतिक छेद लिखते समय उसने अमेरिका को सर्वदा अस्तिष्क में रखा। उसने अमेरिका की कमी उपेक्षा नहीं की।

कदाचित् अठारहवीं शती के अन्त में वेन ने यह समझ लिया था कि इंग्लैण्ड और फ्रांस की राजनैतिक प्रवृत्ति ने उसे किसी प्रकार का मोम प्रदान नहीं करता है। इसलिए उसने अमेरिका के बारे में पुनः सोचना आरम्भ किया। जिस समय जेफर्सन (Jefferson) का नाम प्रेसिडेंट के पद के लिए प्रस्तावित था, उस समय वेन ने राष्ट्रीय जहाज द्वारा अमेरिका जान की अपनी इच्छा उन्हें पत्र लिख कर प्रकट की। निर्वाचित हो जाने के पश्चात् जेफर्सन ने अपने एक वैधीपूर्ण पत्र में लिखा कि आप मेरी सैन्य मामल मुद्र-पात द्वारा सुरक्षित ढंग से अमेरिका जा सकते हैं। उसके अतिरिक्त उन्होंने वेन को यह भी लिखा कि मैं आशा करता हूँ कि जब आप यहाँ आयेंगे तो

हमने स्थापित करता है। ये मनुष्य संसार व्यवस्था किसी प्रान्त के आदिवासीयों के समान होते। प्राकृतिक स्वातन्त्र्य की इन शक्तों में सबसे पहले वे समाज के विरुद्ध ही सोचते। उन्होंने मनुषियों उन्हें उस विद्या की ओर अपठार होने का प्रोत्साहन देनी। मनुष्य की धर्मिक उनकी आवश्यकताओं के बराबर हमने स्थापित नहीं है तथा इसका प्रतिफल निरन्तर एकान्तवास के लिए होता मनुष्य यह कि पीछे ही वह मनुष्य मनुष्य की सहायता प्राप्त करने के लिए विद्यमान हो जाता है और वह दूसरा व्यक्ति भी इसी प्रकार की सहायता का इच्छुक होता है। बार का बीच व्यक्ति सम्मिलित रूप से उस विवेक प्रदेय में एक आकाश के समान में समर्थ होते। किन्तु एक व्यक्ति करने जीवन-सर्वत्र परिचय करने पर भी कुछ कुछ नहीं कर सके। मनुष्य बनाने की कठिनी काट लेने पर भी वह अकेला उसे उठाकर वहीं से जा सकता और यदि किसी प्रकार उठाकर ले भी जाय तो अकेला वह नहीं बना सकता। इसी बीच में कुछ के कारण वह काम से विरक्त होने की विषय होता और इसी प्रकार उनकी प्रत्येक आवश्यकता उनके विवेक विद्या में से जाना पायेगी। ऐन का आतिथ्यमान के उनकी कुछ हो सकती है। इन दोनों में से चाहे एक की आवश्यकता न हो किन्तु उसके कारण वह जीवन निर्वाह में असमर्थ होकर अन्य पीछे होने होने यह हो जायगा।

मनु, आकाश-व्यक्ति के समान आवश्यकता हमारे इन नये निवासियों को समाज के रूप में बतल देती। जब तक वे एक दूसरे के प्रति उचित रूप से व्यवहार करते रहे तो सब तक उनके न्यायपरिधि सम्मेलन के बराबर, सरकार तथा वस्तुओं की व्यवस्था करते हुए उनके सम्मेलनों की आवश्यकता प्रभावित कर देने। किन्तु स्वयं के अनिच्छित दोष के लिए मनुष्य कोई स्वयं नहीं है। यह अनिच्छित रूप से यह होता कि वे व्यक्ति निवास-सम्मेलनी अपनी प्रत्येक दृष्टिगतों पर किन्हीं उन महोदयों एक मनुष्य में बाँध रखा था जिस मनुष्य में निवास प्राप्त करके, सभी के अनुसार वे एक-दूसरे के प्रति अपने वर्तमानों और आवश्यकताओं के निर्वाह में विचित्र होने लगे। उनकी यह विचित्रता एक ऐसी बाकार स्थापित करने की आवश्यकता निर्दिष्ट करेगी, जो उनके धार्मिक रूपों की कमी की पूर्ति कर सके।

कोई सुविचारपूर्ण कुछ उनका संसार बन होगा। उनकी पाशवर्षों की

सामान्य बुद्धि

कुछ सेवकों ने 'समाज' और 'सरकार' को इस प्रकार मिला दिया है कि उनमें कोई भेद ही नहीं रह गया। किन्तु न केवल वे दोनों एक दूसरे से भिन्न हैं, बल्कि उनके उद्गम भी भिन्न भिन्न हैं। हमारी आवश्यकताएँ समाज को जन्म देती हैं और सरकार को उत्पन्न करते हैं हमारे दुराचार। समाज हम में स्नेह-सम्बन्ध स्थापित करके हमारे आनन्द की वृद्धि करता है और सरकार हमारे दुराचारों का निग्रह करके उस आनन्द-वृद्धि में योग देती है। समाज पारस्परिक भेद-भोग को प्रोत्साहन देता है और सरकार भेद उत्पन्न करती है। 'समाज' संरक्षक है और 'सरकार' दण्ड-विधायक।

समाज अपनी प्रत्येक दशा में एक बरतान है। किन्तु सरकार अपनी सर्वोत्तम स्थिति में भी एक आवश्यक दुराई मान है। अपनी निकृष्टतम दशा में तो वह भयानक है क्योंकि यदि हम किसी सरकार के द्वारा अपना उनके अंतर्गत उन आपत्तियों को भेजें जिन्हें किसी सरकार-रहित देश में भेजने की आशा करते हैं तो यह सोच कर हमारा दुःख और बढ़ जाता है कि हम स्वयं अपने दुःख का साधन प्रस्तुत करते हैं। बरत के समान सरकार भी निर्दोषता के पुत्र हो जाने का प्रमाण-चिह्न है। स्वर्गिक कृषों के भग्नावशेषों पर प्राप्तादों का निर्माण होता है। यदि हमारे अन्तःकरण की प्रेरणाएँ स्पष्ट तथा समान होतीं और अबाधित रूप से उनका प्रकट होता तो मानव को अन्य किसी नियम-विधायक की आवश्यकता न पड़ती। किन्तु ऐसा न होने पर, अपनी सम्पत्ति के कुछ अंश को लेकर छेप की रथा का साधन बुनाना वह आवश्यक समझता है और ऐसा वह उसी विवेक की प्रेरणा से करता है, जो उसे प्रत्येक दशा में दो दुराचारों में से कम को स्वीकार कर लेने का परामर्श देता है। इस प्रकार सरकार का सबब मुरझा होने के नाते यह निर्विवाद है कि सरकार का वही स्वर्ण ध्येयस्थल है जिसके द्वारा कम से कम व्यय पर अधिक से अधिक साम के साथ मुरझा की सर्वाधिक संभावना प्रतीत हो।

सरकार के कर्तव्य एवं लक्ष्य को समझने के लिए कहना चाहिए कि एक मानव-समूह पृथ्वी के किसी निर्जन प्रांत में, दोष संसार से दूर, अपनी

रस्ती स्थापित करवा है। ये मनुष्य संसार बचवा किसी प्राण के आदिवातियों के तदान होने। प्राकृतिक स्वातन्त्र्य की इस वधा में सबसे पहले वे तमान के विरुद्ध में खोचने। तहसील अकृतिवां उन्हें अब दिया की ओर बचकर होने का प्रोत्साहन देनी। मनुष्य की पवित्र उसकी आवश्यकताओं के समझ इसी मूल बहनी है तथा उसका प्रतिष्ठा निरन्तर एकान्तवास के लिए इतना अनुपयुक्त है कि पीछे ही वह अन्य मनुष्य की सहायता प्राप्त करने के लिए विरुद्ध ही जाता है। और वह दूसरा व्यक्ति भी इसी प्रकार की सहायता का इच्छुक होता है। बार का पीछे व्यक्ति सम्बन्धित रूप से उस निर्वन प्रणय में एक साधारण घर बनाने में समर्थ होते। किन्तु एक व्यक्ति बनने कीचक-पर्यंत परिधान करने घर की कुछ कुछ नहीं कर सकेगा। मकान बनाने की सबसे कम से कम घर की वह खोला देने उठाकर नहीं ले जा सकता, और यदि किसी प्रकार उठाकर ले जाय तो सकेगा घर नहीं बना सकता। इसी बीच में मूल के कारण वह काम से विरुद्ध होने की विवश होता और इसी प्रकार उनकी प्रत्येक आवश्यकता उसे विवश दिया में ले जाना पड़ेगी। ऐसे का आवश्यकता से उसकी मूल ही सक्ती है। इन दोनों में से कोई एक भी प्राणवातक न हो किन्तु उसके कारण वह बीचक-निर्वाह में असमर्थ होकर अन्य पीछे होते होते मर ही जायगा।

अतः, आकस्मिक-व्यक्ति के तमान आवश्यकता हमारे इस नये निवासियों की तमान के रूप में बचन देनी। अब तक वे एक दूसरे के प्रति अहित रूप में व्यवहार करते रहे। अब तक उनके पारस्परिक सम्बन्ध के बरताने बरकार तथा बलुओं को अर्थ विरुद्ध करते हुए उनके सम्बन्धों को अनापसक्त प्रभावित कर देने। किन्तु स्वर्ग के अतिरिक्त दीव के लिए अल्प कोई स्थान नहीं है। अब अनिवार्य रूप से यह होना कि वे व्यक्ति निवास-सम्बन्धी अपनी प्रत्येक इच्छाओं पर जिन्होंने उन तरीकों पर मूल में बंध रहा था जिस अनुपात में विवश प्राप्त करेंगे उसी के अनुसार वे एक-दूसरे के प्रति अपने बलबुद्धी और सम्बन्धों के निर्वाह में विविध हानि करेंगे। अपनी यह विविधता एक ऐसी बरकार स्थापित करने की आवश्यकता विरिष्ट करेगी, जो उनके बीचिक हानों की कमी की पूर्ति कर सके।

कोई बुद्धिवाचक मूल समझा संतुष्ट भवन होगा। उसकी पायाओं की

सामान्य बुद्धि

कुछ सेवकों ने 'समाज' और 'सरकार' को इस प्रकार मिला दिया है कि उनमें कोई भेद ही नहीं रह गया। किन्तु न केवल वे दोनों एक दूसरे से भिन्न हैं, बल्कि उनके उत्पन्न भी भिन्न भिन्न हैं। हमारी आवश्यकताएँ समाज की जन्म देती हैं, और सरकार की उत्पन्न करते हैं हमारे दुराचार। समाज हम में स्नेह-सम्बन्ध स्थापित करके हमारे आनन्द की वृद्धि करता है और सरकार हमारे दुराचारों का निग्रह करके उस आनन्द-वृद्धि में योग देती है। समाज पारस्परिक मेल-जोल को प्रोत्साहन देता है और सरकार भेद उत्पन्न करती है। 'समाज' संरक्षक है और 'सरकार' दण्ड-विधायक।

समाज अपनी प्रत्येक दशा में एक वरदान है। किन्तु सरकार अपनी सर्वोत्तम स्थिति में भी एक आवश्यक बुराई मात्र है। अपनी निकृष्टतम दशा में तो वह असह्य है क्योंकि यदि हम किसी सरकार के द्वारा अपना उसके अंतर्गत उन आपत्तियों को भेजें जिन्हें किसी सरकार रहित देश में भेजने की आशा करते हैं तो यह सोच कर हमारा दुःख और बढ़ जाता है कि हम स्वयं अपने दुःख का साधन प्रस्तुत करते हैं। स्वयं के समान सरकार भी निर्दोषता के घुत हो जाने का प्रमाण-विग्रह है। स्वर्गिक कृषों ने भ्रमावस्थाओं पर प्राप्ताई का निर्माण होता है। यदि हमारे अन्तःकरण की प्रेरणाएँ स्वयं तथा समान होतीं और जबाबित रूप से उनका पालन होता तो मानव को अन्य किसी नियम-विधायक की आवश्यकता न पड़ती। किन्तु ऐसा न होने पर, अपनी सम्पत्ति के कुछ अंश को लेकर योग की रक्षा का साधन बुझना वह आवश्यक समझना है और ऐसा वह उसी विवेक की प्रेरणा से करता है जो उसे प्रत्येक दशा में दो बुराइयों में से कम को स्वीकार कर लेने का परामर्श देता है। इस प्रकार, सरकार का सत्य मुरसा होने के नाते, यह निर्विवाद है कि सरकार का वही स्वयं भ्रष्टतम है जिसके द्वारा कम से कम व्यय पर अधिक से अधिक लाभ के साथ मुरसा की सर्वाधिक संभावना प्रतीत हो।

सरकार के कर्गोन्न एवं सक्षम को समझने के लिए करना चाहिए कि एक मानव-समूह पृथ्वी के किसी निर्जन प्रांत में, योग संसार से दूर, अपनी

बाण्डाई हवाई इच्छाओं को मोड़ दें स्वार्थ हवाई समय को दूषित कर दें फिर भी प्रकृति की सरल भाषी और बुद्धि इसे तत्त्व प्रोपित करेगी ।

वे सरकार के स्वभाव की कल्पना प्रकृति के एक ऐसे सिद्धान्त से प्राप्त करेगा है जिस कोई 'कीलस' समझ सिय नहीं कर सकता । वह सिद्धान्त यह है कि कोई वस्तु जिसकी अधिक सरल होती है उसकी ही मूल्य मात्रा में वह अन्य वस्तुओं को सफ़ाई है; और यदि आवश्यकता हो भी यही तो उसकी ही सुमनता से वह मुपायी जा सकती है । इस सिद्धान्त को समुच्चय रख कर मैं ईंग्लैण्ड के प्रति प्रसिद्ध संविधान की संक्षिप्त जानकारी प्रस्तुत कर रहा हूँ । इसमें स्पष्ट नहीं कि ईंग्लैण्ड का विधान अज्ञानता और दासता के उस युग के लिए प्रेषित था जिसमें सदा निर्वाण हुआ । जिस समय विश्व अत्याचार से पीड़ित था उस समय उस अत्याचार से बोझ बन जाता बहुत बड़ी बुद्धि थी । किन्तु अत्यन्त सुमनता के साथ यह सिद्ध हो जाता है कि ईंग्लैण्ड का संविधान अचूक एवं सामाजिक और राजनीतिक विचारों के अतीत है । इसके जिस तत्त्व की पूर्ति की भाषा की जाती है उसके लिए वह सर्वथा अपेक्ष्य है ।

निर्दुष्ट सरकार अथवा मानव-जीवन का विरसकार करती है, फिर भी वे सरल होती हैं । उनके द्वारा कीजिए किसे जाने पर लोग अपने कुछ के अत्यन्त-प्रति की जानते हैं और उनका उपचार भी जानते हैं । वे माना प्रसार के कारकों और उपचारों से व्याकुल नहीं होते । किन्तु ईंग्लैण्ड का विधान इसका अधिक कहता है कि राज्य नहीं कीजिए रहने पर भी वह न जान सकेगा कि सामन के किन बंड में शेर है । कुछ व्यक्ति उस शेर को किसी स्थल पर देखते तथा अन्य दूसरे स्थल पर और प्रत्येक राजनीतिक बंड उस शेर को दूर करने के लिए एक नया उपचार प्रस्तुत करेगा ।

वे जानता है कि राजनीय अथवा विरकारीय पूर्वधारणाओं पर विश्रुत प्राप्त करना कहता है । फिर भी फिर हय ईंग्लैण्ड के संविधान के भाषों की कटीका करने का कष्ट करे तो उन्हें प्राप्त होगा कि वे प्राचीन अत्याचारों के अवशिष्ट अपार हैं । इसका अर्थ है कि उनमें कुछ नवीन राजनीय तत्वों का समावेश हो गया है । वे आज इस प्रकार हैं:—

(१) राजा के रूप में राजनीय अत्याचार के अवरोध ।

(२) दुर्गो (Peers) के रूप में दुर्गोतरीय (Aristocratical)

छाया में समूची बस्ती सार्वजनिक विषयों पर विचार करने के लिए एकत्रित होगी। यह भी सम्भव है कि उसके प्रथम कानून सामान्य नियमन मात्र हों और सामूहिक तिस्कार के अतिरिक्त अन्य कोई दण्ड भी न हों। इस प्रथम संसद में प्रत्येक व्यक्ति अपने प्राकृतिक अधिकार के बल पर स्थान प्राप्त करेगा।

बस्ती के आरम्भ में जन-संख्या कम होगी, धरों की संख्या कम रहेगी और मनुष्यों के सार्वजनिक काम बहुत थोड़े तथा साधारण होंगे। क्रिस्तु पस्ती के बढ़ने के साथ-साथ उनके सावजनिक कार्य भी बढ़ने और पहले की अपेक्षा उनके निवास-स्थान दूर-दूर होंगे। अस्तु, अनेक अवसरों पर सब मनुष्यों का एक स्थान पर पूर्ववत् एकत्रित होना अपेक्षाकृत अधिक अनुबिधाजनक होगा। परिणामतः सुविधा के लिए वे सम्पूर्ण बस्ती में से कुछ चुने हुए व्यक्तियों के ऊपर विभजन बनाने का कार्य भार छोड़ देने के लिए सहमत होंगे। वे चुने हुए व्यक्ति सभी प्रकार कार्य करने जिस प्रकार बस्ती के सभी मनुष्य उपरिष्ठ रहकर कार्य करते क्योंकि जिन आवश्यक कार्यों के लिए वे व्यक्ति चुने गये हैं वे काम चुनने वालों के ही नहीं हैं वरन् इनके भी हैं। यदि बस्ती इसी प्रकार बढ़ती गयी तो प्रतिनिधियों की संख्या में वृद्धि करनी पड़गी। बस्ती के, प्रत्येक भाग के हितों पर ध्यान दिया जा सके इस दृष्टि से सर्वोत्तम यह समझ जायेगा कि पूरी बस्ती को कई सुविधा-जनक भागों में बांट दिया जाय और प्रत्येक भाग उचित संख्या में अपने प्रतिनिधियों को भेजे। इन निर्वाचित सदस्यों के हित निर्वाचकों के हितों से भिन्न न हों अतः बुद्धि यह स्वीकार करेगी कि समय-समय पर निर्वाचन होना उचित है क्योंकि इस प्रकार ये निर्वाचित सदस्य कुछ महीनों के बाद सीट कर साधारण जनता में मिल जायेंगे और इस विवेक के साथ कि हम कहीं अपने लिए ही अधिकार विधान न बना दें वे जनता के प्रति सच्चे बने रहेंगे। बार-बार होने वाले इन परिवर्तनों से समाज के सभी भागों में सामान्य हित की स्थापना होगी और वे स्वाभाविक रूप से एक-दूसरे की सहायता करेंगे। इसी पारस्परिक सहयोग पर सरकार की शक्ति और शासितों का आत्मन्य निर्भर है न कि राजा के अर्प-हीन मान पर।

अस्तु, स्पष्ट है कि सरकार का भ्रम-स्रोत यह पद्धति है जो विरोध का शासन करने में शैथिल्य पुणों की असमर्थता के कारण आवश्यक हुई। वहीं पर सरकार का लक्ष्य भी स्पष्ट है—अर्थात् स्वतन्त्रता और सुरक्षा। पाहें बाह्य प्रदर्शनों से हमारी आँखें चौंधिया जायें हमारे काम धर्म से छेदे जायें पूरा

(Peers) को तथा (House of lords) राजा-मन्त्र में है और लोक-सभा (House of Commons) जनता-मन्त्र में है। किन्तु यह वेद एक ही सभा का अन्तर्निर्माण है और यद्यपि उन्नत्युक्त कथन सुन्दर रंग से कहा गया है, फिर भी पटौता करने पर यह असम्भ्यत प्राप्त होता है। राजा यह बात देखने में लायेगी कि दण्डों की सुन्दरतम रचना यदि किसी ऐसी वस्तु का बण्डन करती है जिसका अस्तित्व या तो सम्भव नहीं है या जो अपनी दुर्बलता के कारण बर्तन से बाहर है तो यह निरर्थक होती है। उसके कर्तों को कुछ बिल सफ़ा है किन्तु यन्त्रिक को किसी कर्म का बोध नहीं होता। उन्नत्युक्त व्याख्या के अन्तर्गत निम्नलिखित प्रश्न निहित है।

उक्त अधिकार को जिसे लोक सभा को धीरे से डरते हैं, और जिसका निरुद्ध करने के निरुद्ध विषय होते हैं, राजा ने किस प्रकार प्राप्त किया? ऐसा अधिकार बुद्धिमान लोगों द्वारा दिया हुआ नहीं हो सकता और जिससे निरुद्ध में रहना पड़े ऐसा अधिकार ईश्वरप्राप्त भी नहीं हो सकता है। फिर भी उद्दिष्टान को व्यवस्था इस प्रकार के अधिकार का अस्तित्व मानती है।

किन्तु उद्दिष्टान की यह व्यवस्था गलत है। राजा या तो कथन की पुष्टि कर नहीं सकते अथवा करने नहीं। यह साधन कार्य-व्यापार एक प्रकार की व्यवस्था है। जिस प्रकार अधिकार प्राप्त करने को प्रभावित करता है और जिस प्रकार दण्ड-मन्त्र एक दुर्बल से प्रतिपादित होते हैं। उक्त प्रकार हमें यह देखना है कि उद्दिष्टान में कौन-सी दण्ड प्रत्यक्ष है; क्योंकि यही दण्ड मान्य करेगी। यद्यपि अन्य दण्डों अथवा उनके किसी रंग के द्वारा उसके प्रतिरोध में बाधा स्पष्ट हो सकती है किन्तु यह ठक से उसकी गति को पूर्णतः रोकने में असमर्थ नहीं होते तथा तक उनके प्रभाव प्रभावहीन होंगे। यह आर्थिक व्यवस्थाक दण्ड अन्य में दिव्यिणी होगी। उसके रंग की कमी की पुष्टि समय आने मात्र कर देना।

हमने की साक्षात्पक्ष नहीं कि राजा ईश्वरप्राप्त के उद्दिष्टान की सर्वोपरि बात है। यह मानना उचित नहीं तथा निम्नलिखित (Penalties) को देखकर मानना अनुचित प्रभाव प्राप्त करता है। इतिहास, यद्यपि निरुद्ध साधन को आवश्यक करते हमने उद्दिष्टान की है किन्तु साधन-साधन राजा को

अत्याचार के अवशेष ।

(३) लोक सभा के सदस्यों (Commons) के रूप में नवीन जनतंत्रीय (Republican) तत्त्व जिस पर इंग्लैण्ड की स्वतंत्रता निर्भर है ।

उपर्युक्त तीनों भागों में से प्रथम दो आनुवंशिक (Hereditary) होने के नाते जनता से पूर्ण स्वतंत्र हैं और इसलिये संविधानिक अर्थ में वे राज्य की स्वतंत्रता में किसी प्रकार का योग नहीं देते ।

यह कहना कि इंग्लैण्ड का संविधान परस्पर एक दूसरे का निग्रह करने वाली तीन शक्तियों का संघ है निरा हास्यास्पद है । या तो इन शक्तियों का कोई अर्थ नहीं है अथवा ये पूर्ण विरोधात्मक हैं । इस कथन में कि लोक-सभा के सदस्य राजा पर नियंत्रण रखते हैं, निम्नांकित दो अभिप्राय अन्वयित हैं । प्रथम यह कि किसी नियंत्रण के बिना राजा का बिश्वास नहीं करना चाहिए अथवा दूसरे शब्दों में, निरंकुश अधिकार की तुलना राजतंत्र की प्राकृतिक व्यापि है । दूसरा यह कि राजा के नियंत्रण के लिए नियुक्त लोक-सभा के सदस्य राजा की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान और बिश्वास के पात्र हैं ।

किन्तु, जो संविधान लोक-सभा के सदस्यों को यह अधिकार देता है कि वे पूर्ति (supplies) को रोक कर राजा का नियंत्रण करें, वही राजा को यह अधिकार देता है कि वह लोक-सभा के उन सदस्यों के अन्य बिधियों को अस्वीकृत करके उनका नियंत्रण करे । इस प्रकार यह संविधान यह भी स्वीकार करता है कि राजा उन लोक-सभा के सदस्यों से अधिक बुद्धिमान है, जिन्हें इसने राजा से अधिक बुद्धिमान माना है । यह क्या है ? भ्रमंता मात्र ।

राजतंत्र (Monarchy) की रचना ही नितम्ब हास्यास्पद है । एक ओर तो यह एक आदमी की सूचना प्राप्ति के साधनों से दूर कर देती है और दूसरी ओर उसे उस स्थिति में बाम करने का अधिकार प्रदान करती है जहाँ सर्वोच्च न्याय की आवश्यकता होती है । राजा शेष जगत् से अरिबिध रहता है, फिर भी उसे ऐसे कार्य करने पड़ते हैं जिनके लिए संसार का पूर्ण ज्ञान आवश्यक है । इस प्रकार ये विभिन्न-विध तत्त्व स्वाभाविक रूप से एक दूसरे का विरोध और विनाश करते हुए सम्पूर्ण अरिब को भ्रमंतापूर्ण एवं व्यर्थ प्रमाणित करते हैं ।

कुछ शेषकों ने ब्रिटिश विधान को अन्य प्रकार से समझाया है । उनका कहना है कि राजा राजतंत्र का एक पक्ष है और जनता दूसरा पक्ष । कुलीनों

शारीरिक या वार्षिक कारण निरिष्ट नहीं किया जा सकता। यह येर है राजा और राजा। घर और गरीब का येर अकृतिमय है। अच्छा और बुरा स्वयं-निर्धारित येर है। किन्तु यह बरीक्षण का विषय है कि संसार में मनुष्यों का एक नवीन वर्ग रोप की अनेक अधिक उन्नत किस प्रकार अवस्थित हुआ और इन वर्ग के मनुष्य मानव-जाति के आनन्द के साधन हैं अपना कुछ है।

वर्ग-मनुष्यों के अनुसार, नृति के पुनर्जनन का येर राजा नहीं हुआ करते थे। परिवर्तन: कोई कुछ नहीं होता था। राजाओं के अधिमान के ही मानव जाति अप्रवृत्तिवत् होती है। राजा के न होने के कारण ही हाईम ने यूरोप के पश्चिमीय देशों की अनेक अधिक शक्ति का आनन्द प्राप्त किया है। प्राचीन दुन के प्रसार भी इन बात का उपर्यन्त करते हैं। 'निर्गु-सत्ता-बाद' में मनुष्यों ने जिस शक्ति और सामीप्य जीवन का आनन्द उठाया वह कम समय कुछ हो गया जिस समय शक्ति में राजत्व की स्थापना की।

शुद्धिपूर्वकों ने सर्वप्रथम राजतन्त्र की स्थापना की। बार में इसपरम के निवासियों ने उनका अनुकरण किया। शुद्धि-युवा की प्रोत्साहन की के निरु यह मनुष्य सामकीय जातिभार का। उन वर्गों मनुष्यों ने कुछ राजाओं को दिव्य सम्मान प्रदान दिया। ईसाई-अवस्था ने आने भीषित राजाओं के प्रति वैरा ही बार प्रदर्शित करत उक्त दिया में प्रगति की है। जो आने समय वैरा के मध्य मिट्टी में भुङ्क रहा है। उक्त प्रगति को महापराविचार की दिव्य पक्षी से विकसित करना निम्न अवधि काय है।

उक्त शक्ति का येर मानव जाति न होने ऊपर उठ जाना जिस प्रकार मनुष्य के शारीरिक अधिकार-आनन्द के आधार पर स्थाप नहीं बस्य या सकता उक्त प्रकार वर्ग-मनुष्यों का आधार पर भी इसका भीषित निरु नहीं किया जा सकता। निरुजन (Gideon) और जिस समुजन (Samuel) के अनुसार सर्वोत्तमन ईश्वर की इच्छा व्यक्त कर के राजतन्त्र की अवस्था करती है। पश्चिमीय देशों में वर्ग-मनुष्यों के उन सभी वर्गों की अनुसूच व्यक्ता कर ही गयी है जो राजतन्त्र का विचार करते हैं। किन्तु जिस देशों में सरकार का निर्माण अभी होने वाला है उन देशों की उन वर्गों पर ध्यान देना चाहिए। नीचर की अनुसूच नीचर का भी। यह राज-वर्गों में निरु राजा वर्ग-मनुष्य निरुजन

प्रमुख पद लेकर पर्यति मूर्खता भी की है ।

इसमें सन्देह नहीं कि अन्य देशों की अपेक्षा इंग्लैण्ड में व्यक्ति अधिक सुरक्षित है किन्तु जिस प्रकार ये फ्रांस में राष्ट्रेच्छा नियम है उसी प्रकार ये इंग्लैण्ड में भी । जस्तर केवल इतना ही है कि वे नियम सीधे राजा के मुख से न निकल कर संसदीय विधान के अति भयंकर रूप में जनता को प्राप्त होते हैं । चास्ती प्रथम के माध्य में राजाओं को अधिक स्वायत्तीय नहीं बरन अवधिक अतुर बना दिया है ।

जस्तु, सरकार की पदाति और स्वल्प के विषय में राष्ट्रीय अभिमान और पूर्व पारणियों को किनारे रख कर इस स्पष्ट सत्य को स्वीकार कर सेवा चाहिए कि इंग्लैण्ड में ब्रिटिश संविधान के राजा-महा के कारण नहीं बरन लोक-महा के कारण राजा उसना अत्याचारी नहीं है जितना तुर्किस्तान में ।

इंग्लैण्ड में सरकार का जो स्वरूप है उसके संविधान की ब्रिटिशों की परत इस स्थल पर निताम्न आवश्यक है । जिस प्रकार पदापात के प्रभाव से हम जनों के साथ न्याय नहीं कर सकते उसी प्रकार यदि हम दुर्दम पूर्व-धारणा के बन्धन में बद्ध हैं तो हम अपने प्रति भी न्याय नहीं कर सकते और जिस प्रकार बेदयावासी व्यक्ति पत्नी पुनने या उसका न्याय करने के लिए अनुपपुच्छ होता है, उसी प्रकार सरकार के वृषित संविधान के पक्ष में जब तक कोई पुष मान्यता बनी रहेगी तब तक हम लोग किसी अच्छे संविधान का निर्णय नहीं कर सकते ।

राजतंत्र और आनुषंगिक उत्तराधिकार

सृष्टि की व्यवस्था के अनुसार सभा मानव मूलतः समान है । इसलिए उनकी यह समानता किसी उत्तरागामी परिस्थिति के द्वारा ही गप्ट हो सकती है । अत्याचार और सोम जैसे अग्रिय दार्ष का नाम लिए बिना भी पनी और निर्णय के भेद का कारण समझाया जा सकता है । अत्याचार पन प्राप्ति का साधन कहाविए ही होता है प्रायः वह पन का परिणाम होता है । सोम यद्यपि मनुष्य को अत्यन्त दखि होने से बचा सता है किन्तु यह मनुष्य को इतना बायर बना देता है कि वह पनी नहीं हो सकता ।

मनुष्यों में एक अन्य प्रकार का और इगसे बड़ा भेद है जिसका कोई

कारण बसाठ है। सिन्धु इतना निविदार है कि कबमें ऐसी उत्कम्भ थी।
 सैन्धुवन के दो पुत्रों को कुछ लौकिक-कार्य सौंपे गये थे। उनके पुत्रपारों से
 बचप हीकर इन बहुरियों ने एकाएक कोलाहल करते हुए, सैन्धुवन के समीप
 बकर कहा—“माय बूढ़ हो गये हैं। आपके पुत्र आपका अनुसरण नहीं कर
 रहे हैं। इसका हम लोगों के लिए एक रामा निपुण कीजिए, जो हमारा काम
 कर सके वैया हि जम्ब राष्टों में हाठा है।” इस स्थान पर हम स्पष्ट देखते
 हैं कि दुर्योधन का अविश्राम भरा नहीं था। क्योंकि जबकि जम्ब राष्टों अर्थात् अपनी
 भूमिपुत्रों के बचाने होना चाहते थे, जबकि बचका पीरव इन भूमिपुत्रों के
 बसाठकर विपन्न करने में था। सिन्धु जब उन्होंने कहा कि हमारे लिए एक
 रामा निपुण कीजिए, तो सैन्धुवन अत्यन्त हो उठे और उन्होंने हस्तर से
 शर्पणा की। हस्तर के सैन्धुवन से कहा—“वे लोग तुमसे जो कहते हैं, उन्हें
 भुनो क्योंकि उन्होंने केवल तुम्हारी उपासी नहीं की है। जिस दिन वे मेरे उन्हें
 भिन्न से बाहर लाकर उनका पालन-पोषण किया वह दिन से आज तक करने
 सभी बापों के द्वारा उन्होंने मेरी उपासी करके जम्ब देवताओं की उपासना की
 है। वैया ही व्यवहार के तुम्हारे साथ कर रहे हैं। अस्तु, उनकी बात को
 सुनो। फिर भी समीरतापूर्वक इनका विरोध करो और रामा किन्तु प्रभार से
 इनका ध्यान करेगा इसे ऊर्ध्व जम्बराओ।” यहाँ रामा विदेह के अविश्राम नहीं
 है, बल्कि दुम्भी है जिस रामाओं के अनुसरण की उत्कम्भ बहुरियों को भी
 इन रामाओं के सामान्य व्यवहार से उत्तरव है। समयगत दूरी और प्रकार
 और के होते हुए भी वे सामान्य व्यवहार आज दिन तक अनुमन बने हैं।
 सैन्धुवन ने हस्तर का कथन लोगों को वह सुनाया और कहा कि जो रामा
 तुम्हारा पालन करेगा उनके व्यवहार इस प्रकार के होंगे—“वह तुम्हारे पुत्रों को
 बाने बरसीर के लिए केवल बारसी अथवा लईय बनायेगा। तुम्हारे कुछ
 बाड़े उबड़े रथ के माने माने दीर्घि। (मायकल चमत्ता से भी केमार भी
 मन्त्री है वह इस व्यवहार से भिन्न जाती है।) वह द्विती-तृती को बहुर्यों
 बचका बचकों का मायक निपुण करेगा। वह बाने सेतों को बोटने और
 प्रपत्तों को कान्ने के बापों में लोगों को बनायेगा। कुछ लोग उबरी रामा बचका
 दूध के लिए सामान तैयार करेंगे। तुम्हारी महर्षियों से वह अपनी रबीर
 बनायेगा। वह तुम्हारे सेतों को तथा भवोत्तम सैन्धु के बहुरियों को लेकर

है। फिर भी इस वाक्य से राजतंत्र का समर्थन नहीं होता क्योंकि उस समय यहूदियों का कोई राजा नहीं था और वे रोम साम्राज्य के दासत्व में थे। 'मूसा' ने सृष्टि का था वृत्तांत बताया है उसके अनुसार आरम्भ से सगमन तीन सहस्र वर्षों के अनन्तर, राष्ट्र-व्यापी मोह के कारण यहूदियों ने राजा के लिए प्रार्थना की। उस समय तक उनकी सरकार एक व्यापारिक और जाति के बूढ़ों द्वारा शासित एक प्रकार की जनतन्त्रीय सरकार थी। केवल असाधारण परिस्थितियों में कभी-कभी सव्यक्तिमान ईश्वर हस्तक्षेप किया करता था। यहूदियों का कोई राजा नहीं था और ईश्वर के अतिरिक्त अन्य किसी को राजा के नाम से स्वीकार करना पाप माना जाता था। राजाओं को भूतियों के समान जो दिव्य सम्मान प्राप्त होता है उस पर यदि कोई सम्मीरतापूर्वक विचार करे तो उसे इस बात पर थोड़ा भी आश्चर्य नहीं करना चाहिए कि वह सव्यक्तिमान ईश्वर अपने दिव्य विधेयाधिकार पर अपवित्रतापूर्वक आक्रमण करने वाली राजतन्त्रीय सरकार को अस्वीकार करता है।

धर्म-ग्रन्थों में राजतन्त्र यहूदियों के पापों में से एक पाप माना गया है और उसका अभिघाप उनके लिए सुरक्षित है। इस विषय भी क्या सुनने योग्य है।

इजराइल के निवासी जब मिडियानियों से पीड़ित हुए तो मिडियान एक छोटी-सी सेना के साथ उनके विरुद्ध लड़ने के लिए आया और ईश्वर के हस्तक्षेप के कारण उसे विजय प्राप्त हुई। इस विजय से बहुत बड़े प्रसन्न हुए और गिद्मान के सेनापतित्व को इस विजय का कारण मान कर उन्होंने उसे राजा बनाने का प्रस्ताव करते हुए कहा—'आप आपके लड़के और आपके लड़के के लड़के हम पर शासन करें। इस अवसर पर एक राज्य का ही नहीं बल्कि आनुवंशिक राज्य का महान प्रलोभन प्रस्तुत था। किन्तु गिद्मान ने दयापूर्वक उत्तर दिया— 'न तो मैं और न मेरे पुत्र ही आप लोगों पर शासन करेंगे। ईश्वर आप पर शासन करेगा। माव स्पष्ट है। गिद्मान उस सम्मान को अस्वीकार नहीं करता है बल्कि वह यहूदियों के सम्मान प्रदान करने के अधिकार को अस्वीकार करता है। वह उन्हें बर्से नें गन्धबाह भी नहीं देता बल्कि सिद्धों की निःशरारत शैली में अननुरक्ति के साथ वह उन्हें उनके वास्तविक स्वामी को सौंप देता है।

समय एक सौ तीस वर्षों के बाद यहूदियों ने पुनः बही मसली की। मूर्तिपूजकों की पूजा-पद्धति के अनुकरण-सम्बन्धी यहूदियों की उत्कण्ठता

कारण मजबूत है। किन्तु इसका विनिर्माण है कि हममें ऐसी उत्कृष्टता थी। ईश्वर के दो पुत्रों को कुछ लौकिक-कार्य सौंपे गये थे। उनके दुपचारों से मनस होकर उन यहुदियों ने एकाएक कोसाहन करते हुए, ईश्वर के समीप जाकर कहा—“आप बूढ़ हो गये हैं। आपके पुत्र आपके अनुसरण नहीं कर रहे हैं। करना हम लोगों के लिए एक पत्रा निरूपित कीजिए, जो इसका स्वायत्त कर देना कि अन्य राष्ट्रों में होना है।” इस स्वयं पर हम स्पष्ट देखते हैं कि यहुदियों का अविद्याम बुरा नहीं था क्योंकि वे अन्य राष्ट्रों में भी अपनी धर्मनिरूपकों के समान होना चाहते थे जबकि उनका धर्म उन धर्मनिरूपकों के प्रधानमन्त्र मिश्र बनने में था। किन्तु जब उन्होंने कहा कि हमारे लिए एक पत्रा निरूपित कीजिए, तो ईश्वर ने अग्रसर हो बैठे और उन्होंने ईश्वर से शर्चना की। ईश्वर ने ईश्वर से कहा—“वे लोग तुम्हारे बारे में कहते हैं, उसे तुमने क्योंकि उन्होंने केवल तुम्हारी उपासी नहीं की है। जिस दिन वे मेरे ऊपर मिल के जाकर जाकर उनका वास्तव-निरूपण किया उस दिन वे आज तक अपने सभी कार्यों के द्वारा उन्होंने मेरी उपासी करके अन्य देशों की उपासी की है। मैं ही अन्तर्गत के तुम्हारे हाथ कर रहे हैं। अस्तु, उनकी बात को सुनो। फिर भी धर्मनिरूपकों उनका विशेष करो और पत्रा जिस प्रकार से उनका वास्तव करेगा उसे उन्हें समझाओ।” यही पत्रा विशेष है अविद्याम नहीं है, बल्कि पृथ्वी के जिन पत्राओं के अनुसरण की उत्कृष्टता यहुदियों की थी उन पत्राओं के सामान्य व्यवहार से तात्पर्य है। सप्रसन्न बूढ़ और प्रकाश-मय के होते हुए भी वे सामान्य व्यवहार आज दिन तक अनुसृत करने हैं। ईश्वर ने ईश्वर का कथन लोगों को कह सुनाया और कहा कि जो पत्रा तुम्हारा वास्तव करेगा उसके व्यवहार इस प्रकार के होंगे—“यह तुम्हारे पुत्रों को अपने उद्योग के लिए सेवक तैयार करना चाहिए। तुम्हारे कुछ बड़े बड़े एवं के आगे-आगे रहेंगे। (जायकल मगता से जो वेधार ली जाती है, यह इस व्यवहार से मेल जाती है।) यह किसी-किसी को तहफ़ों वगैरह वगैरह का नावक निरूपण करेगा। यह अपने लोगों को जीतने और हारने को काटने के कार्यों में लोगों को लगावेगा। कुछ लोग उसकी रक्षा अपना बूढ़ के लिए साक्षात् तैयार करेंगे। तुम्हारी लड़कियों से यह अपनी रक्षार्थ बनायेगा। यह तुम्हारे लोगों को तथा सर्वोत्तम जीवन के सभीों की लेकर

है। फिर भी इस बावज़ से राजतन्त्र का समर्थन नहीं होता क्योंकि उस समय यहूदियों का कोई राजा नहीं था और वे रोम साम्राज्य के शासक में थे। 'यूदा' ने सृष्टि का जो वृत्तांत बताया है उसके अनुसार आरम्भ से लगभग तीन सहस्र वर्षों के जनसंख्या, राष्ट्र-व्यापी मोह के कारण यहूदियों ने राजा के लिए प्रार्थना की। उस समय तक उनकी सरकार एक म्यादाभ्यस और जाति के बुढ़ों द्वारा शासित एक प्रकार की जनतन्त्रीय सरकार थी। केवल असाधारण परिस्थितियों में कभी-कभी सर्वव्यक्तिमान ईश्वर हस्तक्षेप किया करता था। यहूदियों का कोई राजा नहीं था और ईश्वर के अतिरिक्त अन्य किसी को राजा के नाम से स्वीकार करना पाप माना जाता था। राजाओं को भूतियों के समान जो दिव्य सम्मान प्राप्त होता है उस पर यदि कोई घमभीरतापूर्वक विचार करे तो उसे इस बात पर थोड़ा भी आश्चर्य नहीं करना चाहिए कि वह सर्वव्यक्तिमान ईश्वर अपने दिव्य विधेवाधिकार पर अपवित्रतापूर्वक आक्रमण करने वाली राजतन्त्रीय सरकार को अस्वीकार करता है।

धर्म-धर्मों में राजतन्त्र यहूदियों के पापों में से एक पाप माना गया है और उसका अन्तिम उपकरण उनके लिए सुरक्षित है। इस विषय की कथा सुनने योग्य है।

इज़राहल के निवासी जब मिडियानियों से पीड़ित हुए तो मिडियान एक छोटी-सी सेना के साथ उनके विरुद्ध लड़ने के लिए आया और ईश्वर के हस्तक्षेप के कारण उसे विजय प्राप्त हुई। इस विजय से यहूदी बड़े प्रसन्न हुए और मिडियान के सेनापतित्व को इस विजय का कारण मान कर उन्होंने उसे राजा बनाने का प्रस्ताव करते हुए कहा—'आप आपके लड़के और आपके लड़के के लड़के हम पर शासन करें। इस अवसर पर एक राज्य का ही नहीं बल्कि आनुवंशिक राज्य का महान प्रमोशन प्रस्तुत था। किन्तु मिडियान ने दयापूर्वक उत्तर दिया— 'न तो मैं और न मेरे पुत्र ही आप लोगों पर शासन करेंगे। ईश्वर आप पर शासन करेगा। यह स्पष्ट है। मिडियान उस सम्मान को अस्वीकार नहीं करता कि बल्कि यहूदियों के सम्मान प्रदान करने के अधिकार को अस्वीकार करता है। वह उन्हें बहने में धन्यवाद भी नहीं देता बल्कि सिद्धों की निःशर्करा समीक्षा में अनुरोध के साथ वह उन्हें उनके वास्तविक स्वामी को शौच देता है।

लगभग एक सौ तीस वर्षों के बाद यहूदियों ने पुनः वही गतती की।

प्राप्त नडाव है। किन्तु इसका निर्विचार है कि उनमें ऐसी उत्कृष्टता थी।
 ईसाइयत के दो पुरो को कुछ नीतिक-कार्य सौंपे गये थे। उनके द्वाराचारों से
 बचता होकर उन बहुरिक्तों ने एकाएक कोबाहुन करते हुए, ईसाइयत के समीप
 बकर कहा—“आप कुछ ही गये हैं। आपके पुत्र आपका अनुसरण नहीं कर
 रहे हैं। इसका हम लोगों के लिए एक राजा नियुक्त कीजिए, जो हमारा स्वाय
 कर सके जैसा कि अन्य राज्यों में होता है।” इस स्थान पर हम स्पष्ट देखते
 हैं कि बहुरिक्तों का अविश्राम बुरा नहीं था क्योंकि वे अन्य राज्यों के समान
 बुद्धिमानों के समान होना चाहते थे जबकि उनका बीरव उन भूतिपूजकों से
 बराबर-बराबर भिन्न बनने में था। किन्तु जब उन्होंने कहा कि हमारे लिए एक
 राजा नियुक्त कीजिए, तो ईसाइयत अग्रसर हो उठे और उन्होंने ईश्वर से
 प्रार्थना की। ईश्वर ने ईसाइयत से कहा—“वे लोग तुमसे जो कहते हैं, उन्हें
 सुनी क्योंकि उन्होंने केवल तुम्हारी उपासी नहीं की है। जिस दिन से मैंने उन्हें
 मिला है बाहर लाकर उनका शासन-विषय किया उस दिन से आज तक अपने
 सभी कार्यों के द्वारा उन्होंने मेरी कृपा करके अन्य देवताओं की उपासना की
 है। ईसा ही व्यवहार से तुम्हारे साथ कर रहे हैं। अस्तु, उनकी बात को
 सुनो। फिर भी बन्धन-समय तक उनका विशेष करी और राजा किस प्रकार से
 शासन करेगा इसे उन्हें समझाओ।” वही राजा विवेक से अविश्राम नहीं
 है, परन्तु पुष्पी के दिन राजाओं के अनुसरण की उत्कृष्टता बहुरिक्तों को भी
 उन राजाओं के सामान्य व्यवहार से उत्पन्न है। सपरिवर पूरी और प्रकार
 की के होते हुए भी वे सामान्य व्यवहार आज दिन तक अनुभव करने हैं।
 ईसाइयत ने ईश्वर का कवन लोगों को यह बताया और कहा कि जो राजा
 तुम्हारा शासन करेगा उसके व्यवहार इस प्रकार के होंगे—“यह तुम्हारे पुरो को
 अपने कर्मों के लिए शेषक, लारवी बचवा लईत बनायेगा। तुम्हारे कुछ
 शक्ति उनके रथ के आगे आगे रहेंगे। (आजकल जगत्ता से जो देवार की
 जाती है, वह इस व्यवहार से मिल जाती है।) यह किसी-किसी को लहकों
 करवा पचाहों का नामक नियुक्त करेगा। यह अपने लौनों को लोचने और
 उनको को कटने के कार्यों में लौनों को लपायेगा। कुछ लोग बसकी रथा बचवा
 हट के लिए सामान लैवार करेंगे। तुम्हारी लहकियों के यह अपनी रतीर
 लपारयेगा। यह रे लौनों को लवा लौतलन लैतून के लौनों को लैकर

अपने सेवकों को देगा और तुम्हारे बीबों तथा अंधूरो का दयालु सेन्सर अपने कर्मचारियों और सेवकों को देगा । वह तुम्हारे सेवकों-नेविनाओं तथा मुग्धरक्तम गवहों के दयालु को लेकर उन्हें अपनी सेवा में नियुक्त करेगा । यह तुम्हारी भेदों का दयालु देगा और तुम लोग उसके सेवक बनोगे । उस समय अपने घुने हुए राजा के कारण पीड़ित होकर तुम लोग माहि नाहि करोगे किन्तु ईश्वर तुम्हारी पुकार नहीं सुनेगा । इस प्रकार राजतन्त्र आरम्भ हुआ । उस समय से आज तक जो थोड़े-से अच्छे राजा हुए, उनके चरित्र राजतन्त्र के उद्गम सम्बन्धी पाप को न तो पवित्र बना सकते हैं और न नष्ट ही कर सकते हैं । डेविड की जो इतनी प्रशंसा की गयी है वह उसके राजा के पद के नाते नहीं बल्कि ईश्वर की पसन्द का व्यक्ति होने के नाते । यहूदियों ने सैम्युअल की बात नहीं मानी और कहा—“अहाँ हम लोगों को एक राजा चाहिए जिससे हम भी धर्म राष्ट्री के समान बन सकें और हमारा राजा हमारा स्वाय करे तथा हमारे आगे आगे चलकर हमारी सहाइयाँ सके । सैम्युअल उन लोगों से उर्ध्व करता रहा परन्तु कुछ लाभ न हुआ । उसने उन सबकी कृतघ्नता को स्पष्ट किया, किन्तु उन यहूदियों पर इसका भी कोई प्रभाव नहीं पड़ा । यह देखकर कि वे अपनी मूर्खता पर अड़े हुए हैं सैम्युअल ने कहा— मैं ईश्वर से बहूँगा कि वे जिससी और वर्षा में (गेहूँ की प्रत्यक्ष व समय यह एक प्रकार का दण्ड था) जिससे तुम लोग देख ला कि राजा की माँग करके तुम महान् मूर्ख की हो । तत्पश्चात् सैम्युअल ने ईश्वर से प्रार्थना की और उग दिन जिसती और वर्षा का प्रकोप रहा । एक मनुष्यों ने अधिन भवपीत होकर सैम्युअल से प्रार्थना की—“आप अपने सेवकों के लिए प्रभु से प्रार्थना कीजिए जिससे हम लोग मरें नहीं । हम लोगों ने राजा की माँग करके एक पाप जोर दिया । धर्मधर्म के ये अंश सरल और स्पष्ट हैं । इनमें किसी प्रकार की जटिलता नहीं है । यदि धर्मधर्म भूला नहीं है तो यह साफ है कि प्रभु ने राजतन्त्र का विरोध किया । इस बात को स्वीकार करने के पश्चात् कारण है कि पाप-नाशक भी भेदों में धर्मधर्मों की जनता में दूर करने में राजनीति पुराणि-नीति व समान ही होती है । क्योंकि राजतन्त्र प्रत्येक स्थिति में सत्कार की मांगी है ।

राजतन्त्र के दोषों में आनुवंशिक उत्तमपितृता का दोष और जोड़ दिया गया है । जिस प्रकार राजतन्त्र हम लोगों ने लिए अपमान १ उनी प्रकार

मानुष्यिक उत्तराधिकार पर स्थापित सम्मान हवायी शक्ति । तब वयमान बगल और ऊपर से लगी यही वस्तु है । क्योंकि यद्यः सभी मनुष्य भूमण्डल समान हैं अथ अन्य भूतों से अपने कुल को शासक बन से भेद मान लेने का अन्य-जात अधिकार किसी एक व्यक्ति को नहीं है । सम्भव है कि कोई एक व्यक्ति अपने गुणों के कारण अपनी सामयिकों के बाहर का पात्र हो, किन्तु उसके उत्तराधिकारी उन गुणों के अभाव में बाहर न प्राप्त कर सकें । राजाओं के मानुष्यिक अधिकार की मूर्च्छता को प्रमाणित करने के लिए सर्वाधिक सबल प्रमाणों में से एक यह है कि प्रकृति उसे अस्वीकार करती है । अन्धारा दिवह के स्थान पर प्रायः नीचत उत्पन्न करके वह इस मानुष्यिक अधिकार का उपहास न करती ।

दूसरी बात यह है कि भारत में लोगों द्वारा प्राप्त सम्मान के अतिरिक्त अन्य कोई सम्मान किसी व्यक्ति की प्राप्ति न रहा होना और उस सम्मान को प्राप्त करने वाले लोगों का अपनी शक्ति के अधिकारों को दे देने का कोई अधिकार नहीं था । यद्यपि उन्होंने किसी एक व्यक्ति से कहा होगा कि हम आपको अपना बुझिया चुनते हैं किन्तु अपने उत्तराधिकारियों के प्रति स्पष्ट रूप से अन्वय देने बिना के वह नहीं कह सकते थे कि आपके बंधन हमारे बंधनों पर तब तक शासन करें क्योंकि वह सम्भव था कि इस प्रकार के मूर्च्छतापूर्ण अन्वयबुद्ध तथा असांस्कृतिक समझौते के कारण उनके बंधन किसी दुष्ट अपना बुद्ध के द्वारा धातित होते । अविनाश बुद्धिमान युवकों ने अपने वैयक्तिक मत के अनुसार मानुष्यिक अधिकार के प्रति विरहकार का भाव प्रकट किया है । फिर भी वह उन युवकों में से है जो एक बार स्थापित हो जाने पर मुनकशापूर्वक दूर नहीं की जा सकती । कुछ मनुष्य तो जब के कारण और दोष अपेक्षाहीन अधिक अलक्षणी लोग राजा के साथ जनता को चुनते हैं ।

राजाओं के मानुष्यिक उत्तराधिकार को मान लेना उनके उद्भव को सम्मानपूर्ण मान लेना हुआ अर्थात् यह अधिक सम्भव है कि यदि हम प्राचीनता के बने आचरण को हटा कर राजाओं के उद्भव की सही बात करें, तो हमें बात होगी कि हमने से सर्वप्रथम व्यक्ति आसुराद्यों के किसी दल के कम बुद्धिवादी अपेक्षा किसी भी रूप में अक्षय न रहा होगा अतः अपने अतिष्ठ

व्यवहार या समझौता में श्रेष्ठ होने के नाते बाकुओं के प्रधान का पद प्राप्त कर लिया और जिसने अपनी बढ़ती हुई शक्ति और ध्रुव के द्वारा, शान्त तथा समुदायित व्यक्तियों को समझौता करके उन्हें प्रायः सुरक्षा-सुस्थि देने को बाध्य किया। फिर भी उसे अपना प्रधान चुनने वालों के मस्तिष्क में उसके बंधनों को आनुवंशिक अधिकार देने का विचार न रहा होगा। क्योंकि इस प्रकार शासक रूप से अपने को अधिकार-बंधित रखना उनके उन स्वतंत्र और अनिश्चित सिद्धांतों के विपरीत था जिन्हें उन्होंने अपने जीवन में स्वीकार किया था। इस कारण से राजतंत्र के प्रारम्भिक युगों में आनुवंशिक उत्तराधिकार आकस्मिक अथवा रिक्त-पूर्ति की स्थिति के अतिरिक्त अधिकार के रूप में स्थापित नहीं हो सकता था। किन्तु चूंकि उन दिनों का कोई ज्ञात प्रमाण नहीं था और परंपरा प्राप्त इतिहास कल्पित-कथाओं से भरा हुआ था इसीलिए कई पीढ़ियों के बाद आनुवंशिक अधिकार के सिद्धांत को असम्यक्त व्यक्तियों के गले के नीचे उतारने के लिए सुविधा एवं समय के अनुकूल अर्थविश्वास की कहानियों को गढ़ सेना अत्यन्त सुव्यवस्थित था। युगों के मध्य निर्वाचन अधिक व्यवस्थित नहीं हो सकता था। कदाचित् इसीलिए एक नेता की मृत्यु के उपरांत अन्य किसीको नेता चुनने के समय होने वाली भावी अव्यवस्था की आशंका ने पहले-बहुत उनमें से बहुतों को उत्तराधिकार का आशय मने की प्रेरणा दी होगी और उस समय जिसे सुविधा के नाते स्वीकार किया गया होगा बाद में उसे अधिकार मान लिया गया।

इंग्लैण्ड में 'विजय' के बाद से कुछ अच्छे राजा हुए। किन्तु संख्या में अपेक्षाकृत अधिक राजाओं से यह देश पीड़ित रहा। कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति यह नहीं कह सकता कि विजयी विलियम (William The Conqueror) के नाम पर राजाओं को अत्यन्त सम्मानपूर्ण अधिकार प्राप्त था। कुछ सदाशिव बाकुओं के साथ आकर इंग्लैण्ड के निवासियों की दृष्टा के विरुद्ध अपने को वहाँ का राजा घोषित करने वाली फ्रांस की एक ज़ार्व संतान स्पष्ट राशों में अत्यन्त दुष्ट तथा दुष्टतापूर्ण मूल है। निश्चित रूप से इस मूल में कोई दिव्यता नहीं है। राजतन्त्रीय आनुवंशिक अधिकार की मूलता के विषय में अब और कुछ कहना व्यर्थ है। इसमें पर भी यदि ऐसे निरंतर व्यक्ति हैं जो इसमें विश्वास करते हैं तो वे सधे और निरक्ष की विधि

जानना तथा उनका स्वागत करें। मैं न तो उनकी हीनता का अनुकरण करने और न उनकी शक्ति में बाधा ही प्रस्तुत करनेवा।

फिर भी मैं उनसे इतना खुश हूँ कि उनकी मान्यता के अनुसार राजाओं का व्यवहार किस प्रकार हुआ? इस प्रश्न के केवल तीन उत्तर हो सकते हैं—अर्थात् राज्य के निर्वाचन के व्यवहार अपहरण से। यदि यही राजा राज्य के सब पर सिद्ध हुआ तो यह एक ऐसा प्रमाण है जिससे आनुवंशिक उत्तराधिकार का निर्वह होता है। साउल (Saul) राज्य से राजा बना किन्तु उसके बंशज उसके उत्तराधिकारी नहीं हुए, और न तो उस समय के प्रमाण से यह कहा सकता है कि वह समय लोगों में आनुवंशिक उत्तराधिकार की इच्छा थी। यदि किसी देश का यही राजा निर्वाचित हुआ या तो यह जर्मियों के लिए भी उसी प्रकार का प्रमाण स्थापित करता है। प्रथम निर्वाचकों ने एक राजा नहीं बल्कि राजाओं के परिवार को चुनकर अपनी सभी पीढ़ियों का अधिकार उस के लिए हीन किया। यह कथन जर्म-जर्मों में उल्लिखित केवल उस प्रारम्भिक नाव-विप्लव सिद्धान्त के समान होता जिसके अनुसार सब अनुज्यों की स्वतन्त्र इच्छा आदम (Adam) की स्वतन्त्र इच्छा के साथ-साथ गई हो गयी। इसके अतिरिक्त इस प्रकार का जर्म कोई सिद्धान्त जर्म-जर्मों में नहीं मिलता। यह भी सत्य है कि इस समानता के होते हुए भी आनुवंशिक उत्तराधिकार की कोई औरत नहीं प्राप्त हो सकती। आदम का पाप सब का पाप माना गया और प्रथम निर्वाचकों का मत सब का मत मान लिया गया। एक के अनुसार मानव जाति संतान के बड़ी-बुन हुई और दूसरे के अनुसार राजा के। पहली दशा में हवाई निर्वाचन गलत हो गयी और दूसरी स्थिति में हमारे अधिकार गलत हो गये। इस प्रकार दोनों सिद्धान्त हम लोगों की अपनी पूर्व रक्षा एवं पूर्व अधिकारों को पुनः प्राप्त करने के चोखे हैं। अतः यह निर्निवार सत्य है कि राजा बना सकता है कि शास्त्रीयक नाव और आनुवंशिक उत्तराधिकार के सिद्धान्त समान हैं। आनुवंशिक उत्तराधिकार की यह उपमा अत्यन्त अपमानपूर्ण एवं कथमास्पद है किन्तु कोई भी व्यक्ति इससे अधिक उन्नत उपमा प्रस्तुत नहीं कर सकता। यहाँ तक अपहरण का प्रश्न है कोई भी व्यक्ति उद्योग सम्पन्न नहीं करेगा और यह विचित्र सत्य है कि जिसने विधिवत ने अपहरण किया था। जल्दी बात यह है कि ईश्वरीय के राज्य का इतिहास अच्छा नहीं रहा है।

मानव-जाति का सम्बन्ध इस आनुवंशिक उत्तराधिकार की मूर्तता से अधिक उसके दोषों से है। इसका द्वार मूर्तों, दृष्टों और अवोम्यों के लिए भी खुला हुआ है। इसलिए इसकी प्रकृति अत्याचारारम्भक है। जो व्यक्ति यह समझते हैं कि वे शासन करने के लिए और अन्य मनुष्य शासित होने के लिए उत्पन्न हुए हैं वे धीरे-धीरे उद्वेग हो जाते हैं। वे मानव-जाति से उत्कृष्ट इन व्यक्तियों के अस्तित्व महत्त्व से विपाक हो जाते हैं और इनका संसार खेप जयत स वस्तुतः इतना भिन्न होता है कि उन्हें इसके वास्तविक द्विती के अवगत होने का अवसर कम प्राप्त होता है। जब वे गद्दी पर बैठते हैं तो राज्य भर में भ्रम सर्वाधिक भ्रमानी और अवोम्य सिद्ध होते हैं।

आनुवंशिक उत्तराधिकार का दूसरा दोष यह है कि इससे अनुसार किसी भी मायु का अवयस्क गद्दी का अधिकारी हो जाता है और राज प्रतिनिधि उसके वयस्क होने के कास तक राजा के नाम पर सारा काम करता है। विश्वासपात करने के लिए उसके सम्मुख सभी प्रकार के अवसर और प्रसन्नता रहते हैं। इसी प्रकार की राष्ट्रीय आपत्ति उस समय उपस्थित होती है जब कि एक राजा मानवीय निवृत्ति की अन्तिम दशा को प्राप्त होता है। उपयुक्त दोनों दशाओं में जनता एक ऐसे बुराया का शिकार होती है जो पुढाबराबा अवस्था संघर्ष की मूर्तता को उपलब्धतापूर्वक दूषित कर सकता है।

आनुवंशिक उत्तराधिकार का अन्तः-युद्ध में विघटन तर्कों में सब से अधिक स्पष्ट प्रतीत होनेवाला तर्क यह प्रस्तुत किया जाता है कि यह राष्ट्र को गृह-युद्ध से बचाता है। यदि यह तर्क सत्य होता तो निश्चित रूप से प्रमाणाती होता। किन्तु वास्तविकता यह है कि यह सच्चेद भ्रूट है। इंग्लैण्ड का सम्पूर्ण इतिहास इसे बखीकार करता है। तीस वयस्क राजाओं और दो अपयस्कों ने इंग्लैण्ड का शासन किया है। इस बीच सन् १५८८ की घाति की मिलाकर, कम-से-कम आठ गृह-युद्ध और उन्नीस विप्लव हुए। इसलिए आनुवंशिक उत्तराधिकार को शांति-स्थापना के जिस आधार पर उचित कहा जाता है वह उससे उस आधार का ही विनाश करते हुए अपने की शांति के लिए अनुपयुक्त सिद्ध करता है। यार्क और संक्रांतापर के पक्षों के राजपदी और उत्तराधिकार-सम्बन्धी संघर्ष ने इंग्लैण्ड में कई वर्षों तक रक्तपात का दृश्य प्रस्तुत किया। साधारण युद्धों तथा बेरों के अतिरिक्त हैनरी और एडवर्ड

के बीच बाह्य समाधान सकारण हुई। जो बात हमारी एजबर्न का और फिर एजबर्न हमारी का समी बनाना। जब जगह का आधार केवल वैयक्तिक स्वार्थ होता है, तो कुछ की गति और बाह्य की प्रकृति अत्यन्त अनिश्चित होती है। हमारी विजयी होकर वास्तव में प्राप्त गमा और एजबर्न शत्रु है विरोध भाव आने की विषय हुआ। किन्तु प्रकृति के सहा पर राज कदाचित् ही स्थायी होते हैं। हमारी भी यही है जगह का और उसके स्वयं पर एजबर्न राज बनाना। संसार बाह्यर अपेक्षाकृत अधिक अस्थिरता की काय होती रही।

बहु जगह हमारी कष्ट के उत्पन्न-काल में आरम्भ हुआ और तब तक पूर्व का है समाप्त नहीं हुआ जब तक दोनों बंधों ने सम्मानित हमारी सत्य स्वीकार न होत। इस प्रकार बहु जगह सन् १४२२ से सन् १४८६ ई. तक काला पड़ा।

उत्पन्न और उत्पन्निकार में केवल किसी एक देश में नहीं बल्कि समस्त विश्व में विनाश की लीला प्रस्तुत की है। ईसाईय कबल हम प्रकार की सरकार के अधिष्ठित है। इसके द्वारा सर्वत्र रक्तपात होता ही रहेगा।

अगर हम राजा के कामों की परीक्षा करें तो हमें पटित होमा कि कुछ देशों में राजाओं की कुछ नहीं करना पड़ता है। उनके द्वारा न तो उन्हें स्वयं कोई मान्य प्राप्त होता है और न संसार को। इस प्रकार स्वयं जीवन बिना कर के एक दिन हम लोक से बिना हो जाते हैं और अपने उत्पन्निकारियों को अपने उसी निष्पक्ष-मन पर चलने को छोड़ जाते हैं। निरंकुश उत्पन्न की वर्तमान जगह वर्तमान सभी बावों का सम्पूर्ण भार राजा पर ही होता है। उत्पन्न के निवासियों ने जब राजा के लिए प्रार्थना की तब उन्होंने पक्षी कहा था कि हमें ऐसा राजा चाहिए, जो हमारा स्वाभ करे और हमारा बचली हो कर सकारण सहे। किन्तु ईसाईय के समान जिन देशों में बहु न तो न्यायाधीश है और न समाधि बहुत उसके काय काम है, ऐसे हम नहीं समझ पाते।

कोई सरकार अत्यन्त के जितने निष्ठ नहीं होती है राजा के काय उठने ही कम होते हैं। इसी प्रकार की सरकार को कोई उपयुक्त नाम देना कुछ कठिन है। सर निमियम मैरिथि 'मे अत्यन्त कहते हैं। किन्तु अपनी वर्तमान स्थिति में बहु 'अत्यन्त' नाम के उपयुक्त नहीं है। इस पर राजा का भट्ट प्रमाण है।

सोगों को पद देने का अधिकार राजा को है। इसके बस पर उसने इतनी प्रभावशाली शक्ति प्राप्त कर ली है और इंग्लैण्ड के संविधान के जनतन्त्रीय बंध को—सोक-समा के गुणों को—उसने इस प्रकार नष्ट कर दिया है कि इंग्लैण्ड में ठीक उसी प्रकार का राजतन्त्र है जिस प्रकार का फ्रांस या स्पेन में।

इंग्लैण्ड के सभी निवासी संविधान के राजतन्त्रीय बंध की नहीं बरन् उसके जनतन्त्रीय बंध—अर्थात् अपने मध्य से सोक-समा के लिए सदस्यों को चुनने की स्वतन्त्रता की प्रशंसा करते हैं। यह स्पष्ट है कि जब इस जनतन्त्रीय बंध के कुछ नष्ट हो जाते हैं तब वास्तविक आरम्भ होती है। इंग्लैण्ड का संविधान इसीलिए दोषपूर्ण है कि 'राजतन्त्र' ने 'जनतन्त्र' को विपाक कर दिया है। राजा ने सोक-समा के सदस्यों को अपने प्रभाव के अन्तर्गत कर लिया है।

इंग्लैण्ड में सड़ाई करने और पद देने के—जो स्पष्ट चर्यों में राष्ट्र को निर्धन बनाना और अपने इच्छानुसार उसकी व्यवस्था करना हुआ—बतिरिक्त राजा और कुछ नहीं करता है। बाँट फाट स्टमिग प्रतिवर्ष प्राप्त करने और साफ-साफ पूजित होने वाले व्यक्ति के लिए ये नाम वास्तव में आर्यपिक सुन्दर हैं। ईश्वर की दृष्टि में और समाज के लिए, इंग्लैण्ड के सभी छुटेरे राजाओं की अपेक्षा एव सब्बे मनुष्य का महत्त्व अधिक है।

अमेरिका की वर्तमान कार्य स्थिति की विवेचना

अगले पृष्ठों में मैं जो कुछ कहूँगा वह सरस तथ्यों स्पष्ट तर्कों और सामान्य बुद्धि के बतिरिक्त और कुछ न होगा। आरम्भ ही में पाठकों से मुझे केवल इतना कहना है कि वे पढ़ापाठ और पूर्वधारणाओं से मुक्त हो जायें अपनी बुद्धि और अनुभूतियों को स्वनिर्णय के लिए छोड़ देने का कष्ट करें। मनुष्य के वास्तविक चरित्र को स्वीकार करें और वर्तमान युग की परिधि से बाहर जाकर उन्मत्तापूर्वक अपने मत का विस्तार करें।

इंग्लैण्ड और अमेरिका के युद्ध के विषय में कई धंय मिले जा चुके हैं। सभी ओरिणों के मनुष्यों ने विभिन्न प्रेरणाओं और अभिप्रायों से इस बाद विवादों में भाग लिया है। किन्तु अब कुछ प्रभावहीन रहा और विवाद का समय समाप्त हो गया। भयंकर का निर्णय करने के लिए अन्त में चर्यों का सहाय लेना पड़ा। इंग्लैण्ड के राजा ने हम सोगों के लिए छत्र उठाने के

मलिकान्त अन्य कोई मार्ग छोड़ नहीं रहा था। अतः इस महाद्वीप ने उसकी पुनर्जीवी स्वीकार की।

कहा जाता है कि जब लोक-सभा में सर्पीय पैरहम का (Mr Pelham), जो होम्स मंत्री होते हुए भी लोगों के मुक्त नहीं थे, विशेष इस बाधपर चर किया गया कि उनकी कार्यवाहियाँ अस्वायी हैं तो उन्होंने उत्तर दिया कि मेरे समय तक वे स्थायी रह्यो। यदि इस प्रकार का प्रत्यु-वाचक और विचलन विचार वर्तमान संवर्ष के कुछ में उपनिवेष्टों में रहा तो बाधायी नीतियाँ अपने पूर्वजों की पुष्टादुर्बल बर करायी।

विश्व में इससे अधिक बीरवपुर्ण व्यवहार कभी भी प्रस्तुत नहीं हुआ था। यह एक मगर, एक ज्ञान्य व्यवसाय एक राज्य का प्रत्यक्ष नहीं है बल्कि इसका सम्पूर्ण निवास-धीन्य गुल्मी के अष्टमांश एक महाद्वीप से है। यह एक पितृ, एक वन का एक पुत्र का कार्य नहीं है, बल्कि सभी नीतियाँ इस संवर्ष के अन्त निष्ठ हैं, और उन पर आज के कार्यों का प्रभाव अल्प या अधिक मात्रा में अनन्त काल तक पड़ेगा। महाद्वीपीय एकता विस्मय और सम्मान के बीच-बचन का यही व्यवहार है। जिस प्रकार विभूत युद्ध के संघर्ष में उसकी नोमल सत्ता पर नुई की नीक से लिखा हुआ था उसकी बुद्धि के साथ-साथ बढ़ता जाता है, वही प्रकार इस समय की अल्प-कालिनी की सभी नीतियाँ विधान रूप में दिव्यनी।

निर्बंध के लिए, तर्क की छोड़कर यद्यपि का आशय सेने के कारण राजनीति का बचीन युग आरम्भ हो गया है। बीचने की एक युगन पद्धति चल रही है। असीम अर्थन के पूर्व की सभी योजनाएँ एवं प्रस्ताव आदि वल वर्य के संभाव के अमान हैं, जो इस समय के लिए अव्युक्त होते हुए भी आज के लिए व्यर्थ हैं। अमेरिका और इंग्लैण्ड के सम्पूर्ण-विषयक प्रत्यक्ष के अन्तर्गत वर्यों में से प्रत्येक के सम्बंधों द्वारा भी कुछ प्रस्तुत किया गया उन सबका पर्यवसान एक ही दिग्गु पर हुआ और वह दिग्गु था—सेट जिन के साथ सम्पूर्ण स्थापित करना। उन समय वर्यों में यदि कोई देश था तो वह सम्पूर्ण को वापसिष्ठ करने की पद्धति के विषय में था। एक वल-प्रयोग का और दृष्टि विवशता का प्रस्ताव कर रहा था। पर जब तक हुआ यह कि पहला पत्र अस्तुत्त हो गया और दूसरे में अपना प्रभाव कम किया।

समाजोत् के साम के धारे में बहुत कुछ कहा जा चुका है और वह मनोरम स्वप्न के समान महान्य हाकर हम लोगों को अपनी व्यवस्थिति में ही छोड़ गया। अब तर्क के दूसरे पक्ष की परीक्षा करनी चाहिए। ग्रेट ब्रिटेन से सम्प्रचित तथा उस पर निर्भर रहने से उपनियोजों की अतिशय भौतिक दक्षियाँ हुई हैं तथा सरब होती रहेंगी उनकी जाँच करना नितांत उपयुक्त है। हमें उस सम्बन्ध और आपसी तथा की परीक्षा प्राकृतिक सिद्धांतों और सामान्य बुद्धि के आधार पर करनी है। हमें देखना है कि यदि हम इंग्लैण्ड से स्वतन्त्र रहते हैं तो हमें किसका विचार करना है और यदि उससे आपीन रहेंगे तो हमें क्या साधना करनी चाहिए।

मेने कुछ लोगों को यह कहते हुए सुना है कि अमेरिका ने ग्रेट ब्रिटेन के साथ अपने पूर्व-सम्बन्ध के अंतर्गत उत्पत्ति की है इसलिए उसके साथी गुप्त के लिए वही सम्बन्ध आवश्यक है। इससे अधिक बोधपूर्ण तक दूसरा नहीं हो सकता। इस तर्क के अनुसार तो यह कहा जा सकता है कि क्योंकि एक विशुद्ध रूप पर बोधित रहा है, इसलिए उसे माँग या भाग पभी नहीं जाना चाहिए। हमारा हमारे जीवन के प्रथम बीस वर्ष अनुयायी बीस वर्षों के लिए प्रमाण स्वरूप है। किन्तु इतना भी मान लेना वास्तविकता से अधिक मान लेता है। मैं स्पष्ट रूप से इस तर्क का उत्तर दे रहा हूँ। यदि यूरोप की किसी भी शक्ति का सम्बन्ध अमेरिका से न रहा होता तो वह इतना ही नहीं बल्कि इससे अधिक उत्पन्न होता। जिस वाणिज्य ने उसे सम्पन्न बनाया है वह जीवन के लिए आवश्यक है और जब तक यूरोप को जीवन की आवश्यकता है तब तक अमेरिका का बाजार बना रहेगा।

कुछ लोगों का कहना है कि इंग्लैण्ड ने हमारी रक्षा की है। मैं इसे स्वीकार करता हूँ कि इंग्लैण्ड ने हमें अपने भीतर रखा लिया है और उता हमारे व्यवहार पर हमारी रक्षा की है। मैं यह भी मानता हूँ कि उसी निमित्त ने अपना व्यापार और साम्राज्य के लिए, वह तुर्किस्तान की रक्षा किए होगा।

युक्त है कि हम लोग न प्राधान्य पूर्वधारणा का न अनुमरण बहुत दूर तक किया और अब विचार के लिए बहुत बड़ा अतिमान किया। हमने ग्रेट ब्रिटेन द्वारा की गयी अमेरिका की सुरक्षा को गौरव प्रदान किया किन्तु यह न तो था कि इंग्लैण्ड ने अमेरिका की सुरक्षा अपने दिल की दृष्टि के की न कि अमेरिका के प्रति स्नेह भाव के कारण। उद्योग हमारे धनुर्ओं से हमारे लिए हमें नहीं

बनाया वरन् अपने धनुषों से और अपने लिए, उन्हें बचाया। उसने हमें का मोर्चों से बचाया जिसका हमसे किसी प्रकार का सम्बन्ध न था और जो उसी प्रकार सर्वत्र हमारे धनु बने रहेंगे। ब्रिटेन इस महाद्वीप पर है अतः अधिकार हुआ যে যা यह महाद्वीप अपनी परतंत्रता की कड़ी छोर फेंके तो ध्वज और स्प्रेट तथा अमेरिका के बीच शान्ति रहेगी भले ही ब्रिटेन से उसकी मदद बनती रहे। हानोवर (Hanover) की अंतिम लड़ाई से हम मोर्चों पर सम्बन्धों के विच्छेद पिला प्रकट करनी चाहिए।

हम ही हैं संसद में यह इच्छापूर्वक स्वीकार किया गया है कि पिट्सबो (सेट ब्रिटेन) के नागरिक के अतिरिक्त उपनिवेशों के बीच कोई पारस्परिक सम्बन्ध नहीं है, अर्थात् पेन्सिलवेनिया (Pennsylvania) जर्सी (Jersey) और इसी प्रकार की सभी उपनिवेश ईंग्लैण्ड के नागरिक से ही सम्बन्धित हैं। निश्चित रूप से सम्बन्ध सिद्ध करने का यह प्रकार अविश्व प्रत्याशान से कम नहीं है। किन्तु मेरा मत है कि धनुष सिद्ध करने का यह उद्देश्य और सम्बन्ध है। धनु और स्प्रेट अमेरिका-निवासियों के न कभी धनु से और न कदाचित् कभी रहे। हमसे उनकी धनुषा केवल सेट ब्रिटेन की प्रथा होने के लिये है।

किन्तु कुछ लोग कहते हैं कि ब्रिटेन हमारा 'मातृ या पितृ-देश' है। यदि ऐसी बात है तो ब्रिटेन का अतिरिक्त अधिक सम्बन्ध है। पटु भी अपनी कन्याओं की नहीं चाहते, बल्कि एवं अल्पमूल्य भी अपने परिवार के साथ पुट नहीं करते। इसलिए यदि उपर्युक्त सम्बन्ध सत्य है तो यह ब्रिटेन के लिए अच्छा की बात है। किन्तु या तो यह सत्य नहीं है और सत्य है तो अल्पमूल्य। तथा तथा उनके नागरिकों ने पोष के उपाय माननी अल्पमूल्य की महात्म्य निर्वमता पर अनुचित प्रयास डालने के अविश्व से 'मातृ-देश' अर्थात् 'मातृ-पितृ-देश' जैसे उम्मीदों को उपर्युक्त पर निर्यात है। ईंग्लैण्ड नहीं वरन् यूरोप अमेरिका का पितृ-देश है। यह नहीं बुनिया यूरोप के प्रत्येक देश से जाने वाले नागरिक एवं शान्ति सम्बन्धता के पीछे प्रमियों के लिए प्रयास रही है। वे यां की कोमल मोड़ में से नहीं वरन् पालन के बचावार् से पीछे होकर बड़ी भागकर जाये हैं, और ईंग्लैण्ड के बारे में बड़ी उच्च सत्य है कि जिस नागरिकों ने सर्वप्रथम कुछ लोगों को देश छोड़कर

विदेश में जाकर बसने के लिए विवश किया व अभी भी उनके वंशजों व पीछा कर रहे हैं।

पृथ्वी के इस विभास काल में हम तीन सी साठ मिल की विस्तार-सीमा (अर्थात् इंग्लैण्ड की विस्तार-सीमा) को भुज जाते हैं और अपेक्षाकृत बड़े परिमाण में मनी स्थापित करने हैं। हम यूरोप के प्रत्येक ईसाई के साथ सम्मुख स्वीकार करते हैं और भावों की उदारता में गौरव का अनुभव करते हैं।

यह जान लेना बड़ा मनोरंजक है कि विश्व के साथ जब हमारा परिचय बढ़ता है, तब हम किस विषयित काल में स्थानीय परापातों या पूर्व पारणामों की प्रभाव-सीमा से बाहर निकलते हैं। मुसलमानों में विमल इंग्लैण्ड के किसी नगर में उत्पन्न व्यक्तिस्वभाव अन्य दोलों के अनुप्राणों के साथ सम्पर्क स्थापित करेगा, क्योंकि कई स्थितियों में उनके हित सनात होये और बहुतायत पड़ोसी कहेगा। यदि वह उस नगर से कुछ ही मील दूर ऐसे किसी पड़ोसी से मिलता है तो सड़क या पानी के सही-एँ विचार को छोड़कर वह उसे अपने नगर का स्थिति करेगा और उनका अनिवार्य करेगा। यदि वह अपने प्रान्त के अतिरिक्त अन्य किसी प्रान्त में उससे मिलता है तो वह 'नगर' या 'सड़क' के दृढ़ अन्तर को धुनकर उसे अपने प्रान्त का निवासी या देशवासी कहकर पुकारेगा। किन्तु यदि वे फ्रांस या यूरोप के किसी अन्य भाग में मिलें तो उनके स्थानगत भेद सुप्त हो जायेंगे, और वे एक दूसरे को इंग्लैण्ड-निवासी के रूप में देखेंगे। ठीक इसी प्रकार अमेरिका में जाकर मिलने वाले सभी यूरोप के अथवा पृथ्वी के अन्य किसी जगह के निवासी एक देश के रहने वाले हैं। जिस प्रकार छोटे परिमाण में सड़क नगर एवं प्रान्त आदि के भेद हैं उसी प्रकार बृहत् परिमाण में सम्पूर्ण के समस्त इंग्लैण्ड हालैण्ड जर्मनी और स्वेडेन आदि का स्थान है। यह भेद महाद्वीपीय स्थिति के लिए अधिक सही-एँ हैं। अमेरिका की सम्मुख प्रमत्तता का और इस पश्चिमोत्तरीय प्रान्त की आबादी का भी दृष्टीगत इंग्लैण्ड की संतान नहीं है। इसलिए केवल जिनको 'मातृ-देश या पिता-देश' कहना भूत स्वार्थपूर्ण सही-एँ एवं अनुसार कथन है और वे इसे अस्वीकार करता है।

किन्तु, यदि यह मान लिया जाय कि हम सब इंग्लैण्ड की संतान हैं तो

रक्ता क्या बर्ब हुआ ? कुछ नहीं। इस समय हुआ घबू होने के कारण ब्रिटेन ने अपने सभी 'आम और पर' बन्द कर दिये हैं और यह कहना नितात्म इसमान्य है कि सम्झौता कर लेना हमारा कर्तव्य है। ईसाईय के राजाओं की सर्वान परम्परा का प्रथम राजा (विजयी विलियम) एक खाँतीली या और ईसाईय के जाने कुलीन ज्ञानी देश के प्रथम है। अस्तु, उन्हें की सभी बहाति के अनुसार ईसाईय की भाँति के द्वारा शासित होना चाहिए।

ईसाईय और उपनिवेशों की संयुक्त शक्ति के बारे में बहुत कुछ कहा जा चुका है। यहाँ तक कहा गया कि सम्मिलित रूप से वे शक्ति विश्व की युद्ध की कुलीनी से लड़ते हैं। किन्तु यह अनुमान गलत है। युद्ध का परिणाम अनिश्चित होता है। ऐसे उद्धारों का कोई अर्थ भी नहीं होता। क्योंकि एशिया, अफ्रीका या यूरोप में दृष्टि देने की सहायता के लिए अपने निवासियों का नाश करना अमेरिका नहीं चाहता।

हमें विश्व को कुलीनी होने की आवश्यकता भी क्या है ? हमारा काम परिलक्ष्य है और यदि इसका सम्बन्ध निम्न हो गया तो इसके द्वारा हमें समस्त यूरोप की सभी और शक्ति प्राप्त हो सकेगी; क्योंकि अमेरिका के साथ स्वतंत्र व्यापार करने में यूरोप के सभी देशों को लाभ है। अमेरिका का व्यापार ही इसकी शक्ति है और जोने तथा बाँटने का न होना आत्मसुकरियों के बचाव है।

सम्झौते के बहुर समर्थकों की मेरी कुलीनी है कि वे ग्रेट-ब्रिटेन से सम्मिलित होने पर इस महादीप को होने वाले एक की लाभ को बतावें; मैं अपनी कुलीनी की दुहाता हूँ। सम्झौते से एक की लाभ नहीं प्राप्त होगा। यूरोप के किसी भी बाजार में हमारे बने बिकने और हम बाँटें नहीं वे लाभ भेजावें इस लक्ष्य मुख्य से लगे हैं।

किन्तु ईसाईय के साथ इस सम्झौते के द्वारा हमारी विजयी शक्तियाँ हुई हैं वे बर्बन्ध हैं। सामान्य रूप से मानव-जाति के प्रति तथा विभिन्न रूप से अपने प्रति हमारा कर्तव्य है वह हमें सब सम्झौते की स्थापना देने की शिक्षा देता है; क्योंकि ब्रिटेन के किसी प्रकार के आप्रवास की स्वीकार करना प्रत्यक्ष रूप से इस महादीप को यूरोप के लड़ाई-जंगलों में लौटा देने की ओर प्रवृत्त करता है। हमारा यह कार्य है उन राष्ट्रों के विरोध में लड़ा कर देना, जो अन्य

स्थिति में हमारी मित्रता के इच्छुक रहते और जिनके प्रति हमें न कोप है, न कोई शिकायत। हमारे बाणिज्य के लिए सारा यूरोप बाजार है। अतः इसके बीच विरोध के साथ हमें कोई पक्षपातपूर्ण सम्बन्ध नहीं स्थापित करना चाहिए। यूरोपीय मण्डलों से मुक्त होकर अपना मार्ग निर्धारित करने में अमेरिका का वास्तविक हित है, और जब तक ब्रिटेन पर अपनी निर्भरता के कारण अमेरिका ब्रिटिश राजनीति की तुला पर संतुलन-वांछित के रूप में है, तब तक ऐसा करना उसके लिए सम्भव नहीं है।

यूरोप इतना घना है कि उसके राज्य अधिक समय तक एग्नितपूर्वक नहीं रह सकते। जब कभी इंग्लैण्ड और अन्य किसी विदेशी शक्ति के बीच युद्ध छिड़ता है तो ब्रिटेन के सम्बन्ध के कारण अमेरिका का व्यापार नष्ट हो जाता है। सम्भव है कि दूसरा युद्ध पहले युद्ध के समान न हो उस स्थिति में समझौते के समर्थक असल हो जाने के लिए इच्छुक होंगे। क्योंकि उस दशा में तटस्थ नीति जहाजी बेड़े से अधिक सुरक्षात्मक होगी। मृतकों के रक्त और प्रकृति क कारण स्वर पुकार-मुकार कर कह रहे हैं कि यह बिप्लेव का समय है। सर्वसम्मतिमान ईश्वर ने अमेरिका को इंग्लैण्ड से जितनी दूरी पर स्थित किया है यह भी इस बात का प्राकृतिक प्रमाण है कि ऐसा करने में प्रभु की इच्छा यह नहीं थी कि एक देश दूसरे पर दासन करे। इसी प्रकार इस महाद्वीप का दम्पत्य-नाम उपर्युक्त तब को बस प्रधान करता है और जिस प्रकार यह महाद्वीप धाबाद हुआ उससे भी इसी का समर्थन होता है। पामिन्-मुपार के पूरु अमेरिका का पता लगा मानों प्रभु ने जूया करके उन पीड़ित लोगों के लिए आभय प्रस्तुत कर दिया जिनको अपना घर न तो मानीपूर्ण रहा और न सुरक्षात्मक।

इस महाद्वीप के ऊपर घट ब्रिटेन का प्रभुत्व एक ऐसी सरकार के रूप में है जिसका अन्त एरून-एक दिन अवश्यम्भावी है। एक विपारतीय एवं अन्धवीर मस्तिष्क यह जानकर कोई आनन्द नहीं प्राप्त कर सकता कि दुःख एवं निदिबत पिन्कास के साथ जिसे वह वर्तमान शविधान पट्टा है यह केवल कम्पायी है। हम यह जानते हैं कि यह सरकार अपने पर्याप्त समय तक रहने वाली नहीं है कि उसके द्वारा हमें ऐसा कुछ प्राप्त हो सके जिसे हम अपनी दुम्पानों के लिए छाड़ आयें। अतः माता पिता के रूप में हमें कोई आनन्द

यही पिप सफ़ा। साधारण-सी बात है कि यदि हम चाबी पीढ़ी के ऊपर
बूझ ना बार बार रहे हैं तो हमें उनके योग्य काम भी करना चाहिए, अन्यथा
हम उनके साथ कुछ एवं बयनीय व्यवहार कर रहे हैं। अपने कठिण-मार्ग को
सीर-सीक निर्धारित करने के लिए हमें अपनी सन्तानों के हित का विचार
करना चाहिए, और जीवन में अपनी कार्य-काल को अवसाहस कुछ और बढ़ो
तक बढ़ा देना चाहिए। ऐसा करने से हमें इस समय का स्पष्ट दर्शन होमेट
जिने कुछ वर्तमान मन और पूर्वधारणाओं में छिपा रखा है।

कठिण में अनावश्यक सोपारोपण करना नहीं चाहता हूँ कि भी कुछ
विचारों को बना है कि कम्युनिस्टों के सिद्धान्त को स्वीकार करने वाली सभी
व्यक्ति बार प्रकार के हो सकते हैं। प्रथम वे स्वामी व्यक्ति जिने पर विचार
यही किया जा सकता। दूसरे वे निम्न नमुना को कुछ सोच-मनन नहीं सकते-
तीसरे वे व्यक्ति जो अपनी पूर्वधारणाओं के कारण विचार ही नहीं करते
और चौथे वे मात्र और समय मार्ग का अवलम्बन करने वाली व्यक्ति है, जो
दुष्टों के बारे में आवश्यकता से अधिक सोचते हैं। वे अंतिम प्रकार के व्यक्ति
बड़े अन्वेषक के कारण इस महर्षि के लिए उपर्युक्त अन्य प्रकार के व्यक्तियों
को अच्छा अधिक अन्वेषक सिद्ध होगी।

बहुतों के लिए यह भाव्य की बात है कि वे कुछपूर्व हर्षों से दूर हैं। उन्हें
इस बात का अनुभव नहीं हो सकता कि अमेरिका की सम्पूर्ण सम्पत्ति किस
निर्दिष्ट एवं मन्दपूर्व स्थिति में है। बिन्सु बोस्टन (Boston) के बारे
में विचार कीजिए। उसकी दुर्रति हमें पता देती कि हम उन सरकार का
परिभाष्य कर हैं जिस पर हमें कोई विचार नहीं है। इस अचाने नगर के
नगरिक कुछ मात्र पूर्व छात्र और समुद्रि का उपयोग कर रहे वे बिन्सु
इस समय पर बैठ कर पूर्ण करने अपना बाहर बाहर पीछ माँपने के अतिरिक्त
अन्य लिए कोई बात नहीं है। यदि वे नगर में रहते हैं तो उनके लिए मिर्ची
के साथ का संघट है और यदि वे नगर को छोड़ते हैं तो तीनको हाथ का
सिने जाते हैं। अपनी वर्तमान स्थिति में वे ऐसे बन्दी हैं जिन्हे प्यार की
कोई ज्ञाना नहीं है। उनकी भुक्ति के लिए जिने यही सार्वजनिक बाजारों के
नगर के दोरी केत्यों के तीव्र बीन के साथ होंगे।

कुछ सद्गुरु महर्षि के व्यक्ति बेट जिन्हे के अपराधों पर उनके हँस से

विचार करते हैं और भविष्य में उससे अच्छे व्यवहारों की आशा करते हैं। ये व्यक्ति उत्तरतापूर्वक कहते हैं कि हम लोग पुनः मित्र के रूप में रहेंगे। किन्तु मानव-जाति के भावों और अनुभूतियों की परीक्षा कीलिए, उनझोटे के सिद्धांत को प्रकृति की कसौटी पर रखिए और फिर यह बतसाइए कि क्या आप, भविष्य में उस शक्ति को प्यार करेंगे और सम्मान देंगे अबवा विश्वास पूर्वक उसकी सेवा करेंगे जिसने आपके देश में बिनाश का हृष्य प्रस्तुत किया है? यदि आप यह सब नहीं कर सकते तो आप अपने को धोखा दे रहे हैं, और विसम्भ करके अपनी संतानों का बिनाश कर रहे हैं। जिसे आप न प्यार करते हैं न सम्मान देते हैं, उस ब्रिटेन के साथ आपका भावी सम्बन्ध बसपूर्वक घोषा हुआ तथा अशांतिग्रस्त होया। कबल वर्तमान मुबिया पर आधारित होने के कारण जोते ही समय में यह अपेक्षाकृत अधिक पुरी स्थिति को प्राप्त होया। किन्तु यदि आप फिर भी कहें कि मैं सम्बन्ध बिच्छोर नहीं करूँगा तो मैं पूछता हूँ कि क्या आपका घर जलाया गया है? क्या आपके सम्पूर्ण आपकी सम्पत्ति नष्ट की गयी है? क्या आपके बाल-बच्चे दाने-दाने को तरसने के लिए बिबल किये गये हैं? क्या आपके माता पिता या बच्चे उन लोगों के द्वारा मारे गये हैं और इस प्रकार पितृष्ट एवं आपदग्रस्त केवल आप बच गये हैं? यदि आप कहते हैं कि 'नहीं' तो आप उन लोगों के ग्वायकर्ता नहीं हैं जिनके ऊपर विपत्ति के बादल पड़े हैं। यदि आपका उत्तर स्वीकारात्मक है और फिर भी आप हथारों के साथ बिलने के लिए उत्तर है तो आप पति, पिता मित्र या प्रमी होने के योग्य नहीं हैं। जीवन में आप चाहें किसी पद पर अबवा किसी बर्ग के हों आपका हृष्य कायर का है और आपरने आत्मा काटुकारों की है।

इस प्रकार की बातें करके मैं न तो विषय को उत्तमना प्रदान कर रहा हूँ, और न उसका वास्तविकता से अधिक वर्णन कर रहा हूँ किन्तु उन अनुभूतियों और स्नह-सम्बन्धों के आधार पर उसकी परीक्षा कर रहा हूँ जिन्हें प्रकृति उपपुस्तक ठहराती है, और जिसके बिना हम सामाजिक जीवन के सर्वश्रेष्ठों के पासन अबवा उसके आनन्द के उदयोप के लिए सर्वथा अधोग्य हैं। प्रतिक्रिया की प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से अब प्रस्तुत करना मेरा अविनाश नहीं है। मैं चाहता हूँ कि हम सब प्राणुमात्रक और पौष्टाहीन मित्रा से साथ साथ

स्वतंत्र पर हमने कुछ इसी प्रकार की बात सोची थी किन्तु एक या दो वर्षों में यह घोषा प्रकट हो गया। क्या हम यह स्वीकार कर सकते हैं कि एक बार का मित्रित राष्ट्र फिर कभी युद्ध नहीं करेगा ?

यहाँ तक सरकार के कार्यों का प्रश्न है ब्रिटेन ने यह भी बात नहीं है कि वह अमेरिका के साथ न्याय करे। अमेरिका के कार्य ही इतने भारी और जटिल होंगे कि हमसे इतनी दूरी पर स्थित एवं हमसे अपरिचित लोगों द्वारा, सामान्य रूप से भी, हमारे कार्यों का प्रबन्ध नहीं हो सकेगा। जिस प्रकार वे हमें जीत नहीं सकते, उसी प्रकार वे हम पर शासन भी नहीं कर सकते। एक संवाद या प्रार्थना-पत्र लेकर तीन या चार सहस्र मील दूर तक दौड़ना उससे के लिए भार या पाँच महीनों तक प्रतीक्षा करना और उत्तर प्राप्त होने पर भी पाँच या छ महीनों तक उसका स्वीकरण होना आदि कार्य कुछ ही वर्षों में पूर्णवापूण माने जायेंगे। एक समय या जबकि यह सब उचित था। अब इसके समाप्त हो जाने का अवसर आ गया है।

बड़े-बड़े साम्राज्यों के अंतर्गत उचित रूप से ये ही द्वीप सम्मिलित किये जाने चाहिये, जो छोटे हैं और अपनी सुरक्षा करने में असमर्थ हैं। किन्तु एक महाद्वीप पर एक द्वीप का दादबत शासन मान सेना महान् मूर्खता है। प्रकृति ने किसी भी स्थिति में अपने भूसमूहों की अपेक्षा उपग्रहों को बड़ा नहीं बनाया है। वहाँ तक आपस के सम्बन्धों का प्रश्न है, इंग्लैण्ड और अमेरिका ने प्रकृति से इस सामान्य क्रम को समझा कर लिया है। यह स्पष्ट है कि वे मित्र-मित्र-व्यतिरिक्तों के हैं। इंग्लैण्ड का सम्बन्ध यूरोप से है और अमेरिका का सम्बन्ध अफ्रीका से।

विश्वेद और स्वतंत्रता के सिद्धान्त को स्वीकार करने में मैं किसी भी मान दत्त अवकाश के द्वारा प्रेरित नहीं हूँ। मेरा अन्तःकरण स्पष्ट एवं निश्चित रूप से यह विश्वास करता है कि इसी में इस महाद्वीप का गणना मिल है। इसका अतिरिक्त अन्य कोई भी कार्य पक्ष बलों को सिमाई द्वारा जोड़ देने के काम के समान ही होगा। उसके द्वारा कोई स्थायी आनन्द नहीं प्राप्त हो सकता। इस प्रकार हम अपने बच्चों के हाथ में तलवार उठाने का कार्य छोड़ रहे हैं और हम उस समय पीछे हट रहे हैं जबकि हमारा घोड़ा-सा प्रयत्न इस महाद्वीप को पृथ्वी पर गौरव प्रदान कर देता।

ब्रिटेन ने समझौते के लिए स्पष्ट रूप से पीछी नहीं इच्छा व्यक्त नहीं की है। इसलिए यह निश्चित है कि समझौते की धारें इस महाद्वीप के स्वीकार करने योग्य नहीं होंगी जबकि हमारे मन और मन की जो कति हुई है, उनके अनुसार हमें इस समझौते के द्वारा कुछ नहीं प्राप्त हो सकता।

साथ ही उसकी प्राप्ति के लिए किये गये व्यय के बीच उचित अनुपात होता चाहिए। हमने जो साक्षों का व्यय किया है उसके सामने 'नाथ' (North) बरत उसके सम्मुख कुत्सास्पद घुट को हटा देने का मुख्य कुछ नहीं है। कुछ अनेकीय बर्तनियों (Acts) को रद्द करना ही मध्य रखा होता तो उसके बिना केवल व्यापार को अस्वाभाविक रूप से रद्द कर देना पर्याप्त था किन्तु केवल कुत्सास्पद बर्तनियों के बिना सारे महाद्वीप का धमका उठा लेना अत्यंत व्यक्ति का होना ही बन जाना अवाचित ही उचित कहा जाय। यदि हमने अब तक जो संभव किया है वह केवल कुछ बर्तनियों को रद्द करने के लिए ही तो निश्चित रूप से यह सही नहीं है। जिस प्रकार मैंने यह बराबर सोचा है कि इस महाद्वीप का स्वतंत्र होना एक ऐसी घटना है जो निश्चित या दूर भविष्य में होकर ही खोती तभी प्रकार मैं यह भी मानता हूँ कि अमेरिका इस तीव्र गति के साथ परिपक्वता की ओर बढ़कर ही रहा है कि वह घटना हुआ नहीं हो सकती। इसलिए समझौते के आरम्भ-काल में इस विषय पर अपना करना अनुरोध नहीं था जिसे अन्त में समय स्वयं ठीक कर देगा। जो काम स्वयं होने वाला है उसके लिए अपना बड़ा संघर्ष करना बुद्धिमायी की बात नहीं है। १६ मई १८७५ ई. के पूर्व तक मुझे अधिक कोई व्यक्ति समझौते के लिए इच्छुक नहीं था। किन्तु, जिस द्वारा यह प्रास्ताविक दिन की घटना प्रकाश में आयी, मैंने उस कठोर तथा हठी प्रवृत्ति वाले ईसाई के धमका को मध्य के लिए सम्पीकार कर दिया। मैं उस घुट का विरसकार करता हूँ जो मध्य के सिद्धा की धमकपूर्ण परवी के साथ जनता की हत्याओं की निर्दयता में गुन लेता है और उसके रक्त से अरबी मातृका को मुगुष्ट करते गालिबुर्द को करता है।

हिन्दु मान लीजिए समझौता हो गया फिर क्या होगा? उत्तर दे देता हूँ— महाद्वीप का विनाश। विनाशकारी कार्यों के मन पर मैं ऐसा कह रहा हूँ। भारत के अधिकार राजा के हाथ में रहने और उसे इस महाद्वीप के विनाश-

मण्डल के ऊपर नियमाधिकार प्राप्त होगा। आज उसने अपने को स्वतंत्रता का चिर-समृद्धि दिया है और निरंकुश अधिकार की अत्यधिक सिप्पा का प्रयोजन किया है। तो क्या आप समझते हैं कि वह उपनिवेशों से यह नहीं कह सकता कि तुम सोच कोई ऐसा कानून नहीं बना सकते जिसे मैं स्वीकार न करूँ ?

क्या अमेरिका का कोई निवासी ऐसा है जो इतना भी नहीं जानता कि जिसे हम वर्तमान संविधान कहते हैं उसके अनुसार यह महाद्वीप राजा की स्वीकृति के बिना कोई नियम नहीं बना सकता ? अथवा क्या कोई व्यक्ति इतना मूर्ख है कि यहाँ अब तक जो कुछ हुआ है उसे ध्यानों में रखते हुए वह इतना भी नहीं समझ सकता कि राजा ऐसे किसी नियम को नहीं बनाने देगा जिससे उसका अभिप्राय न सचे। अमेरिका में नियमों के अभाव के कारण हुए जितनी सफलता के साथ दास बनाये जा सकते हैं इंग्लैण्ड में बने हुए नियमों की स्वीकार करके भी हम उसी रूप में दास बनाये जा सकते हैं। समझीता हो जाने के बाद क्या इस बात में संका है कि राजा अपनी सम्पूर्ण शक्ति के साथ इस महाद्वीप को व्यापक शक्ति और शीघ्र बनाने में प्रयत्नशील न होगा ? उपनिवेश के बदले हमारी सहायता होगी। हम बराबर झगड़ा करते रहेंगे अथवा प्रार्थना करते रहेंगे। राजा हम लोगों को जितना बड़ा बनाने की इच्छा करता है हम सोच उसमें बड़ हैं। क्या अब से वह हम लोगों को छोटा बनाने का प्रयत्न नहीं करेगा ? सी बात की एक बात जिसे हमारी उपनिवेश से ईर्ष्या है उस शक्ति को क्या हम पर शासन करना चाहिए ? इस प्रश्न के उत्तर में जो कहना है— नहीं वह वास्तव में स्वतन्त्र है क्योंकि स्वतन्त्रता का अर्थ इसमें अधिक क्या हो सकता है कि अपने नियम हम स्वयं बनायें न कि हम महाद्वीप का सबसे बड़ा राजा हम लोगों से बड़े कि मेरी इच्छा के अतिरिक्त दूसरा कोई नियम नहीं होगा। कहा जा सकता है कि इंग्लैण्ड में भी राजा को नियमाधिकार प्राप्त है। वहाँ की जनता उसकी स्वीकृति के बिना नियम नहीं बना सकती। अधिकार और धनशक्ति के सम्बन्ध में यह निराला हास्यास्पद है कि इन्हीं वर्षों में पुनः अपने से कुछमान और यथोचित लोगों मनुष्यों से बड़े (ऐसा कई बार हुआ भी है) कि तुम अमुक नियम नहीं बना सकते। यद्यपि मैं इसकी मूर्खता का प्रभावान निश्चय करता रहूँगा किन्तु इस स्थिति पर मैं इस प्रकार का उत्तर न देकर केवल इतना कहना

प्युता है कि इनमें से तो राजा की निवास-भूमि है वर अमेरिका नहीं। अतः ऐसी ही स्थिति विद्यमान है। राजा के निवेशाधिकार इंग्लैण्ड की अपेक्षा अमेरिका के लिए इस बुने प्रधानक और प्राथमिक है क्योंकि वह किसी ऐसे विरोध (Bill) को अस्वीकृत नहीं करेगा जिसके कारण सुरक्षा की दृष्टि से राजा की स्थिति अपेक्षाकृत अधिक पुष्ट हो। अमेरिका में इस प्रकार के प्रस्ताव को वह स्वीकार नहीं करेगा।

द्विज की राजनैतिक व्यवस्था में अमेरिका का स्थान केवल बीच है। इंग्लैण्ड इस देश का हित अपना ही लीजता है जिससे वे उसका अधिकार सिद्ध होता है। इसलिए जहाँ कहीं हमारी प्रवृत्ति से उसके हितों की टूटि नहीं होती, वहाँ जहाँ कहीं हमारी प्रवृत्ति उसकी स्वार्थ-सिद्धि में लौड़ी भी बाना पहुँचायी है, वहाँ उसका स्वार्थ उसे हमारी प्रवृत्ति की रोकने के लिए प्रति करता है। वह तक जो कुछ हुआ है उससे यह स्पष्ट है कि इस प्राचीन सरकार के अंतर्गत यौग ही यह देश एक सामान्य राज्य बन जायगा। नाम-परिवर्तन से यन्त्र नियम नहीं बन जाते। यह बताने के लिए कि इस समय समझौते का सिद्धान्त किन्ना प्रधान है, मैं पूर्ण विश्वास के साथ कहता हूँ कि अमेरिका के इन प्रान्तों के धारण हैं अपने को पुनः स्थापित करने तथा अधिक एवं हिमा के हाथ छोड़ने समय में जो कार्य वह नहीं कर सकता उसे मूल्य बुद्धि द्वारा पूरा करने के लिए कुछ नियमों को बन कर देना राजा की नीति होगी। समझौता और विनाश प्रायः वस्तर सम्यक् है।

इस समय समझौते द्वारा जो कुछ सुधारणम जन प्राप्त होता वह मात्र बसपायी योजना होगी जबकि सरकार के मन में एक ऐसी सरकार होगी जो उद्योगियों के शोध होने तक ही दिखेगी। इसलिए इस कामगारों में यन्त्रों की स्थिति और स्वल्प सामान्यतः अनिश्चित एवं अनुमान रहने। विशेष से जाने वाले अल्पम व्यक्ति ऐसे किसी देश में बसना नहीं चाहेंगे जिसकी सरकार का स्वल्प अनिश्चित है तथा जो प्रत्येक दिन विचार एवं व्यवस्था की ओर मुड़ता ना रहा है। दूसरी ओर, यहाँ के वर्तमान विवादी इस व्यवस्था का उद्योग बननी सम्पत्ति को देखने तथा इस महादीन को छोड़ने में करे।

विन्नु अपने अधिक छोड़ तक वह है कि केवल स्वातंत्र्य अधिक सरकार का महादीन स्वल्प, ही धार्मिक स्थापित कर सकता है और यह-मुहों के

मन्त्रम के ऊपर नियमाधिकार प्राप्त होगा। आज उसमें अपने को स्वतंत्रता का धिर-शामू सिद्ध किया है और निरंकुश अधिकार की अत्यधिक सिन्ना का प्रदर्शन किया है। तो क्या आप समझते हैं कि वह उपनिवेशों से यह नहीं वह सकता कि तुम सोच कोई ऐसा कानून नहीं बना सकते जिसे मैं स्वीकार न करूँ ?

क्या अमेरिका का कोई निवासी ऐसा है जो इतना भी नहीं जानता कि जिसे हम वर्तमान संविधान कहते हैं उसके अनुसार वह महाद्वीप राजा की स्वीकृति के बिना कोई नियम नहीं बना सकता ? अथवा क्या कोई व्यक्ति इतना मूर्ख है कि यहाँ अब तक जो कुछ हुआ है उसे ध्यान में रखते हुए वह इतना भी नहीं समझ सकता कि राजा ऐसे किसी नियम को नहीं बनाने दया जिसे उसका अभिप्राय न रहे। अमेरिका में नियमों के अभाव के कारण हम जितनी सफलता के साथ वास बनाये जा सकते हैं। ईंग्लैण्ड में बने हुए नियमों को स्वीकार करके भी हम उसी रूप में वास बनाये जा सकते हैं। समझौता ही जाने के बाद क्या इस बात में शंका है कि राजा अपनी सम्पूर्ण शक्ति के साथ इस महाद्वीप को यथासम्भव सुदृढ़ और शीन बनाने में प्रयत्नशील न होया ? उपरति के बदले हमारी अनुरक्ति होगी। हम बराबर भगड़ा करते रहेंगे जबका प्रार्थना करते रहेंगे। राजा हम लोगों को जितना बड़ा बनाने की इच्छा करता है हम सोच उसमें बड़ हैं। क्या अब से वह हम लोगों को छोटा बनाने का प्रयत्न नहीं करेगा ? सी बात की एक बात जिसे हमारी उपरति से ईर्ष्या है उस व्यक्ति को क्या हम पर शासन करना चाहिए ? इस प्रश्न के उत्तर में जो कहना है—“नहीं” यह वास्तव में स्वतन्त्र है क्योंकि स्वतन्त्रता का अर्थ इसमें अधिक क्या हो सकता है कि अपने नियम हम स्वयं बनायें न कि इस महाद्वीप का सबसे बड़ा राजा हम लोगों से बड़े कि मेरी इच्छा के अतिरिक्त दूसरा कोई नियम नहीं होगा। कहा जा सकता है कि ईंग्लैण्ड में भी राजा को नियमाधिकार प्राप्त है। बहो की जनता उसकी स्वीकृति के बिना नियम नहीं बना सकती। अधिकार और व्यवस्था के सम्बन्ध में यह निताग्र हास्यास्पद है कि इन्हीं वर्षों में मुझ अपने से बुद्धिमान और बयोवृद्ध सासों मनुष्यों से कहे (ऐसा कई बार हुआ भी है) कि तुम कब तक नियम नहीं बना सकते। यद्यपि मैं इसकी मूर्खता का प्रकाशन निरन्तर करता रहा; किन्तु इस स्थिति पर मैं इस प्रकार का उत्तर न देकर बस इतना कहना

पूरे बाल्गन विही प्रकार का प्रसोमन नहीं उत्पन्न करती। यूरोप के मजदूर देश धार्मिक है और रहिये। हालाँकि और स्वीडिशलीय दुष्ट तथा मिष्टी हर प्रकार के दुष्टों से मुक्त है। राजस्थानीय देश अधिक दिनों तक धार्मिक नहीं रह सकते। स्वयं राजमुकुट देश के ग्राह्यी सुष्टों के लिए एकदम है। राजाओं के लिए कहकर अधिकतर तथा हठ धीरे-धीरे होने का मने है कि विदेशी-राष्ट्रियों के साथ उनका सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है किन्तु यदि उनके स्वातंत्र्य, उनकी बरेहा अधिक आधुनिक विचारों पर लगीत राजस्थानीय सरकारें हों तो वे उस दूध को मुबार करती हैं।

यदि स्वतंत्रता से होने का कोई वास्तविक कारण है तो वह यह है कि वह एक कोई योजना निर्धारित नहीं हो रही है। मनुष्यों को अपना मन बतल नहीं है। जन्म उस जिज्ञा में आर्थिक प्रयत्न-सम्बन्ध में निर्धारित नहीं प्रस्तुत कर रहा है और इसी समय बड़ी मात्रा के साथ रहना वह देश चाहता है कि इन संकेतों के बारे में स्वयं देश ही मद्र है कि वे किसी मुरखन योजना को बन्ध देने के लिए साधन मात्र है, इसके अधिक कुछ नहीं। यदि हमी व्यक्तियों के सम्बन्धित विचारों का संवहन किया जान तो बुद्धिमान और योग्य व्यक्ति उन्हें मुबार कर लायक बना सकते हैं।

यदि मैं एक बार, केवल एक प्रेसीडेन्ट की अध्यक्षता में मजदूर हों। प्रतिनिधित्व बरेहाइय अधिक समान रूप से हों और उन समानों के साथ पूरक बरेहाइय मजदूरों के आधीन हों।

प्रत्येक उपनिवेश का एक बाठ का वह मुखियाजनक वित्तों में विद्यमान कर दिया जाय। प्रत्येक विद्या प्रतिनिधियों की सचिव संस्था बरेहाइय में रहे, विभिन्न प्रत्येक उपनिवेश कम-से-कम तीन प्रतिनिधि रहे। बरेहाइय के मजदूरों की पूरी सच्चा कम-से-कम है। होती। प्रत्येक बरेहाइय बरेहाइय प्रेसीडेन्ट निर्धारित करती है बुने। अब एक प्रतिनिधि मिलें तो बिट्टी दातकर कम्पुटें तरह बरेहाइयों में से एक को चुन लें। इसके बाद जब उपनिवेश को बरेहाइय हाथ उस निर्धारित उपनिवेश के प्रतिनिधियों में से एक प्रेसीडेन्ट चुने। दूसरी बरेहाइय में बहमी बार विद्या उपनिवेश के प्रेसीडेन्ट चुना गया था इसे प्रेसीडेन्ट देव बाध में से बिट्टी दातकर एक को चुना जाय और फिर यह कम एक एक बनता रहे, अब एक ठेकें उपनिवेशों की बारे में

इसकी रक्षा कर सकता है। मैं इस समय ब्रिटेन के साथ सम्झौते से डरता हूँ क्योंकि इस बात की अधिक सम्भावना है कि सम्झौते के बाद कहीं-न-कहीं ऐसा विद्रोह होना जिसके परिणाम ब्रिटेन के हित की अपेक्षा कहीं अधिक प्राण प्राणक होंगे।

ब्रिटेन की कूरता से सहजों मर हो चुके हैं (और इसी प्रकार कदाचित् सहजों मर होंगे)। उनकी अनुभूतियाँ हमारी अनुभूतियों से भिन्न हैं क्योंकि हम सोच उनके समान पीड़ित नहीं हुए हैं। इस समय उनके पास सम्पत्ति के रूप में यदि कुछ है तो वह स्वतन्त्रता है। पहले उनके पास जो कुछ था वह उसी स्वतन्त्रता की सेवा में खर्च गया। अब खोने के लिए उनके पास कुछ नहीं है। अब वे आधीनता का तिरस्कार करते हैं। इसके अतिरिक्त ब्रिटिश सरकार के प्रति उपनिवेशों की सामान्य प्रवृत्ति ठीक उस मुयक की प्रवृत्ति के समान होगी जो प्रायः अपने युग के अनुकूल नहीं है। वे इंग्लैण्ड की बहुत कम परवाह करेंगे। जो सरकार शक्ति रक्षा नहीं कर सकती वह अस्तुतः सरकार नहीं है और उस स्थिति में हम उसका भार-बहन ध्येय ही करते हैं। ब्रिटेन की शक्ति पूर्णतः नाशों पर निर्भर है। अब यदि सम्झौते के दूसरे दिन ही देश में विप्लव मच जाए, तो ब्रिटेन क्या कर सकता है? बिना सोचे-विचारे कुछ व्यक्ति कहते हैं कि स्वतन्त्र हो जाने पर गृह-युद्ध की सम्भावना है, इसलिए स्वतन्त्रता भयवर्धक है। हमारे प्रथम विचार कदाचित् ही सही होते हैं। इन व्यक्तियों के विषय में भी यही बात चरितार्थ होती है। स्वतन्त्रता की अपेक्षा सम्झौते से दसगुना भय है। मैं पीड़ितों की स्थिति को अपनी स्थिति मानता हूँ और इच्छा के साथ कहता हूँ कि यदि मुझे पर से निकास दिया गया होता या पावों का अनुभव करने वाला अनुभव होने के नाते, मैं सम्झौते के विरोध का कदापि नहीं चाहता और अपन जो उससे बंधा हुआ नहीं मानता।

उपनिवेशों ने महाद्वीपीय सरकार के प्रति आक्रामकता और गुस्से की भावना का ऐसा प्रवर्धन किया है कि अत्यधिक विचारशील व्यक्ति को उदात्त कारण प्रसन्नता होगी। इसलिए यदि कोई व्यक्ति स्वतन्त्रता से भयभीत होने का अस्य कारण निर्दिष्ट करता है अर्थात् यह कहता है कि स्वतन्त्रता की प्राप्ति पर एक उपनिवेश दूसरे से भेद्य होने का प्रयत्न करेगा तो यह उपाय केवल यथार्थ होना। जहाँ कोई भेद नहीं है वहाँ कोई भेद्य नहीं हो सकती।

एक अत्युत्तम वरिष्ठ ब्रह्म कर भी चाय। इस शासन-यंत्र के अनुसार चुने दिये गये कुछ काल के लिए इस महाद्वीप के विधायक और शासक होंगे। ईश्वर इस प्रकार की व्यवस्थावाली महाद्वीप की शान्ति और उसके आनन्द की रक्षा करे। तथाम्।

अबिय में इस तथा ऐसे कामों के लिए जिससे लोप प्रतिनिधि स्वयं निर्वाचित हों, उनके लिए वे राजनीतिवेत्ता डीगोनेट (Diagonetti) के निर्वाचित विचार प्रस्तुत कर रहा हूँ। 'राजनीतिज्ञों का विज्ञान मूल और स्वतन्त्रता की वास्तविक स्थिति निर्दिष्ट करने में है। जो व्यक्ति सरकार की ऐसी वृत्ति को निकाले जिससे मूलतः राष्ट्रीय व्यवस्था पर सर्वाधिक वैयक्तिक आनन्द की प्राप्ति हो उसके वे मूर्खों की कृतज्ञता के पात्र होंगे।

कुछ लोग कहते हैं कि अमेरिका में राजा नहीं है ? वे कहता हूँ कि वह स्वयं के शासन करता है और डिटेन के ईश्वरी राजा के समान मानव-जाति का विचार नहीं करता। फिर जो नीतिक सम्मान में भी इन लोग कम न हों इसलिए वह शासन-यंत्र की व्यवस्था के लिए एक बहिष्कृत दिन निर्दिष्ट करे। वह दिन ईश्वरी नियम पर आधारित उस शासन-यंत्र की लाया जाय और वह पर एक मुद्रा का काम ताकि साफ बिसर वह बात से कि वहाँ तक पात्रण विषयक हुमायी नामकता है, अमेरिका में नियम राजा है। निर्दुष्ट राजा में राजा नियम होता है, इसलिए स्वतन्त्र देशों में नियम की राजा होना चाहिए। वहाँ किसी दूसरे राजा की आवश्यकता नहीं है। किन्तु, इस विचार के कि अबिय में उस मुद्रा का किसी प्रकार का दुष्प्रयोग न होने लगे राजा के अन्त में मुद्रा को छोड़कर उस बात से विचार दिया जाय जिसके अन्त का वह अतीत है।

हुमायी निजी सरकार हुमायी प्राकृतिक अधिकार है। यदि कोई मनुष्य मानवीय व्यवहारों की अनिश्चितता पर सम्भीरतापूर्वक विचार करे, तो वह इस बात को अवश्य स्वीकार करेगा कि ऐसे महारणपूर्व कार्य को समझ और व्यवहार के द्वारा न छोड़कर यदि इन बातें सम्पन्न कर लयते हैं तो साथ ही विचारपूर्व वृत्ति के अपना अधिकार बना लेना अत्यधिक बुद्धिमत्तापूर्ण एवं सुरक्षित कार्य होगा। यदि हम इस समय इस कार्य को छोड़ देंगे तो सम्भव है कि बाद में कोई मैसालो (Massanello) नामक व्यक्ति से नाम

न हो जाय । इसलिये कि कोई ऐसा नियम न बन जो साधारणतः उचित न हो, कांग्रेस के तीन संघर्षों का बहुमत माना जाय । इस प्रकार की समझौता पर प्रतिष्ठित सरकार के अस्तित्व को कोई कसह को प्रोत्साहन देगा उसके समान दुष्ट व्यक्ति अन्य कोई न होगा ।

किन्तु जिसके द्वारा और किस प्रकार इसका आरम्भ हो वह प्रश्न बोझ देता है । सर्वाधिक मान्य और संगत बात यह है कि शासन करने वालों और खासित होने वालों अर्थात् कांग्रेस और जनता के बीच सम्बन्ध के रूप में किसी समा द्वारा इस कार्य का सम्पादन हो । इसलिये एक महाद्वीपीय पत्रिका निम्नांकित पद्धति और अभिप्राय स सुझायी जाय ।

उपर्युक्त सम्मेलन में कांग्रेस के छद्मसदस्यों की समिति (अर्थात् प्रत्येक उपनिवेश से दो सदस्य) प्रांतीय समा या प्रांतीय परिषद् से दो सदस्य तथा क्षेत्र साधारण जनता से पाँच प्रतिनिधि भाग लें जिनका निर्वाचन प्रत्येक प्रांत की राजधानी या उसके किसी नगर में प्रांत के लिए या उसकी ओर से चुनाव कार्य के निमित्त प्रांत भर के सभी भागों से पचाससम्व संख्या में जाये हुए योग्य निर्वाचकों के द्वारा हों । यदि अधिक सुविधा हो तो उस प्रांत के सर्वाधिक जनसंख्या वाले भागों से ये प्रतिनिधि निर्वाचित हों । इस सम्मेलन में कार्य के दो बड़े विद्यमान अर्थात् ज्ञान और दक्षिण का सम्बन्ध होगा । कांग्रेस और प्रांतीय समा के सदस्यों को राष्ट्रीय कार्यों का अनुभव प्राप्त होगा इसलिए वे योग्य एवं उपयोगी परामर्श दे सकेंगे । सम्पूर्ण सम्मेलन को जनता दक्षिण प्रदान करेगी अतः उसे वास्तविक एवं बंध अधिकार प्राप्त होंगे ।

परिषद् के ये सदस्य एक महाद्वीपीय अथवा संयुक्त उपनिवेशों का शासन पत्र तैयार करें । उस शासन-पत्र के द्वारा वे कांग्रेस तथा प्रांतीय समा के सदस्यों की संख्या और उनके निर्वाचन की पद्धति तथा उसके आरम्भ की तिथि निर्धारित करें और उनके कार्यों तथा अधिकारों की मर्यादा स्पष्ट करें । वे इस बात का बराबर ध्यान रखें कि हमारी पत्रिका महाद्वीपीय है न कि प्रांतीय । वे सभी की स्वाधीनता एवं संपत्ति की सुरक्षा और सबसे बढ़कर अन्तःकरण की प्रेरणा के अनुसार वर्गशासन-विषयक स्वतंत्रता की सुरक्षा की व्यवस्था करें । इन उपर्युक्त बातों के अतिरिक्त उस शासन-पत्र में और जो आवश्यक समझ जाय उस सबका समावेश हो । इसके पीछे

जिन्हें प्रकृति क्षमा नहीं कर सकती। यदि वह क्षमा कर दे तो फिर वह प्रकृति नहीं रह जायगी। क्या प्रेमी अपनी प्रेमिका के साथ बसात्कार करने वाले व्यक्ति को क्षमा कर सकता है? उसी प्रकार क्या अमेरिका अपने हत्यारे की क्षमा करे? उस सभ्यसंस्थान ने सभ्यस्य के निमित्त हत्यारे भीतर मत्स्य अनुभूतियों का कोश बिह्वित कर रखा है। अनुभूतियाँ उस मनु की प्रतिमा का संस्कार करती हैं, वे हमें सामान्य जीव की कोमि से मत्स्य करती हैं। यदि हम अपने ज़ेदर हों कि हम पर स्नेह-स्पर्शों का प्रभाव न पड़ता तो हमारे सम्बन्ध टूट जाते और म्याम दुष्मी पर से समुप्त नष्ट हो जाता जबकि उसका बलिदान आत्मिक होता। हमारी प्रकृति के साथ यदि व्याम करने के लिए हमें उत्तेजित न करें तो सुठेरे और हत्यारे प्राण-बन्ध से बच जायें।

जो लोग मानव-जाति की प्यार करते हैं, जो न केवल मत्स्यार बल्क बसात्कारी का साहचर्यक विरोध करते हैं, वे लोग तैयार हो जायें। प्राचीन विश्व का प्रत्येक स्वतन्त्र आत्मधार से पीड़ित है। बसुधा के बल पर सर्वत्र स्वतन्त्रता का पीछा हुआ है। एशिया और अफ्रीका ने बहुत पहले उसे बहिष्कृत कर दिया है। यूरोप उसके साथ अपरिचितों—बैसा व्यवहार कर रहा है और ईसायत ने उसे जैसे बाले के लिए आदेश दिया है। आज लोग उस घराबारी का स्वागत कीजिए और अनुकूल अवसर पर मानवता के लिए प्रभव का निर्वात कीजिए।

अमेरिका की वर्तमान योग्यता तथा कुछ विविध बिस्वार

इससे पहले और अमेरिका ने कुछे कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिला जिसने वह स्वीकार न किया हो कि इन देशों का सम्बन्ध-विच्छेद एक-न-एक दिन अवश्य होगा। स्वतन्त्रता के लिए अमेरिका की उपयुक्तता और प्रीकृता का दिक्कत करने के प्रयत्न में हम जिन्हे कम ग्यापशील रहे हैं, उन्हीं किन्ही साथ अवसर पर नहीं रहे।

उन्हीं अनुप्य सम्बन्ध-विच्छेद की स्वीकार करते हैं, और केवल समय के विषय में हमके मत भिन्न है। अतः प्रभ-निवारण के विधित्त हम विषय का सामान्य निरीक्षण करें और यदि हो सके तो उपयुक्त समय का निरूपण करें। किन्तु हमें अधिक दूर जाने की आवश्यकता नहीं—निरीक्षण मुरा समाप्त हो

उत्तर कर कुछ निराश तथा असंतुष्ट व्यक्तियों को एकत्रित कर से और पासन गूँथ अपने हाथों में सीते हुए बाढ़ के समान महाद्वीप की स्वतन्त्रता को बहा से जाय। (टाम अनेलो (Anello) या मैसेनेलो (Massenello) नेपुल्स का एक मन्त्रिवा था। उस समय नेपुल्स स्पेन के अधीन था। उसने स्पेन के व्यापारियों के विरुद्ध अपने देश की अगता को नगर-धोराहे पर उत्तजना देकर विद्रोह करने के लिए प्रोत्साहित किया और एक दिन में वह स्वयं राजा बन बैठा।) यदि अमेरिका पुनः ब्रिटेन के अधीन रहे तो उसकी राजधानी स्थिति एक अति साहसी व्यक्ति को अपना भाग्य आजमाने का प्रसन्न होगी। ऐसी स्थिति में ब्रिटेन क्या सहायता कर सकता है? इसके पूर्व कि वह इस समाचार से अवगत हो सारा प्राणघातक काय सम्पन्न हो जायगा और हम लोग उसी प्रकार पीड़ित होंगे जिस प्रकार ब्रिटन के दोन मिचासी बिजली बिलियम के व्यापार से पीड़ित थे। जो लोग इस समय स्वतन्त्रता का विरोध करते हैं वे यह नहीं जानते कि हम क्या कर रहे हैं। सरकार के स्वान को रिक्त रखकर वे लोग शास्त्रत व्यापार को मार्ग दे रहे हैं। साधों-करोड़ों व्यक्ति यह सोचते हैं कि इस पर्वर और भारतीय शक्ति को इस महाद्वीप से समाप्त कर देना योत्वास्पद है जिसने रेड इन्डियनों तथा हबेरियों को हमारे विनाश के लिए उत्तजित किया है।

हमारी बुद्धि जिनपर धड़ा करने से एवं रोकाती है और सदृशों पावों से दाव-विद्यत हमारे स्नेह जिनका विरस्कार करने की विद्या देते हैं उनके साथ मन्त्री करने की बात पागसपन और मूर्खता नहीं तो और क्या है? प्रत्येक दिन हमारे और उनके बीच सम्बन्धों को धीरे बनाता जा रहा है तो क्या इस आशा का कोई कारण हो सकता है कि क्योंकि हमारे सम्बन्ध समाप्त हो रहे हैं इसलिए स्नेह बढ़ेगा या जब हमारे पास मगड़े के कई गुने अधिक कारण रहेंगे तो हमसे पहले की अपेक्षा अधिक सुन्दर सम्झौता हो सकेगा।

फिर भी जो लोग अनुकूलता और सम्झौते की बात करते हैं क्या वे लोग अज्ञेय को सोटा सकते हैं? क्या वे लोग बे-या-जीवन को उमरी पूर्व निर्दोषता सोटा सकते हैं? नहीं बस उसी प्रकार, वे लोग दमस्त और अमेरिका में समझौता भी नहीं करा सकते। अंतिम सम्बन्ध-भूत भी इस बार टूट गया है। इंग्लैण्ड के लोग हम लोगों के विरुद्ध व्यापार दे रहे हैं। कुछ पाव ऐसे होने हैं

की हल नाहीं व्यय करें तो वह अनुपयुक्त है। एक प्रकार हल आत्मा की पीढ़ी के साथ निरवस्था का व्यवहार करेंगे क्योंकि हल इस महान् कार्य को उनके लिए छोड़ देने की रकबे सर पर आलस का एक ऐसा बार लाय देने बिना के स्वयं की ही हित न होया। ऐसा विचार किसी संभ्रान्त व्यक्ति के अनुपयुक्त है। अस्तव में यह संकीर्ण हलव वाली और सुन्दर राखनीयों का लक्षण है।

किसी पद को बिना हल के नहीं खाना चाहिए। राष्ट्रीय हल राष्ट्रीय लक्षण है, और यदि किसी लुप्त का है तो वह किसी भी रूप में कष्ट का कारण नहीं हो सकता। विशेष पर २४ ० स्तम्भ हल है जिसके लिए उसे बार लाल के अधिक मुर देना पड़ता है। अब हल की व्यक्ति-वृत्ति के रूप में इसके लाल व्यक्तिवादी कहा है। अमेरिका पर कोई हल नहीं है और न उसके पास कोई कहाती है। किन्तु इसलोक के राष्ट्रीय हल के बीचों बीच के हाथ वह उसके पीछा ही कहाती है निमित्त कर सकता है। इसलोक का कहाती है तीन लाल स्तम्भ से अधिक मूल्य का नहीं है।

इस प्रकार के लक्षण और द्वितीय संकेतों में दिव्यविद्वि विवरण नहीं प्रकाशित हुआ था किन्तु वह सिद्ध करने के लिए कि कहाती के मूल्य के विषय में यह अनुमान सत्य है—यह इसे प्रकाशित कर रहा है। (संक्षिप्त, 'एथिक' हाथ निमित्त "कहाती के का शिक्षण")

कहाती के के लक्षण की बर्ष (Burchett) के अनुसार प्रत्येक प्रकार के कहाती का निर्माण लाल उसके लक्षण पालन, बात पटलन आदि से सुनिश्चित करने तथा नाबिकों एवं बहसों के लिए बात नहीं की के सामान के व्यय का विवरण

१	लोरी का लक्षण	१२,२२२ पीर
८		२८,८८९
८		२३ ९९८
७	८	२७ ८८२
९	"	२४ ९९७
२	"	१ ९ ९
४	"	७ २२८
३	"	२,८४३
९		३ ७२

यथा क्योंकि वह उपयुक्त समय स्वयं हमारे पास आ गया है। सार्वजनिक एकाएक एवं सब वस्तुओं के गौरवपूर्ण योग से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उपयुक्त समय आ गया है।

हमारी महान् शक्ति सक्षम में नहीं बरम् 'ऐक्य' में निहित है। फिर भी हमारी वर्तमान सक्षम सारे विश्व की शक्ति को पीछे हटा देने के लिए पर्याप्त है। इस समय इस महाद्वीप के पास सारा और अनुमानित मनुष्यों की ऐसी सेना है जो संसार में सबसे बड़ी है। यह सेना अभी-अभी शक्ति के उस ठिसर पर पहुँच गयी है कि कोई एक उपनिवेश उसका भार वहन नहीं कर सकता; संयुक्त रूप से समस्त महाद्वीप ही उस कार्य को पूरा कर सकता है। इनसे अधिक या ज़्यादा होने पर यह शक्ति परिणाम की दृष्टि से प्राणपातक हो सकती है। हमारी स्वस-शक्ति पर्याप्त है ही और जहाँ तक समुद्री-शक्ति का प्रश्न है क्या हम यह नहीं समझ सकते कि जब तक यह महाद्वीप इंग्लैण्ड के आधीन है तब तक इंग्लैण्ड अमेरिका के जहाजी बड़े का निर्माण बचापि नहीं करेगा। इसलिए आगामी सौ वर्ष तक वर्तमान की अवस्था इस दिशा में हम कुछ भी अधिक प्रगति नहीं कर सकते। साथ ही यह है कि हमारी अवस्था होती। क्योंकि इस देश की सकड़ी दिन प्रति दिन समाप्त होती आ रही है और अन्त में जो कुछ शेष रहेगी वे समुद्र-तट से दूरी की दूरी पर होंगी कि उन्हें प्राप्त करना कठिन होगा।

यदि इस महाद्वीप की जन-संख्या बहुत अधिक होती तो वर्तमान स्थिति में उसकी विपत्तियाँ बस हट हो जाती। बन्दरगाह के रूप में शिन्ने अधिक नगर होते उत्तरे अधिक की बचाना और सोना पड़ता। हमारी वर्तमान जन-संख्या मात्र से हमारी आवश्यकताओं के इस अनुपात में है कि किसी मनुष्य को बेकार रहन का अवसर नहीं है। व्यापार की कमी सेना को जन्म देती है और सेना की आवश्यकताएँ नवीन व्यापार की सृष्टि करती हैं।

हम पर कोई श्रृंखला नहीं है और इस कार्य के लिए हम जो श्रृंखला में वह हमारे सदस्यों का महिमायम स्मारक होगा। यदि हम अपनी आधी पीढ़ी के लिए सरकार का कोई निश्चित स्वरूप तथा निजी स्वतन्त्र सविधान छोड़ सकें तो किसी भी मूल्य पर किया गया छोटा साक्षा होगा। विष्णु केवल कुछ अधिनियमों (Acts) को रंग करने और वर्तमान मजिस्ट्रेट का विघटन करने के लिए,

वह है, तो हम उन्हें बेच सकते हैं और इस प्रकार कालाज के मोटों को घोंगा और बाँटी से बच सकते हैं।

बहाली बड़े को सेना से मिलने में तीन ग्राम एक भूख कर बैठते हैं। वह कोई आश्चर्य नहीं है कि बड़े में बहुधा नाबिक हों। यह युद्ध में वैयक्तिक पक्ष बहाल "कैप्टेन डेव" ने बड़े बर्बरता से सैन्य का सामना किया किन्तु उन्होंने केवल दोष नाबिक ने बहाल अनुप्राप्त की सब संख्या को ही से डार पी। पीछे ही कुछ समय और समाजसेवी नाबिक हुमायी स्वतन्त्रता के सैनिकों को पराजित संख्या में बहाल के नाबिक काम सिखा देंगे। इस समय हमें बर्बरता तुलना है, पक्षी मारने का बचा बच है और बहाल बहाल वाले व्यक्ति तथा नाबिक बहाल है। अतः अनुप्राप्त-सम्बन्धी कार्यों को करने के लिए विद्यमान समय हम इस समय है, उठने और किसी समय न होंगे। न्यू इंग्लैण्ड में बालीय बर्बरता से बहाल और बहाल दोनों वाले लक्ष्य बहाल बहाल है। इस समय के क्यों नहीं बहाल? "बहाल-विपक्ष" अमेरिका का बहाल बहाल है और इस विषय में पीछे ही वह सारे विश्व से बहाल बहाल। पूर्व के बड़े-बड़े साम्राज्य अनुप्राप्त से बहाल है, और परिणामतः अमेरिका की बहाल करने में बहाल बहाल है। बहाल बहाल-बहाल में है और यूरोप के किसी देश में न तो इसका सम्बन्ध अनुप्राप्त किया है और न तो बहाल बहाल का बहाल है। प्रकृति ने बहाल किसी देश को एक बहाल दिया है तो दूसरा देश दिया है। केवल अमेरिका को उसने बहालपूर्वक दोनों बहाल दिये हैं। बहाल का बहाल विस्तृत साम्राज्य बहाल अनुप्राप्त से बहाल है विद्यमान उनके राज और पीछे बहाल बहाल केवल बहाल की बहालियाँ हैं।

मुद्रा के विचार से क्या हमें बिना बहाली बड़े के पक्षी चाहिए?

६ बड़े बहाल हम जो से हम समय हम बहाल नहीं हैं। हम समय हम बहाल सम्पत्ति बहाल पर बहाल बहाल में विपक्षपूर्वक बहाल बहाल है और बहाल तथा विपक्षियों की बहाल दिये बिना ही बहालपूर्वक तो बहाल है। परिस्थितियों बहाल बहाल है। बहाल सम्पत्ति बहाल के बहाल-बहाल बहाल बहाल-बहाल और उन्नत होनी चाहिए। बहाल बहाल पूर्व एक बहाल अनुप्राप्त-बहाल केनदेवर (Delaware) बहाल के बहाल बहाल के बहाल है बहाल-बहाल बहाल से बहाल बहाल और बहाल बहाल बहाल में ही सम्पत्ति बहाल। बहाल ही

निम्नांकित जहाज और तोपों से बना हुआ सब १७५७ ई० का ब्रिटिश जहाजी बैटल अपनी उत्तम दशा में था। ऊपर के विवरण के अनुसार अब हम सुगमतापूर्वक सब जहाजी बैटल के मूल्य या व्यय की गणना कर सकते हैं।

जहाज	तोपें	एक का व्यय	कुल व्यय
६	१००	३५,५५३ पौंड	२१३,३१८ पौंड
१२	६०	३६,८८६ ,	३५८ ६३२ ,,
१२	८०	२३ ६३८	७८३ ६५६ ,,
४३	७०	१७ ७८३	७६४ ७५३ ,
३५	६०	१६ १२७	४६६ ८६५ ,
४०	५०	१० ६०६	४२४ २४० ,,
४५	४०	७ ५३८	३४० ११० ,,
५८	२०	३ ७१० ,,	२१३ १८० ,,
८५ एक मस्तूस का छोटा जहाज बम और तोपयुक्त जहाज (Fire ship)		२,०००	१७० ००० ,

व्यय	३ २६६ ७८६ पौंड
तापों के लिए खेप	२३३ २१४
कुल व्यय	३ ५०० ००० पौंड

समुद्री बैटल के निर्माण-कार्य के लिए अमेरिका के उपान बिज का पोर्ट भी देश समर्थ नहीं है। उस लकड़ी पटखन और लोहा आदि अमेरिका की प्राकृतिक उपज है। हमें किसी वस्तु के लिए बाहर जाने की आवश्यकता नहीं है, जब कि स्पेन और पुर्तगाल को अपने सदाग्र जहाजों को बिल्दे पर देना अधिक साम ठठाने वाले हार्नेट के निवासियों को अपिचर नामची बाहर न भयानो पड़ती है। हमें जहाजी बैटल का व्यापार की वस्तु के रूप में देखना चाहिए, क्योंकि यह देश उमका प्राकृतिक निर्माण-स्वयं है। दग कार्य में हम जिसका धन लगायें उतना अच्छा है। निमित्त हो जाने पर जहाजी बैटल का मूल्य उसकी सागत से अपिच होता है। बाणिज्य और गुरता का गठबन्धा सर्वोत्तम राष्ट्रीय नीति है। यदि हमें उन निमित्त जहाजी बैटलों की आवश्यकता

बहुते देशों को बहुत बड़ा सम्बन्ध। साथ से बहुत दूर की बात होती। यदि
 ग्रेट ब्रिटेन की मनुषी-शक्ति का बीतवाँ भाग भी अमेरिका को प्राप्त हो जाय तो
 वह पश्चिम में ग्रेट ब्रिटेन से बड़ा सम्बन्ध। क्योंकि किसी विदेशी राज्य पर न तो
 हमारा आधिपत्य है और न हम उसे चाहते ही हैं। इसलिए हमारी बायीं
 पंक्ति हमारे मनुषी-शक्ति पर कार्य रत रहेगी। कुछ ही दिनों में हमारी
 मनुषी-शक्ति से हमें उनकी अनेकानेक बातें ज्ञात होना सिगई हूँ। हम पर आक्रमण
 करने के लिए नीच या चार सहस्र मील की दूरी तय करनी पड़ेगी और नवीन
 शक्ति प्राप्त करने के लिए पुनः अपनी ही दूरी तय होना पड़ेगा। अपने
 मनुषी शक्ति के कारण ग्रेट ब्रिटेन हमारे यूरोपीय व्यापार पर निर्भर रहता है,
 तो हम भी ग्रेट ब्रिटेन के वेस्ट इण्डियन सम्बन्धी व्यापार पर उसी भाँसा में
 निर्भर रहते हैं। क्योंकि वेस्ट इण्डियन इस महाद्वीप के पश्चिम में होने के नाते
 पूर्णतः इसीकी कृपा पर निर्भर है।

यदि हम मनुषी शक्ति के व्यवहार को बड़ा बड़ा करवा आवश्यक न समझें,
 तो पश्चिम के लोगों में उसे बहुत करने की कोई प्रवृत्ति दिखायी जा सकती है।
 चीन, तीव्र चालीस या पचास लोगों वाले बहालों की बनाकर उनका किसी
 उपयोग करने के लिए व्यापारियों को कुछ अधिक-बच देना चाहिए। वह
 अधिक-बच व्यापारियों द्वारा बहाल-निर्माण-कार्य में बराबरी की पृथी के अनुसार
 होना चाहिए। इन व्यापारिक बहालों में से पचास या साठ बहल कुछ
 रक्षा-बाजी के साथ संगीत रूप से मनुषी शक्ति बनाये रखेंगे, और हम पर
 उनका कोई भार भी न रहेगा। इनमें से पश्चिम के समय बहाल बनकर
 पर बहार रहकर बोरे-बीरे लम्बे होते चले हैं। यहाँ के निवासी इतने अधिक
 दुखी चले हैं। हम उक्त दुखी से बचे रहेंगे। पश्चिम और भारत का
 सम्बन्ध लम्बे मोर्चा है। क्योंकि जब हमारी पश्चिम और पश्चिम सम्बन्ध
 हो तो हमें किसी बाह्य शक्ति के करने की आवश्यकता नहीं है।

भारत की प्रत्येक भागों का साथ हमारे यहाँ आधिन है। पश्चिम इसका
 अधिक होता है कि हमें उसके का अभाव नहीं पड़ सकता। हमारा लोहा अन्य
 देशों के लोहे से अच्छा है। लोगों का निर्माण हम परदेष्ट कर सकते हैं। हम
 अतिरिक्त बड़ी भार और भार बँट कर रहे हैं। अतिरिक्त हमारा ज्ञान बढ़
 रहा है। विश्व की इतना हमारी स्वाभाविक विवेचना है, और माहल में कभी

क्यों थोड़ा या सोमह लोगों से कुछ दो मस्तूकों वाले जहाज के द्वारा कोई भी साहसी व्यक्ति सम्पूर्ण महाद्वीप को घूटकर अव्यधिक धन ले गया होता। ये स्थितियाँ हमारे ध्यान को आकर्षित करती हैं और समुद्री-सुरक्षा की आवश्यकता प्रकट करती हैं।

कुछ लोग कदापि यह नहीं सोचेंगे कि सम्मोह के बार ब्रिटेन सुरक्षा-कार्य करेगा। क्या लोग इतने मूर्ख हैं कि वे यह मान लेते हैं कि ब्रिटेन हमारी सुरक्षा के लिए हमारे बन्दरगाहों पर जहाजी पैदा रखेगा? जिसके पास केवल सामान्य बुद्धि होयी वह भी इस बात को समझ लेगा कि जिस व्यक्ति ने हमें दबाने का प्रयत्न किया है वह हमारी रक्षा के लिए सब से अनुपम व्यक्ति है। मनी के बहाने विजय पूरी की जायगी और इतने दिनों के साहसपूर्ण विरोध के उपरान्त हम लोग इसपूर्वक शास बनाये जायेंगे। मैं वृत्ता हूँ कि यदि ब्रिटेन के जहाज हमारे बन्दरगाहों तक नहीं आने पायें तो वह हमारी रक्षा किस प्रकार करेगा? तीन या चार सहस्र मील दूर स्थित जहाजी पैदा अमेरिका के लिए बहुत कम उपयोगी होगा; आन्तरिक मंडल में तो वह किसी प्रकार की सहायता नहीं कर पायगा। अतः यदि भविष्य में हमें ही अपने को बचाना है तो हम इसे दूसरों के लिए क्यों करें? अपने लिए क्यों न करें?

ब्रिटेन के युद्ध-नौतों की सूची बड़ी लम्बी और भयानक है किन्तु उसका बख्शीय भी किसी एक अवसर पर नाम के लिए उपयुक्त नहीं रहता है। उनमें कतिपय का अस्तित्व होता ही नहीं। फिर भी यदि जहाजों के लक्ष्य भी बच रहे हैं तो उनके नाम बड़ी धान के साथ उस सूची में बने रहते हैं। जो जहाज कार्य योग्य हैं, उनका संयोजन भी एक साथ एक स्थान में कार्य-भुक्त नहीं किया जा सकता। ईस्ट और वेस्ट इण्डियन भूमध्य सागर अफ्रीका तथा संसार के अन्य स्थल जहाँ ब्रिटेन का आधिपत्य है उसके समुद्री क्षेत्रों की निरन्तर कार्य रत रहते हैं। पक्षपात और अत्याचारी के कारण इसी प्रकार के समुद्री क्षेत्रों के विषय में हमने समस्त धारणा बना रखी है और इस प्रकार की चर्चा की है मानो उस सम्पूर्ण क्षेत्र से हमें एक साथ बचना होना। यह कार्य वर्तमान समय में अत्यावश्यक है। अतः प्रुत टोरियों में इस कार्य का सहाय भेकर हमें आश्चर्य ही में निरस्तहित करना चाहता है। ब्रिटेन के

सुई डे के बहुत बड़ा मामला सत्य से बहुत दूर की बात होगी। यदि डेन को समुद्री-सन्धि का बीतवां भाग भी अमेरिका की प्राप्ति हो जाय तो ए. सी. ११ में विजेन के बड़ कामया। क्योंकि किसी विदेशी राज्य पर न तो स्पष्ट वर्तमान है और न हम उसे चाहते ही हैं। इसलिए हमारी सारी ध्यान हमारे समुद्री-उत्पन्न पर कार्य रख रहेनी। कुछ ही दिनों में हमारी समुद्री-सन्धि के होने उनकी अवेजा हुआ लाभ होगा जिन्हें हम पर आक्रमण करने के लिए तीन वा चार सहस्र मील की दूरी तय करनी पड़ेगी और नवीन सन्धि प्राप्त करने के लिए पुनः अपनी ही दूरी तक लौटना पड़ेगा। अपने समुद्री डे के कारण विजेन हमारे यूरोपीय व्यापार पर निर्वन्धन रहता है, जो हम भी विजेन के बेस्ट इंग्लिश सम्बन्धी व्यापार पर उसी मात्रा में निर्वन्धन रहते हैं क्योंकि बेस्ट इंग्लिश इस महाद्वीप के पड़ोस में होने के नाते पूर्णतः इसीकी कृपा पर निर्भर है।

यदि हम समुद्री डे के व्याप-कार को कदा बहुत करना आवश्यक न समझें, तो धर्म के बलों में उसे बहुत करने की कोई प्रवृत्ति दिखायी जा सकती है। दो तीन चालीस वा पचास लोगों वाले जहाजों को बनाकर उनका निजी शक्ति करने के लिए व्यापारियों को कुछ अधिक-बन देना चाहिए। वह बर्तमान व्यापारियों द्वारा जहाज-निर्माण-कर्म में लगायी गयी पूंजी के अनुसार होना चाहिए। इन व्यापारिक जहाजों में से पचास वा साठ बहुत कुछ जर्मनी के साथ वर्मान्ड इन से समुद्री सन्धि बनाये रखेंगे और हम पर काम कोई भार भी न रहेगा। इसीष्ट में धर्म के समय जहाज बनकरवाह पर देखा रहकर बोरे-बीरे मष्ट होते रहते हैं। वहाँ के निवासी इतने अधिक डूबी पड़े हैं। हम उस दुर्गति से बचे रहेंगे। वाणिज्य और सुरक्षा का साम्य केन्द्र नीति है क्योंकि जब हमारी धर्म और सम्पत्ति साथ-साथ ही हो हनें निजी बाह्य शत्रु से करने की आवश्यकता नहीं है।

पुराण की इलेक कागजी का प्राप्ति हमारे यहाँ आचिन्त है। पटवत इतना बिक्र होना है कि हमें रस्ते का जमान नहीं पड़ सकता। हमारा सोचा अन्य देशों के लोभ से बचना है। लोगों का निर्माण हम यथेष्ट कर सकते हैं। हम मॉर्टन समी बार और बाबर रीय कर रहे हैं। प्रविष्टता हमारा शान बढ़ पा है। विज्ञ की इच्छा हमारी स्वाभाविक विशेषता है और साहस ने कभी

हमारा साथ नहीं छोड़ा। हमें किसका जमाब है? हम संकोच क्यों कर रहे हैं? ब्रिटेन से बिनाश के अतिरिक्त और कोई आया नहीं है। यदि महाद्वीप में उसका वासन स्वीकार कर लिया गया तो यह भूराज न्यास-योग्य नहीं रहेगा। द्वेप निरन्तर उत्पन्न होते रहेंगे। जमादार कितने होंगे और उन्हें दान्त कौन करेगा? अपने देशवासियों को विदेशी आधिपत्य स्वीकार कराने के लिए कौन अपना जीवन संकट में डालेगा? वेस्मिन्वेनिया और फानेबिट्ट के बीच अनिश्चित स्यामिस्व वाली भूमि को लेकर परस्पर मतभेद है। यह तथ्य ब्रिटिश सरकार की निस्सारता प्रकट करता है और इस बात का पूरा प्रमाण है कि महाद्वीपीय विषयों को महाद्वीपीय दक्षिण ही नियमित कर सकती है।

वर्तमान समय ही अपेक्षाकृत अधिक उपयुक्त क्यों है इसका अन्य कारण यह भी है कि हम संख्या में जितने कम हैं उतनी ही मात्रा में भूमि बेकार पड़ी हुई है। ब्रिटेन के आधीन रहने पर राजा अपने अयोग्य सेवकों को यह भूमि दे देगा। किन्तु यदि हम स्वतन्त्र हो जाते हैं तो हम न केवल वर्तमान प्रणुष्टा करन में उस भूमि का उपयोग करेंगे वरन् उसके द्वारा सरकार को निरन्तर आय प्राप्त होती रहेगी। इस प्रकार की सुविधा विरह के किसी भी राष्ट्र को प्राप्त नहीं है।

जिसे उपनिवेशों की दीशवासन्या कहा जाता है वह स्वतन्त्रता के विपरीत नहीं वरन् पक्ष में प्रस्तुत किए जाने योग्य तर्क है। इस समय हमारी संख्या पर्याप्त है। यदि हम अपेक्षाकृत अधिक होते तो कम संगठित होते। बड़े मार्क की बात है कि किसी देश की जन-संख्या जितनी अधिक होती है उतनी तेजा उतनी ही छोटी होती है। जहाँ तक संख्या की संख्या का पान है प्राचीन युग में वर्तमान की अपेक्षा तेजाई बहुत बड़ी हुआ करता थी। इसका कारण स्पष्ट है क्योंकि प्राणिज्य जन-संख्या का परिणाम है और उसमें जनसंख्या होने लगी हो जाते हैं कि अन्य जातों की ओर उनका ध्यान कम हो जाता है। व्यापार देश-अभिन्न और सैनिक सुरक्षा विषयक प्रकृति का काम कर देता है। इतिहास पर्याप्त रूप से इस तथ्य को प्रमाणित करता है कि किसी राष्ट्र की संसाधनता में सर्वाधिक क्षीरतापूर्ण कार्य सम्पन्न हुए हैं। प्राणिज्य की पृथि के साथ-साथ ईश्वर की दक्षिण गट हो गयी है। अधिक जन-संख्या के होते हुए भी सन्ध्या का अमर कामों की-सी सहिष्णुता के साथ अनमान स्वीकार पड़ा गया है।

मनुष्यों के पास श्रित्नी अधिक सम्पत्ति होती है, संकटपूर्ण कामों से वे छटना ही नहीं सकते हैं। सामान्यतः नयी व्यक्ति जब के पास होते हैं और स्थान के स्थान विधानों से कोपे हुए राजधर्म की स्वीकार करते हैं।

व्यक्ति और राष्ट्र के जीवन में जीवन अच्छे युगों के बीच होने का समय है। आज से बीसवीं शताब्दी के बाद संपूर्ण महाद्वीप की एक सरकार स्थापित करना आवश्यक नहीं हो सकता हो सकता है। व्यापार एवं जन-संख्या की वृद्धि के कारण स्वयं नाला प्रकार के स्वार्थ द्वेष में बढ़बड़ी उत्पन्न कर रहे हैं। एक उपनिवेश दूसरे के विरुद्ध होना। प्रत्येक उपनिवेश ब्रह्म होने के बने बोध होना। उसे दूसरे की सहायता की परवाह नहीं रहेगी। ऐसी परिस्थिति में एक ओर अनिमायी और दूसरी व्यक्ति अपनी-अपनी सीमित विशेषताओं में और प्रयत्न करेंगे दूसरी ओर बुद्धिमान मनुष्य इस बात पर जोर प्रकट करने कि हमारा संघ पहले स्थापित नहीं किया जा सका। इसलिए वर्तमान समय ही "संघ" स्थापित करने का वास्तविक समय है। संघकाय की अनिष्टता एवं आपत्तिकाल की निवृत्ता सर्वाधिक विरस्ताबी और अनिष्टता होती है। हमारी वर्तमान दृष्टि में वे दोनों विशेषताएँ हैं। हम असमर्थ हैं और आपत्ति में हैं। किन्तु हमारी दृष्टि ने आपत्तियों को दूर किया है और वह एक ऐसे स्मरणीय नम्रुन का आगम्य कर रही है जिसमें सभी पीढ़ियाँ और सब प्राप्त करेंगी।

वर्तमान समय वह कर्तव्य अवसर है, जो राष्ट्र के जीवन में केवल एक बार आता है और वह है निजी सरकार बनाने का अवसर। कई राष्ट्रों ने इस अवसर को निरक्षर माने दिया है। परिणाम यह हुआ कि स्वयं विनाश बनाने के बदले वे अपने विरोधियों के द्वारा बनाये गये विनाश को स्वीकार करने के लिए विवश होते गये। उन देशों में पहले राजा होता है और वह सरकार का स्वयं बनता है किन्तु होना यह चाहिए कि सरकार के अधिकार एवं जन-विषयक सामन-यत्न पहले ठीकर विनाश और उसके उपरान्त उसके अनुसार कार्य करने वाले व्यक्ति नियुक्त किये जाएँ। किन्तु दूसरे राष्ट्रों की तुलना से हम क्षीण हैं और अतिशय समय पर अपनी सरकार के निर्माण-कार्य को आरंभ करने में वर्तमान अवसर या पूर्ण परीक्षा करें।

विजयी विलियम (William the Conqueror) ने यह ईश्वरीय को

अपने आधीन किया, जो उसने तलवार के बस पर शासन किया, और जब तक हम यह स्वीकार न करेंगे कि अमेरिका में शासन-सूत्र अधिकारपूर्वक एवं बंधन से ही ग्रहण किया जा सकता है तब तक हमें इस बात का बराबर डर बना रहेगा कि कहीं कोई साम्यवादी सुझा हमारे साथ भी, उसी प्रकार का व्यवहार न कर बैठे। उस स्थिति में हमारी स्वतंत्रता कहाँ होगी और हमारी सम्पत्ति का क्या होगा ?

धर्म का जहाँ तक सम्बन्ध है मेरा मत है कि अन्तःकरण से धर्म को स्वीकार करने वाले सभी लोगों का रक्षा करना सरकार का अनिवार्य कर्तव्य है। जहाँ तक मैं समझता हूँ इसके अतिरिक्त धर्म के प्रति सरकार का और कोई कर्तव्य नहीं है। यदि मनुष्य अपनी आत्मा की संकीर्णता को त्याग दे, यदि वह सिद्धांतों के उस स्वार्थ को छोड़ दे जिसे सभी धर्म-संस्थाओं के अनुसार मनुष्य नहीं छोड़ पाते तो उसी क्षण धर्म-विषयक सभी प्रकार के डर से उसकी मुक्ति हो जाय। संका शुद्धात्माओं की सहजरी और अच्छे समाज का विनाश करने वाली है। मैं स्वयं अन्तःकरण से पूर्ण विश्वास करता हूँ कि सर्वव्यापित्व की यह दृष्टि है कि हमारे बीच नाना प्रकार के धार्मिक मत प्रचलित रहें। इसके कारण हमारी निर्दिष्टयन दया के लिए व्यापक क्षम प्रस्तुत है। यदि हम सबकी विचार-मंडति एक होगी तो हमारी धार्मिक प्रकृति में परीक्षण-सत्त्व का अभाव होता। इस उदार सिद्धांत के अनुसार मैं मानता हूँ कि सभी मनुष्य एक ही परिवार के हैं उनके भेद केवल नाम के हैं।

राष्ट्रीय शासन-यंत्र के जीवित के विषय में कुछ विचार व्यक्त किसे या चुके हैं। इस स्थान पर मैं इस विषय पर पुनः बर्बा करने की स्वतंत्रता ले रहा हूँ। मेरा मत है कि शासन-यंत्र एक ऐसा विश्व बंधन है जिसमें धर्म अस्किगण स्वतंत्रता तथा साम्यवादी अधिकारों की रक्षा के लिए संपूर्ण राष्ट्र बंधता है। यह समझीता और सकार्द के व्यवहार से मंत्री विरसवायिनी होती है।

मेरे अब तक अधिक और समाज प्रतिनिधित्व की आवश्यकता की बर्बा को है और राजनैतिक विषयों में सर्वाधिक ध्यान देने योग्य विषय भी यही है। निर्वाचकों अबका प्रतिनिधियों की अलग संज्ञा बनावत है। किन्तु यदि प्रतिनिधियों की संज्ञा केवल अल्प हो नहीं बरन अवधान भी हो तो तब और बड़ जाता है। एक उदाहरण सीजिए पैमिलवेनिया के महा मंचन में जिस समय

'एग्जोसिटस डेटिप्शन' प्रस्तुत किया गया उस समय केवल कट्टरपंथी सदस्य शामिल थे। 'बक काउन्टी' के सभी सदस्यों ने, जिनकी संख्या बाठ की एक तिहाई में गत किया। यदि 'मैस्टर' के साथी इसमें इसी मार्ग का अनुसरण करते तो सारा श्रम केवल दो काउन्टियों से ही प्राप्त हुआ होता और यह सब बरबर बना हुआ है। अपनी यह बैठक में उन सभी ने श्रम के प्रतिनिधियों के ऊपर अनुचित अधिकार प्राप्त करने का जो व्याव-विश्व कार्य किया है, उसके कारण सामान्य जनता को, अपने हान के अधिकार होने समय बच हो जाना चाहिए। प्रतिनिधियों के लिए कुछ आदेशों की सूची तैयार की गयी। बोम्बे-के व्यक्तियों के अनुपयोग करने पर सभा-प्रधान में इस पर विचार किया गया और तत्पुर्ण उपनिवेश के नाम पर इसे स्वीकार कर लिया गया। किन्तु यदि उपनिवेश के लोगों को यह पता होता कि जिस दुरी भावना से उस सभा ने कुछ आवश्यक एवं सामाजिक कार्यों को आरम्भ किया तो जहाँ तक वे उन सदस्यों की विरुद्ध बोम्बे न समझने में योश भी हकीकत न करने।

सार्वजनिक आपराधकर्ताई कई चीजों को सुविधाजनक बना देती है, किन्तु कबका निरन्तर बना रहना आवश्यक नहीं जाता है। किसी चीज का रिती बरबर पर उपयुक्त होना एक बात है और उसका सदा के लिए ठीक होना दूसरी बात है। जब अमेरिका की आपत्तियों पर विचार विमर्श आवश्यक हुआ तो सभा के लिए विभिन्न प्रालीन-समाजों से व्यक्तियों को नियुक्त करने के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय प्रानुन न था और न उचित ही। उन व्यक्तियों ने जिस बुद्धिमानी से कार्य पूरा किया है उसने इस देश को विनष्ट होने से बचा लिया है। किन्तु यह शायद निश्चित है कि कांग्रेस के विचार हमारा काम नहीं समेदा। अतः मुख्यतया का श्रेयक द्वितीय इस बात को स्वीकार करेगा कि कांग्रेस के सदस्यों की निर्माण-प्रवृत्ति विचारशील है। मानव-जाति का अध्ययन करने वालों से ये पूछता है कि क्या प्रतिनिधित्व और निर्माण का अधिकार एक और उही संस्था के लिए बहुत बड़ा अधिकार नहीं है? जब हम जापानी वीटियों के लिए बोलना बना रहे हैं, तो हमें स्मरण रखना चाहिए कि सभाचार पैतृक सम्पत्ति नहीं है।

अने धनुषों से हम शायः कबोत्तम विद्यांश प्राप्त करते हैं और, शायः अपनी धुनों पर विचार करके आश्चर्य करते हैं। सार्ड 'कार्नवाल' के म्युनिसि-

सभा की प्रार्थना की स्वीकार नहीं किया, क्योंकि उसके अनुसार उस सभा में मेज़ पर दम्यीय सदस्य थे। उन्होंने यह तर्क प्रस्तुत किया कि सदस्यों की यह संख्या इतनी अल्प है कि यह संपूर्ण का वास्तविक प्रतिनिधित्व नहीं कर सकती। उसकी इस अनिच्छापूर्वक की यही सच्चाई के लिए हम उसे धन्यवाद देते हैं।

कुछ लोगों को चाहे विविध सगे यथवा इस प्रकार से सोचने के लिए चाहे कुछ लोगों की अत्यन्त अनिच्छा हो किन्तु यह सिद्ध करने के लिए कि स्वतन्त्रता की स्पष्ट और निश्चित घोषणा के अतिरिक्त अन्य कोई योजना हमारे कार्यों की अत्यधिक दीर्घता से पूरा नहीं कर सकती कठिण ठोस तथा प्रभावशाली तर्क दिये जा सकते हैं जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं।

राष्ट्रों की यह सामान्य रीति है कि जब संसार की किन्हीं दो शक्तियों के बीच युद्ध छिड़ जाता है तो निम्नलिखित देशों में से कुछ राष्ट्र मध्यस्थ के रूप में सामने आते हैं और दाम्नि-स्थापना के निमित्त भूमिना निमित्त करते हैं। किन्तु जब तक अमेरिका ब्रिटेन की प्रजा है तब तक कोई भी शक्ति मध्यस्थ होना स्वीकार न करेगी चाहे उसकी प्रवृत्ति अधिक उदार ही क्यों न हो।

यह समझना तर्क-विप्लव है कि पाँच और स्पेन हमें किसी प्रकार की सहायता प्रदान करेंगे यदि हम उस महाशक्ती द्वारा ब्रिटेन और अमेरिका के बीच पड़ी साईं को फाट कर उनके सम्बन्धों को टूट करना चाहते हैं क्योंकि उसके परिणामस्वरूप उन दोनों की शक्ति क्षीय।

जब तक हम अपने को ब्रिटेन की प्रजा मानते हैं तब तक विदेशी राष्ट्रों की दृष्टि में हम राजद्रोही माने ही जायेंगे। उनकी दाम्नि के लिए हमारा दृष्टान्त भयानक होगा क्योंकि इसी प्रकार उनकी प्रजा भी विद्रोह कर सकती है। हम इस समस्या को नृसम्यक् देखते हैं किन्तु वास्तव और राजद्रोह दोनों का गठबन्धन करने का विचार सामान्य बुद्धि वालों के लिए अत्यन्त गूढ़ है।

एक प्रकारगत घोषणा-पत्र विदेशों में भेजकर हम यह स्पष्ट कर दें कि हमने बिना किसी अपेक्षा के सभी तथा उगले छुटकारा पाने के लिए हमारे सभी संभव दाम्नि उपाय धर्म्य शांति हुए। किन्तु ब्रिटिश साम्राज्य की निर्वपता के अन्तर्गत गुरुतापूर्वक तथा आनन्द के साथ रहने में असमर्थ होने के कारण हम उसके सभी सम्बन्धों को तोड़ने के लिए विवश हैं। किन्तु हम विश्व के अन्य सभी राष्ट्रों के साथ दाम्निपूर्ण रहेंगे और उनके साथ व्यापार सम्बन्ध स्थापित

करने को इच्छुक है। एक महान्नगर में आर्थिक-जन्य स्वतंत्रता के अभाव में, एक प्रकार के प्रदत्त के इस महाहीन का अधिक धिक् होता।

विदेश को प्रशा के रूप में बाहर न हटारा स्वायत्त होता और न हमारी बात बुनी बायरी। अतः देश की सरकार का व्यवहार हमारे विरुद्ध है और वह एक दिग्ध रहेगा, जब तक स्वतंत्र होकर हम और अन्य राष्ट्रों की पॉलिसि में अपना स्थान न बना ले।

कारण में वे कार्यवाहियाँ बहुत विविध और कठिन होती हैं किन्तु जब तक हमने अपने कार्य किये हैं उन सबके अन्त में वे भी कुछ ही दिनों के अन्तर्गत सरल और अनुसूचित हो जाती हैं। यह भी सत्य है कि जब तक स्वतन्त्रता की योजना नहीं की जाती है, तब तक यह महाहीन एक ऐसे व्यक्ति के अन्तर्गत अनुभव करेगा जो किसी व्यक्ति के अतिरिक्त समस्त समस्त है और यह समझता भी है कि इसे कर डालना चाहिए जो सब कार्य को आरम्भ करता नहीं चाहता और जो इसे कर डालने की आवश्यकता को निरन्तर अनुभव करता रहेगा है।

“परिशिष्ट”

इस परिशिष्ट के प्रथम संस्करण के अन्तर्गत के अन्त में भी कहिए कि उनी दिन इस मन्द (विचारविमर्श) में राजा का व्याख्या भी अन्तर्गत हुआ। वेद विचार है कि यदि किसी विद्वत् या अविद्वत्-मता के पूरक इस परिशिष्ट का अन्तर्गत दिया गया होना तो भी अन्तर्गत यह करने अनुसूचित तथा आवश्यक महत्त्व पर न हो पाता। एक के निर्णय विचार दूसरे के विचारों का अनुसरण करने की आवश्यकता व्यक्त कर रहे हैं। अनुसूचित वे अतिरिक्त के रूप में इसे कहा और राजा के व्याख्या ने लोगों को आकर्षित करने के अन्तर्गत स्वतन्त्रता के अनिवार्य विचारों के लिए जाने प्रदत्त कर दिया।

अन्त और बीच का बाह्य भी उद्देश्य हो, किन्तु उनके द्वारा किसी भी अन्तर्गत-पूर्ण इति को यदि आवश्यक माना है तो अनुसूचित अन्त होता है। तो अन्तर्गत अन्त आवश्यक होती है। यदि यह विचार ही है तो, अन्तर्गत, राजा का

सभा की प्राप्ति को स्वीकार नहीं किया क्योंकि उसके अनुसार उस सभा में केवल छम्बीस सदस्य थे। उन्होंने यह तर्क प्रस्तुत किया कि सदस्यों की यह संख्या इतनी अल्प है कि वह संपूर्ण का वास्तविक प्रतिनिधित्व नहीं कर सकती। उसकी इस अनिच्छापूर्वक की गयी सच्चाई के लिए हम उसे क्षमावाद देते हैं।

कुछ लोगों को चाहे विभिन्न मते अथवा इस प्रकार से सोचने के लिए चाहे कुछ लोगों की अत्यन्त अनिच्छा हो किन्तु यह सिद्ध करने के लिए कि स्वतन्त्रता की स्पष्ट और निश्चित घोषणा के अतिरिक्त अन्य कोई योजना हमारे कामों को अत्यधिक दीर्घता से पूरा नहीं कर सकती अतिथि ठोस तथा प्रभावशाली सब दिये जा सकते हैं जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं।

राष्ट्रों की यह सामान्य रीति है कि जब सत्कार की किन्हीं दो शक्तियों के बीच कुछ छिड़ जाता है तो निम्नलिखित दोनों में से कुछ राष्ट्र मध्यस्थ के रूप में सामने आते हैं और दान्ति-स्थापना के निमित्त भूमिका निर्मित करते हैं। किन्तु जब तक अमेरिका ब्रिटेन की प्रजा है तब तक कोई भी शक्ति मध्यस्थ होता स्वीकार न करेगी चाहे उसकी प्रकृति अधिक उदार हो क्यों न हो।

यह समझना तर्क-विषय है कि धार्मिक और स्पेन हमें किसी प्रकार की सहायता प्रदान करेंगे यदि हम उस सहायता द्वारा ब्रिटेन और अमेरिका के बीच पड़ी सार्द को पाट कर उनके सम्बन्धों को दृढ़ करना चाहते हैं क्योंकि उसके परिणामस्वरूप डा वेगों की दृष्टि होगी।

जब तक हम अपने को ब्रिटेन की प्रजा मानते हैं तब तक विदेशी राष्ट्रों की दृष्टि में हम राजद्रोही माने ही जायेंगे। उनकी दान्ति के लिए हमारा दृष्टान्त अमान्य होगा क्योंकि इसी प्रकार उनकी प्रजा भी विद्रोह कर सकती है। हम इस समस्या को नुमस्त्र कर सकते हैं किन्तु वास्तव और राजद्रोह दोनों का गठबन्धन करने का विचार सामान्य बुद्धि वालों के लिए अत्यन्त गूढ़ है।

एक प्रकाशित घोषणा-पत्र विदेशों में भेजकर हम यह स्पष्ट कर दें कि हममें कितनी आपत्तियाँ अभी तथा उनमें पुनरावृत्ति के लिए हमारे सभी संभव शान्त उपाय व्यर्थ सिद्ध हुए। अस्तु ब्रिटिश साम्राज्य की निर्भयता के अन्तर्गत सुरक्षापूर्वक तथा आनन्द के साथ रहने में असमर्थ होने के कारण हम उसके सभी सम्बन्धों को तोड़ने के लिए विवश हैं। किन्तु हम विषय के अन्य सभी राष्ट्रों के साथ दान्तिपूर्ण रहेंगे और उनके साथ व्यापार सम्बन्ध स्थापित

के कारण ही उन लोगों की बुद्ध भी करने की आज्ञा मिली थी।" हाथ कपड़े वस्त्रों की राज-कठि है, यह निगाहरण कृतिपुत्र है। जो ऐसे सिद्धांत की प्रतिपक्ष बुद्ध का क्या करता है उसकी विवेक-शक्ति नष्ट हो चुकी है यह अनुपपन्न के विरुद्ध है। यह समझना चाहिए कि उसने न केवल मानव की उत्तम प्रतिष्ठा का त्याग किया है, बल्कि यह समझों की चेष्टा से भी पीछे हटा हुआ है और विश्व में लोगों-मनोहों के समान बुद्धिमान रूप से जीवन-यापन कर रहा है।

जब इस बात का कोई महत्व नहीं है कि ईश्वरीय का राजा क्या करता है ब्रह्मा क्या करता है। प्रत्येक वैदिक भारतीय सम्प्रदाय को अपने पुण्य के साथ जोड़ दिया है। अतः एवं अन्तःकरण को उसने पीछे छोड़ दिया है। अपनी बुद्धि तथा निरपेक्षा की स्थिति एवं सांख्यिक प्रवृत्ति के कारण यह कार्योन्मुख ब्रह्म का नाम बन गया है। जब अमेरिका को अपना प्रभाव फैलाना चाहिए। उसका परिवार बहुत विघात और लक्ष्मण है। जो प्रति अनुपपन्न-वादि और अविद्वान् वर्ग के लिए अविचार हो गयी है। उसका समर्थन करने के निमित्त अपनी सम्पत्ति उसे देने की आज्ञा करने उस परिवार की देख-भाल करना अमेरिका का कर्तव्य है। राष्ट्र के नागरिकों की देख-भाल करना निश्चय रूप से, जो जनता की स्वतन्त्रता के अनिवार्य संरक्षण है, के यदि चाहते हैं कि उनका देश यूरोप के अत्याचार के श्रुति न हो तो उन्हें स्वतन्त्र में विवेक की शिक्षा करनी चाहिए। किन्तु इस वैदिक ज्ञान को वैदिक विचार के लिए जीवित करने के अर्थान रूप से निम्नलिखित विषयों पर अपना मत व्यक्त करेंगे।

प्रश्न—विदेश के सम्प्रदायों से अमेरिका का रिश्ता है।

उत्तर—वैदिक धर्म और व्यावहारिक धर्म है। समझना या स्वतन्त्रता ?

पहली बात के समर्थन में यदि मैंने उचित सबंध तो इस महावीर के वैदिक अनुपपन्न और वैदिक शक्तियों के उद्धार कर सकूँगा। इस विषय पर उनके विचार अब तक लाभाध्य रूप से प्रकाश में नहीं आ सके हैं। राष्ट्र में विविध स्वतन्त्रता है। क्योंकि यदि कोई राष्ट्र विदेशी आधीनता की स्थिति में है उसका अन्तर्गत जीवन है और उसकी विधानीयता (Legislative Power) संकुचित तथा संकुच में बंधी हुई है, तो उसे वैदिक महान् प्रत्य

व्याख्यान पूर्ण नीचता से भरा हुआ है, अतः कांग्रेस तथा जनता दोनों के द्वारा उसका विस्तार होना चाहिए। तथापि किसी देश की आन्तरिक दान्ति उसके राष्ट्रीय चरित्र की पवित्रता पर निर्भर है। इसलिए प्रायः यही ध्वज होता है कि कई बार हम केवल घृणा प्रकट करके मौन रह जायें न कि घृणा ऐसी महीन पद्धति अपनावें जो हमारी उस दान्ति और गुरसा के संरक्षक (राष्ट्रीय चरित्र) में पोड़ा भी परिवर्तन ला दे।

प्रधानतः इसी विषेकपूर्ण झुठला के कारण राजा का व्याख्यान तुरंत ही जनता का कोप भाजन नहीं हुआ और वह व्याख्यान यदि उसे व्याख्यान कल्प जाय तो है क्या? वह मनुष्य-जाति के अस्तित्व सामान्य हित तथा सत्य की घृष्टता एवं स्वेच्छाचारपूर्वक की गयी निन्दा है। वह अत्याचारियों के अहंकार को मानव-बलि बढ़ाने की औपचारिक पद्धति है। किन्तु मानवता की सामान्य हत्या करना राजाओं के असामान्य अधिकारों और महत्त्वों में से एक है। क्योंकि जिस प्रकार प्रकृति उन्हें नहीं जानती उसी प्रकार वे भी उसे नहीं जानते और यद्यपि वे हमारी ही जाति के प्राणी हैं तथापि वे हमें नहीं जानते। वे अपने बनाने वालों के देवता बन बैठे हैं। हम व्याख्यान में एक गुण भी है और वह यह है कि इसके द्वारा धोखे की सम्भावना नहीं है। इसमें घुमटा और अस्वाचार का स्पष्ट प्रदर्शन है। इससे हमें किसी प्रकार की दांति नहीं है। इन्ने पढ़ते समय इसकी प्रत्येक पंक्ति हमें यह मानने की विषय करती है कि बिगैन के राजा की अपेक्षा जंगलों में शिकार करनेवाले नये तथा अज्ञातित लोग कम अवगम्य हैं।

‘अमेरिका के निवासियों के प्रति इंग्लैण्ड की जनता का निवेदन’ सीर्यरु-बाले अपने प्रतिद्वन्द्व वृष्टप्रद तथा कपटपूर्ण लेख में सर जॉन डलरिम्पल (Dalrymple) ने कहा कि इस अर्थ साम्यता के आधार पर कि यहाँ की जनता राजा के आडम्बरपूर्ण वर्तन से आतंभित हो जायगी उस व्याख्यान का वास्तविक स्वरूप स्पष्ट कर दिया है जिसकी गर्भा उत्तर की गयी है। लेखक के लिए यह काय वास्तव में मूर्खतापूर्ण था। उस लेखक ने लिखा है—“किन्तु यदि आप ऐसे दास्य के प्रति सम्मान प्रदर्शन करना चाहते हैं जिसके प्रति हमें कोई शिकायत नहीं है (यही लेखक का तात्पर्य ‘स्टैंड एण्ड’ के जंग के समय ‘माइनिंग ऑफ राईसम’ के सामन से है) आप लोगों के लिए वह अनोमनीय है कि आप उस राजा के प्रति उसी प्रकार का सम्मान न प्रदर्शित करें जिसकी स्वीकृति

में दृष्ट होमि। इसलिये अपभ्रुत समय इन की छीनों के समय का वह विन्दु है
जहाँ पहुँचने का सर्वांत अवरोध तथा दूसरी की उचित वृद्धि हो और वह विन्दु है
वर्तमान समय।

पाठक विषयान्तर के लिए मुझे क्षमा करें; क्योंकि जिस विषय की
जहाँ मैंने आरम्भ की थी उसके अन्तर्गत उपायों का समावेश नहीं हो
सकता। अब मैं अपने विषय पर पुनः आ रहा हूँ।

अपेक्षा के साथ सम्बन्धित हो काम और वह अमेरिका का पाठक
समय रहे। यद्यपि आज की अनुसन्धित के अनुसार ऐसा होता विद्यमान सम्भव
है, तो हम लोगों के जो चरण विद्या है या भावे को लेते, उसे चुकाने में
हमारे सभी साधन समाप्त हो जायेंगे। अन्तर्गत के अनुसन्धित विस्तार के कारण
अल्प जिन लोगों से संबंधित किसे पाते हैं केवल पाँच बीघे स्थिति प्रति की
स्थिति की वर के अन्तर्गत मूल्य, बीजनिवेशिका की धारा में पम्पनीय भाव से
अन्तर होता और एक बेनी स्थिति प्रति एकड़ की वर के विद्या से भाव
वर्धित होता।

अब लोगों के विद्युत-मूल्य से विद्या किसी वस्तु के चरण चुकता किया जा
सकता है और हमारा विद्या वरकार के अन्तर्गत को अब करेगा तथा
मुक्त दिनों में पूर्ण रूप से उसे ग्रहण करेगा। इस बात की विद्या नहीं है कि
चरण विद्या दिनों में विद्या जायगा क्योंकि लोगों के विद्युत होने पर उस
का उपयोग चरण देने में किया जायगा और इस काम को पूर्ण करने के
लिए सर्वप्रथम समय में अन्तर्गत राह की विद्युत संस्था रहेगी। अब दूसरे विद्युत
पर विचार किया जाय। अर्थात् वह ऐसा काम कि सब के अधिक वरत और
व्यावहारिक क्या होता—सम्बन्धिता का स्वरूपता?

जो वृद्धि का लक्षण लेकर चलता है, उसके लक्ष्य भाव मूल्य नहीं होते।
इसी आधार पर वे भाव उत्पन्न होता है। स्वतन्त्रता करण है और सम्बन्धिता
अधिक सम्बन्धपूर्ण है तथा उसमें विद्याव्यवहार पूर्ण अन्तर्गत सम्बन्धितार का
लक्षण है। अतः अन्तर्गत का उत्तर अपने आप स्पष्ट हो जाता है।

अमेरिका की वर्तमान अवस्था आशय में किसी की सम्बन्धितार स्थिति के
लिए विद्या का विषय है। इस समय इस देश में न कोई विद्युत है न कोई
वरकार। विद्या पर आचारिक तथा उसके द्वारा स्वीकृत पाठ्य-पुस्तिका के

न हो सकेगा। अभी तक ऐश्वर्य से अमेरिका का परिचय न हो सका और यद्यपि अब तक उसने जो प्रगति की है वह अन्य राष्ट्रों के इतिहास में अद्वितीय है किन्तु यदि अमेरिका को बिधान बनाने का अधिकार प्राप्त रहा होता तो उस समय इसकी जो प्रगति हुई होती उसके आगे बतमान प्रगति बहुत कम है। इस समय इंग्लैण्ड सबपूबक जिसकी प्राप्ति का सोच कर रहा है यदि वह उसे प्राप्त हो जाय तो भी उसका कोई हित नहीं होगा। दूसरी ओर यह मागिती एक ऐसा काय करने में संकोच कर रहा है, जिसकी उपेक्षा से उसका पूर्व विनाश होमा। अमेरिका को जीत लेने से नहीं बरम् उसके व्यापार से इंग्लैण्ड को लाभ होगा और वह उस वषा में भी होता रहेगा, जब कि अमेरिका और इंग्लैण्ड दोनों एक दूसरे से स्वतन्त्र रहेंगे। क्योंकि कई बातुओं के सिण दोनों में से कोई भी अन्य किसी अपेक्षाकृत अच्छे बाजार में नहीं जा सकता। इस देश की स्वतन्त्रता इस समय बिरोध का प्रधान और एकमात्र उचित विषय है जो प्रतिदिन आत्म-यकता द्वारा आधिपत्य सत्तों के समान स्पष्ट और बलवत्तर होता रहेगा क्योंकि एक-न-एक दिन इस देश की स्वतन्त्र होमा है और जिसकी हेर हो रही है काम उठमा हो कठिन होता जा रहा है।

जो व्यक्ति बिना सोचे समझे बोला करते हैं उनकी झुलों की चर्चा करव एकान्त में और जनता के बीच येने प्राम-अपना मनोरंजन किया है। यों तो सुनने में बहुत कुछ आता है किन्तु एक बात जो अधिक सबसामान्य प्रतीत होती है उसकी चर्चा में यहाँ कर देना चाहता हूँ। कहा जाता है कि यदि यह सम्बन्ध-विच्छेद इस समय न होकर बाढ़ से जामीन-न्यास बपों बाद हुआ होता तो महाद्वीप अपनी आधीनता की बेड़ियाँ ताड़ केंकन में अधिक श्रमर्ष होता। मेरा कहना है कि गत कुछ में प्राप्त अनुभव के आधार पर इस समय हमें सैनिक-योग्यता प्राप्त है, किन्तु जामीन-न्यास बपों के बाद यह बूझन्य से समाप्त हो जायेगी। उस समय तक इस देश में न तो एक सेनापति रह जायगा न कोई सैनिक-प्रशासिकादी और हूय या हमारे उत्तमाधिकारी सैनिक-बापों से नितास्त समझित रहेंगे। यदि इस सभ्य पर पूरा ध्यान दिया जाय तो यह प्रभावित हो जायगा कि बतमान समय ही सबभूत बलवत्तर है। चाहें तो हम इस प्रकार भी एक प्रानुष्ट कर सकते हैं कि गत कुछ के ज्ञान में हमें अनुभव या किन्तु संज्ञा में हम ज्ञान दे और जामीन-न्यास बपों बा हम संज्ञा में अधिक और अनुभव

में दूख होने। इसलिए अणुसूक्त समय इन दो छोरों के मध्य का वह बिन्दु है वहाँ रहने का सर्वोत्तम अवसर तथा दूसरे की उचित मूर्ति ही, और वह बिन्दु है वर्तमान समय।

वास्तव विचारात्तर के लिए तुम्हें समझा करें; क्योंकि जिस विषय की चर्चा देने आरम्भ की थी उसके अन्तर्गत अणुसूक्त चर्चा का समावेश नहीं हो सकता। अब मैं अपने विषय पर पुनः आ रहा हूँ।

यदि ब्रिटेन के साथ सम्बन्ध हो जाय और वह अमेरिका का घातक बना रहे, अर्थात् मान की वास्तुस्थिति के अनुसार ऐसा होना निताम्य सम्भव है, तो हम दोनों ने जो फैसला लिया है वा चाये जो होने उसे चुकाने में हमारे सभी साधन समायोज्य हो जायेंगे। अमेरिका के अनुचित विस्तार के कारण प्राप्त विना क्षेत्रों के उचित नियम बनते हैं केवल बीच बीच में स्थापित प्रति की एक-दो तर से उड़का सूखे बौलबरेनिया की मुद्रा में पन्नीस लाख के ऊपर होता और एक ऐसी स्थापित प्रति एकड़ की दर से फिटिया से लाख वर्गिक होता।

इन क्षेत्रों के विच्छेद-रूप से विना किसी बह के बस चुकता किया जा सकता है और उनका फिटिया सरकार के व्यय-भार को कम करेगा तथा कुछ दिनों में पूर्ण रूप से बसे रहूँ करेगा। इस बात की चिन्ता नहीं है कि क्या दिवने दिलों में दिया जायगा क्योंकि क्षेत्रों के विच्छेद होने पर उस काम का उपयोग बहुत होने में किया जायगा और इस काम को दूर करने के लिए वर्तमान समय में अंग्रेज राष्ट्र की विरक्त संस्था छोड़ी। अब दूसरे विषय पर विचार दिया जाय अर्थात् वह ऐसा काम कि अब से अधिक करण और व्यावहारिक बना होगा—सम्बन्धिता का स्वतन्त्रता?

जो प्रकृति का सहारा लेकर चलता है उसके एक प्राण नष्ट नहीं होते? इसी आधार पर ही प्राण उतार देता है। स्वतन्त्रता सरल है और सम्बन्धिता अधिक जटिलपूर्ण है तथा प्रथम विचारानुसार एवं अस्थिर व्यवस्था का स्वरूप है। अणु प्रण का उत्तर अपने आप स्पष्ट हो जाता है।

अमेरिका की वर्तमान अवस्था आमतौर में किसी भी व्यवस्था की प्रति के लिए चिन्ता का विषय है। इस समय इस देश में न कोई नियम है न कोई सरकार। यहूदा पर आधारित तथा उसके द्वारा स्वीकृत धार्मिक-प्रति के

अतिरिक्त अन्य कोई वाहन-शक्ति नहीं है। हम सब ऐसे अपूर्व मावोत्रक के द्वारा सम्बद्ध हैं जो परिवर्तित हो सकता है और जिसे मष्ट करने के लिए हमारा प्रत्येक क्षुब्ध राष्ट्र कार्य-रत है। हमारी वर्तमान स्थिति में व्यवस्था बिना किसी नियम के है बुद्धि बिना किसी योजना के है। यद्यपान बिना नाम का है, और सर्वाधिक विविध बात यह है कि भाषीयता को भावीकार करने की पूर्ण स्वतंत्रता है। यह स्थिति अपन ङंग की एक है। इसके पूर्व ऐसी स्थिति कभी नहीं रही। कहा नहीं जा सकता कि क्या होगा? देश की वर्तमान शिथिल व्यवस्था में किसी व्यक्ति की सम्पत्ति सुरक्षित नहीं है। जनता का अस्तित्व लक्ष्य-बिहीन है और अपने सम्मुख कोई निश्चित सत्य न धाकर वह उस मार्ग का अनुसरण करती है जो उसका बुद्धि-विनाश बचवा भैत उसके सम्मुख प्रस्तुत करता है। जपराय अथवा राजकीय जैसे कुछ रह ही नहीं गया। इसलिए प्रत्येक मनुष्य अपनी इच्छा के अनुसार कार्य करने में स्वतंत्र है। यदि टोरियों को यह पता होता कि देश के नियमानुसार उनके उस व्यवहार का दण्ड है मृत्यु तो कदाचित् उन्हें इतने आक्रमणारम्भ ङंग से एकत्रित होने का साहस न हुआ होता। पूरु में बम्बी बनाये गये इंसानों के 'सैनिकों' तथा अमेरिका के निवासियों के बीच विभाजन-रेखा होनी चाहिए। एक बम्बी है और दूसरा विस्वासपात्रक। सम्बन्ध एक की स्वतंत्रता 'व्यक्त होनी चाहिए और दूसरे का सर काट लेना चाहिए।

बुद्धि के होते हुए भी हमारी कार्य-प्रवृत्ति में एक ऐसी स्पष्ट दुर्बलता है जो मत्त-भेद को प्रोत्साहन देती है। देश का संघटन अधिक शिथिल है। यदि समय रहते कुछ किया नहीं गया तो हमारी स्थिति इस प्रकार की हो जायगी कि उस समय न तो समझोता व्यावहारिक होगा और न स्वतंत्रता ही। राजा और उसके अयोग्य अनुचर महाश्रीप को विभाजित करने के लिए प्रयत्नशील है, और हमारे बीच ऐसे छुद्रकों (Printers) का अभाव नहीं है जो सज्जद कूट का प्रचार करने में व्याप्त रहेंगे। कुछ नाम पूर्व ग्युगर्क के को पत्रों में प्रकाशित होने वाला वह नसात्मक एवं दम्भपूर्ण पत्र दास बात का प्रमाण है कि इस देश में ऐम व्यक्ति है जिनमें या तो विवेक का अभाव है या लबाई का।

समझौते की बात करना शरम है किन्तु क्या ऐसे व्यक्ति गम्भीरतापूर्वक

विचार करते हैं कि यह कार्य चित्ता कठिन है। यदि वही नियम पर देखें
 वे अतर्कित कल्पना हो क्या तो? क्या ऐसा कहते समय के अन्तरात्मा
 उन सभी स्थितियों के समझों का विचार करते हैं। जिसकी परिस्थितियों का
 विचार करना निराला आवश्यक है। क्या वे उन चीजों की दुर्घटना का
 अनुभव करते हैं। जिसका सर्वस्व स्वाहा हो चुका है। अथवा क्या वे उन स्थितियों
 के दुर्घटनों को अपना कुछ समझते हैं। जिन्होंने देश की स्वतन्त्रता की रक्षा
 के लिए अपना सब कुछ त्याग दिया है। यदि हमका यह अधिकारपूर्ण निर्णय
 मान्य अतिरिक्त परिस्थिति के अनुसार है तो हम निर्णय कर दें उसे अनुचित
 कर सकते हैं।

युद्ध लोगों का कहना है कि हमें सन् १७६३ ई० की स्थिति में एक दिया
 चाल। इस विषय में कुछ यह कहना है कि इस अवस्था को चुन करना ब्रिटेन
 के मन की बात नहीं है और न तो यह बर्बाद करना चाहें। मान लिया कि
 इस प्रकार का कोई समझौता हो गया तो किन्हीं प्रकार इस घट्ट एवं अधिक-
 पक्षपूर्ण सरकार के हाथ कस समझौते का निर्वाह करना सामान्य? दूसरी
 बात नहीं वर्तमान संसद की बात में इस समझौते की धर कर सकती है
 और वास्तविकता यह उनके प्रस्तुत कर सकती है कि यह समझौता हितापूर्वक
 मान्य किया गया था एवं अधिकारपूर्ण स्वीकार किया गया था। मैं दूखता
 है कि इस क्या है हम क्या करेंगे? लोगों के विरुद्ध किसी व्यापार में
 सुधारना नहीं कहाया जाता। वही तोल और समझार के हाथ निर्णय होता
 है। सन् १७६३ ई० की स्थिति में होने के लिए हमारा ही पर्याप्त नहीं है
 कि उस समय के नियमों को ही क्या मान करण हमारी परिस्थितियों की
 रीति हो होनी चाहिए। हमारी अतिरिक्त स्थिति की पूर्ति की बात हमारे
 सब सामयिक प्रश्नों को चुनना किया जाय ऐसे नुराज के लिए हमने
 लिया था अथवा एक राष्ट्रीय समय में हमारी की स्थिति की, हम अपने
 अतिरिक्त हीन क्या को प्राप्त होये। यदि एक वर्ष पूर्व हम प्रकार की कार्यना
 पूरी करी होती तो नारे महादीप का हमें भीत दिया गया होता किन्तु यह
 समय निम्न चुका है।

एक बात और है। केवल अर्थ-वित्तिक चित्तों नियम को धर करने के लिए
 यह करना देवी नियम के अनुसार प्रस्ताव ही अनुचित और वास्तविक अनुम-

दियों के उतने ही विपरीत है जितना उस नियम को स्वीकार करने के लिए आज उठना। दोनों द्वायों में साम्य साधन का अविष्य सिद्ध नहीं करता क्योंकि इन मुख्य बातों के लिए मनुष्यों का समिधान उपयुक्त नहीं है। हम पर हिंसा की मयी है और भविष्य में हिंसा करने की यमकी भी मयी है। सचर सेना के द्वारा हमारी सम्पत्ति मण्ट कर दी गयी है और हमारे देश पर तोप और ससवार के द्वारा आक्रमण किया गया है। इन दुष्कर्मों के उत्तर में अस्त्र उठाना म्याय-संवत है और जिस सण इस प्रकार की सचर सुरदा-वदति आवश्यक हुई उसी समय ब्रिटेन की आधीनता सपात हो जानी चाहिए थी। जिस समय ब्रिटेन के विरुद्ध हमारी बन्धुस पहली गोली निकली उस समय से अमेरिका की स्वाधीनता का आरम्भ मानना चाहिए।

निम्नांकित समयोचित और अच्छे उद्देश्य स प्रेरित संकेतों के साथ-साथ मैं अब इस विषय की बची समाप्त करूँगा। हमें यह सोचना चाहिए कि भविष्य में स्वतंत्रता प्राप्ति के तीन मिस-मिस साधन हैं। उनमें से एक-एक निमित्त रूप से अमेरिका के माम में है। के तीनों साधन इस प्रकार हैं—जनता की राष्ट्रेण द्वारा र्वय माय सभिर-दाति और अम्यवस्थित जन-समुदाय द्वारा आन्दोलन। यह सबंदा संभव नहीं है कि हमारे सनिक नापरिक ही हों और अम्यवस्थित जन समुदाय बुद्धिमान व्यक्तियों का समाज हो। जैसा कि मैंने पहले कहा है सबाबार र्वयुक्त नहीं होते और न तो वे सादयत हैं। यदि उपर्युक्त साधनों में से प्रथम के द्वारा स्वतंत्रता प्राप्त की जाय तो पुष्पी पर सर्वोत्तम और पवित्रतम संविधान बनाने के लिए उपयुक्त सभी अवसर और प्रोत्साहन हमें प्राप्त हैं। सधि वा पुनरि धान करना हमारे बच की बात है। सधि के आरम्भ से आज तक कभी भी ऐसी स्थिति उत्पन्न नहीं हुई थी। एक नवीन संसार का सम्मेष सनिकट है और सम्भवतः सम्पूर्ण यूरोप की जनसंस्था के बराबर संख्या वाला मनुष्यों का एक समुदाय कुछ महीनों की घटनाओं के द्वारा अपना स्वातन्त्र्य अधिकार प्राप्त करेगा। इस दृष्टिकोण के साथ जब मैं विचार करता हूँ तो नवीन सृष्टि के निर्माण-कार्य के समया कुछ दुर्बल या स्वार्थी मनुष्यों के मुख्य विरोध मुझे अत्यधिक हास्यास्पद प्रतीत होते हैं।

यदि हम वर्तमान अनुकूल एवं आकर्षक काल की छोटा करेंगे और भविष्य में किसी अन्य साधन के द्वारा स्वतंत्रता की प्राप्ति करेंगे तो उसके परिणाम बन

उत्तरदायित्व हमारे सर पर होना अवश्या वास्तव में उनके सर पर होना जिनकी संवेगशक्ति और दक्षतापूर्वक आत्मार्ष, स्वभावतः हमारे प्रयत्न का विरोध कर रही है। स्वतन्त्रता के अवर्धन में ऐसे ठोस प्रयत्न किये जा सकते हैं जिन्हें सार्वजनिक रूप से कहा नहीं जाया चाहिए, वरन् व्यक्तिगत रूप से जिन पर विचार करना चाहिए। इस समय हमें इस विचार में नहीं पड़ना है कि हमें स्वतन्त्र होना चाहिए वा नहीं किन्तु हम सुरक्षित और सम्मानपूर्वक आचार पर स्वतन्त्रता को प्राप्त करने की विन्यास करनी चाहिए और इस बात के लिए धैर्य रखना चाहिए कि कार्य अभी पूरा नहीं हो पाया। प्रत्येक विषय उसकी आवश्यकता को स्पष्ट करता जा रहा है। यहाँ तक कि टोरियों (यदि हमारे बीच ऐसे व्यक्ति हैं) को भी इस कार्य को पूरा करने में सबसे अधिक इच्छुक होना चाहिए, क्योंकि यह प्रकार परिस्थितियों की निपटिका में जनता के बीच से उनकी रक्षा की इसी प्रकार बुद्धिमत्तापूर्वक उत्तर ही उनकी सख्त सुरक्षा का साधन होगी। इस लिए यदि 'सिंह' होने के लिए पर्याप्त साधन उपलब्ध नहीं हैं तो कम से कम स्वतन्त्रता की इच्छा करने की बुद्धिमत्ता तो हमें ही चाहिए।

स्वतन्त्रता ही हमें बच कर एकता में एक करती है। उसके बाद हमें अपना मार्ग दिखाई पड़ेगा और हमारे काम बहुमूल्यकारी तथा निर्दय धर्म की योजनाओं के प्रति ईर्ष्या रूप से बन्ध रहिये। तब हम भी ब्रिटेन के साथ व्यवहार करने के लिए उचित उत्तर पर पहुँचेंगे। क्योंकि वह बात सैदा संकेतपूर्ण है कि नमस्कार के समय जिन्हें विरोधी शक्ति कहा जाता है उनकी अपेक्षा धार्मिकों को ठर करने के लिए स्वतन्त्र अमेरिका के विचारधर्मों के साथ व्यवहार करने में ब्रिटिश सरकार के अभिमान को कम ठेक पहुँचिये। हमारे विचार करने से ब्रिटेन को प्रोत्साहन मिलता है और हमारी नम्र प्रति केवल कुछ को दया रही है। हम लोगों ने, बिना किसी लाभ के, अपनी अनुविधानों को दूर करने के लिए व्यापार को रोक रखा है। अब हमें हमारे मार्ग का अवलम्बन करना चाहिए, क्योंकि स्वतन्त्र रूप से अपनी इन अनुविधानों को हम दूर करें, और फिर व्यापार-सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास करें। ईंग्लैण्ड के व्यापारी और बुद्धिमान लोग फिर भी हमारा साथ देते क्योंकि धार्मिक-हीन कुछ की अपेक्षा व्यापार-मुक्त धार्मिक बेहतर है। यदि वह प्रयास ब्रिटेन को स्वीकृत न हो तो हमें बन्ध राहों की ओर मुड़ना चाहिए।

इस पत्रिका के प्रथम संस्करण में प्रकाशित सिद्धांत का किसी ने विरोध नहीं किया है। यह भी इस बात का प्रमाण है कि या तो इस सिद्धांत का विरोध हो नहीं सकता अथवा इसे मानने वालों की संख्या इतनी अधिक है कि इसका विरोध नहीं किया जा सकता। अस्तु संदेह अथवा संकापूर्ण कौतूहल के बाद एक दूसरे की ओर विहारण के बदन हम लोगों में से प्रत्येक अपने पड़ोसी के सामने मीठी का स्नेह-मूख हाथ बढ़ाने और एक ऐसी स्थिति के निर्माण में संकठित हो जो हमारे पूर्ब मत-भेदों को बिस्मृति के गर्भ में छिपा दे। द्विप और टोरी का अन्तर मिट जाय और गुनामरिक निरुद्ध एव हृदय मित्र तथा अमेरिका के स्वतन्त्र राष्ट्र एवं मानव के अधिकारों के सकारित्व समर्थक के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार के व्यक्ति हमारे बीच न रहें।

अमेरिका का संकट

[१ और १३]

संकट के इन्हीं क्षणों में मानव-आत्मा की परख होती है। जबवरबायी सैनिक और देश भक्त इस संकट में देश की सेवा में पुण माइ सगे किन्तु जो इस समय देश की सेवा करेगा वह जनता के प्रेम तथा धन्यवाद का पात्र होगा। मरक के समान, अत्याचार पर भी विजय पाना सरल नहीं है। फिर भी हमें इस बात की सात्वना है कि संघर्ष जितना कठिन होगा, विजय उती माना में औरबास्तुद होती है। हम जिस वस्तु का जितने कम मूल्य में पाते हैं हमारी दृष्टि में उसका महत्व उतना ही कम होता है। केवल मूल्य अधिक होने से वस्तुओं को वास्तविक मौरव प्राप्त होता है। ईश्वर अपनी वस्तुओं का मूल्य-निर्धारण करना जानता है। वास्तव में यदि स्वतन्त्रता जैसी वस्तु का मूल्य अधिक न हो तो यह बड़े आश्चर्य की बात होगी। ब्रिटेन ने घोषणा की है कि उसे केवल कर सपाने का नहीं बरन् प्रत्येक दशा में हमें धोयने का पूरा अधिकार है। यदि इस प्रकार से र्थ पाना दासता नहीं है तो मैं कहूंगा कि दुष्वी पर दासता जैसी कोई वस्तु है ही नहीं। उन्मुक्त घोषणा भी अपवित्र है क्योंकि इतना मसीम अधिकार केवल ईश्वर का हो सकता है।

ये इस विवाद में नहीं पहुँचा कि इस महाद्वीप की स्वतंत्रता 'आत्यधिक' पीछे बचवा आत्यधिक विनाश से बचाने की गयी। ऐसा मत है कि यदि यह कार्य अपेक्षाकृत बाध नहींने पूर्ण हुआ होता तो अधिक बचवा रहा होता। यह पीछेबासी का अधिक उपयोग हम लोग नहीं कर सके और आधीनता की इस स्थिति में हम कर भी नहीं सकते थे। तथापि हमारी शक्ति नहीं हुई है। होम्स (Homes) यह मान लक को कुछ करता रहा है, वह दिखाने नहीं बरम् भुक्त-भार है जिसे एक वर्ष पूर्व जर्सी (Jersey) की शक्ति सवात कर लिए होती। समय एवं हमारे इस अवलोकन को ध्यान-पूर्ति कर देंगे।

ये सम्भवितवादी नहीं हैं किन्तु सच से मैरी यह बात मान्यता रही है कि स्वतंत्रतावादी ईश्वर अपने लोगों को केवल द्वारा विनष्ट होने के लिए कदापि नहीं छोड़ेंगे। बचवा हम लोगों को निष्कृष्ट नहीं रहने देंगे किन्तु बचाई के कम आश्वासन बुद्धि द्वारा आत्यधिक अत्यधिक विनष्ट करने के सहारे कुछ की आशाओं से बचने का अवलोकन किया है। साथ ही साथ मैं इसका तर्किक भी नहीं हूँ कि यह मानूँ कि ईश्वर ने सत्ता की शक्तियों को पूरी सृष्टि दे रखी है और हमें शक्तियों की आशा रहने को छोड़ रखा है। ईश्वर का राजा किन्तु आश्वासन पर ईश्वर है ब्रह्मप्राप्ति की आर्षिका कोणा ? अपने पक्ष के सम्बन्ध में वह जो कुछ लक्ष्य वा महाना कोणा वह तो अत्यधिक आश्वासन द्वारा बाध बचवा और अनुष्ठान किया करता है।

बार्डन किसी देश में कभी-कभी इसी पीछेप्रापूर्वक रूप बाध है कि लोगों को हम सब आश्वासन देना है। सभी राष्ट्रों और युद्धों ने बार्डन का अनुभव किया है। अर्थ के चिन्ता केरी बानी बीडरों के देश के आश्वासन पर ईश्वरीय कोन उठा वा ? अन्तर्ही अन्तर्ही में अर्थ को भुक्त करने के बाद अर्थ के कारण ईश्वरीय की अनुष्ठान के कारण कुछ अर्थों पर वह पीछे लगे दी गयी। "बोन बाध बाध" नाम की शक्ति के अन्तर्गत में केना की कुछ अनुष्ठानों ने यह अर्थ दिया। तथा ही बचवा होता, कि ईश्वर किसी 'जर्सी' (Jersey) की को ऐसी प्रेरणा देता कि वह अपने देशवासियों की उत्तमिष्ठ करने कुछ अर्थ आश्वासन से पीछे अनुष्ठानों की रखा करती।

कुछ स्थितियों में बार्डन के भी नाम होता है। उसके कारण अर्थों का पीछे विनाश होता है तथा वह अपेक्षाकृत अधिक बढ़ता प्राप्त करता है। किन्तु

सबसे बड़ी बात यह है कि आतंक सभाई और कपट की कसौटी है जिसके द्वारा जस्तुओं अपना मनुष्यों की वास्तविकता का पता चल जाता है। वास्तव में युद्ध विषयसमाप्तियों पर आतंक का वही प्रभाव पड़ता है जो एक हत्यारे पर कानूनिक धून का। आतंक मनुष्यों के युद्ध विचारों को सब पर प्रसर कर देता है। जिस दिन होव (Howe) डेलवेयर (Delaware) नदी के किनारे पहुँचा उस दिन कितने युद्ध टोरियों ने अपना असली रूप प्रकट किया जिसका परिणाम उन्हें पश्चातापपूर्वक भोगना पड़ा।

यै 'ली' (Lee) के सिने की सेना के साथ या और उसके साथ-साथ रॉडरदे तिया की सीमा तक गया था। यहाँ मैं बहुत-सी परिस्थितियों से उनकी अपेक्षा अधिक परिचित हूँ जो दूर से और जिन्हें उन परिस्थितियों का कम ज्ञान है। वहाँ पर हवाई स्थिति बहुत संकटपूर्ण थी। हम नार्थ (North) नदी और हैकेनसैक (Hackensack) नगर के बीच वाले संकरे भू भाग में थे। हमारी शक्ति थोड़ी थी वहाँ तक कि वह 'होव' (Howe) की शक्ति का चौथा भाग भी नहीं थी। दुर्ग रक्षा सेना की सहायता के लिए हम लोगों के पास कोई सेना नहीं थी। हमारी युद्ध-सामग्रियाँ इस हाँका से स्थानांतरित कर दी गयी थीं कि कदाचित् 'होव' (Howe) 'जसी' में प्रवेश करने का प्रयत्न करे और उस स्थिति में यह जिया हमारे किसी काम का न रहे। क्योंकि प्रत्येक विचारवान व्यक्ति चाहे वह सेना में रहे कुछ हो या नहीं इतना सोच सकता है कि ऐसे साधारण दुर्ग केवल अस्थायी उपयोग के लिए होते हैं और जिन वस्तुओं को रक्षा के लिए इनका निर्माण होता है उन्हें हथियाने के लिए जित्त समय शत्रु इनकी रक्षा में प्रस्थान करता है उसी समय इनकी उपयोगिता समाप्त हो जाती है। २० नवम्बर के प्रातःकाल उस दुर्ग में यह स्थिति थी। उसी दिन यह सूचना प्राप्त हुई कि दो सौ मोरात्रों के साथ शत्रु गाथ बीच की दूरी पर नदी के किनारे उत्तर पड़ा है। मेजर जनरल चीने ने रण-सेना का तुरन्त तैयार होने का आदेश दिया, और जनरल वाशिंगटन के पास एक दूत भेजा गया। उस समय जनरल वाशिंगटन 'हैकेनसैक' (Hackensack) नगर में थे जो कि हम लोगों के स्थान से नदी पार करके जाने पर, छ. मील दूर था। हैकेनसैक के पुल की रक्षा करना हमारा प्रथम लक्ष्य था। वह पुल हमारे छ. मील और शत्रु से तीन मील पर था। जनरल वाशिंगटन तुरन्त तीन घण्टे

के शर का पहुँचे और सेना का नेतृत्व करते हुए पुनः लड़ गये। उनमें से कुछ के लिए हथके रखकर सेना ठीक न समझ और हमारी सेना का अधिकतम भाग पुनः के हाथ तथा कुछ और बौका द्वारा गरी को पार कर गया। छद्मों पर शिष्टता सामान्य नर शरणा या शरणा हम लोग से भागे, देव नष्ट हो गया। यह समय हमारा लक्ष्य था सेना को एक ऐसे स्थान पर पहुँचा देना जहाँ इसे 'बर्मी' का पेंसिलवेनिया की सेना के सहयोग मिल सके। हम लोग चार दिनों तक न्यूयॉर्क में रहे; पूर्णतः दुर्घटियों को एकत्रित किया गया और हमें बर्मी की सेना का सहयोग भी प्राप्त हुआ। जब हम बर्मी को यह सूचना मिली कि हमें बर्मी बर्मी का रहे है तो यद्यपि हमारी छवि उनकी छवि से कम थी तथापि हम लोग हमें का सामना करने के लिए दो बार भागे गये। मेरे गठ में होम (Home) ने पुनः की। यह स्टेट (States) की सेना बहुत बड़ी सेना के एक भाग की एम्बोय (Amboy) के मार्ग के जाने बड़े का मार्ग पर स्थित होता तो इस प्रकार यह बर्मी (Barnsbrick) में हमारा सब सामान हथिया लेता और पेंसिलवेनिया में हमारी प्रवृत्ति रोक देता। किन्तु यदि हम नरक की कोशिश छवि में विराम करते हैं तो कभी प्रकार हमें यह भी मानना चाहिए कि उनके कार्यकर्ता किसी भी निर्वन्धन में रहते हैं।

हम लोग 'डेलावेयर' (Delaware) तक किस प्रकार पहुँचे इसका कुछ विवरण न देकर केवल इसका कह देना में पर्याप्त समझता हूँ कि हमारे बर्मी-बिकायी और सैनिक सभी लोगों ने लड़ते तथा सैनिक-साधना का पूरा परिचय दिया। यद्यपि वे कभी-कभी और पीड़ित थे उन्हें प्रायः बिना विधान तथा भोजन व कपड़े के रहना पड़ा क्योंकि बहुत दिनों तक पीछे हटने का यह बर्मी-बाप परिणाम था फिर भी उन्होंने सब कुछ धैर्यपूर्वक सह लिया। वे केवल बर्मी चाहते थे कि उनमें को पीछे हटने में देव उनका साथ दे। वॉल्टेयर (Voltaire) ने कहा है कि राजा विलियम (King William) का पूर्ण व्यक्तित्व केवल मुँह और बाह्यिक कार्य के कारणों में प्रदर्शित था। जनरल वॉलिंगटन के बारे में भी यही कहा जा सकता है। कुछ विलियमों में हम प्रकार की दृष्टि होती है कि वे बाह्यतः स्थितियों के प्रभावित नहीं होते किन्तु यदि वे किसी प्रकार प्रभावित हो जाते हैं तो उनकी प्रकृति सहनशीलता

प्रकट होती है। मैं इस गुण की गणना ईश्वर-ग्रन्थ उन सार्वजनिक बरदानों में करता हूँ जिन्हें हम सुरत नहीं जाम पाते। ईश्वर ने वासिगटन को इस बरदान के साथ-साथ अबाधित स्वास्थ्य और चित्ता में भी विकसित होनेवाला मस्तिष्क प्रदान किया है।

अमेरिका के कार्यों की स्थिति-विषयक सामान्य धर्मा बरके मैं इस पक्ष को समाप्त करूँगा। उस धर्मा का आरम्भ मैं एक प्रश्न से कर रहा हूँ। न्यू ईंग्लैण्ड के प्रांत्तों को शत्रु ने क्यों छोड़ दिया है, और उन बीच के प्रांत्तों को मुद्र-सेन क्यों बना रखा है? उत्तर सरल है। न्यू ईंग्लैण्ड टोरियों से पीड़ित नहीं है, जब कि हम पीड़ित हैं। ऐसे व्यक्तियों के विरुद्ध स्वर ऊँचा करते समय मैं सर्वत्र नम्र रहा हूँ और मैंने उनके सट्टों को स्पष्ट रूप से उन्हें समझाने के लिए अगणित तर्क प्रस्तुत किये हैं किन्तु उनकी मूर्खता अथवा नीचता के कारण एक संसार को नष्ट नहीं होने दिया जायगा। अब वह समय आ गया है जब कि वे या हम अपने विचारों को बदल दें अथवा दो में से एक का विनाश निश्चित है। मैं पूछता हूँ कि टोरी हैं कौन? यदि वे राज उठावें तो एक सहस्र टोरियों के विरुद्ध मैं केवल सौ क्लिगों को लेकर जाने में तमिक भी भयभीत न हूँगा। प्रत्येक टोरी भीर होता है क्योंकि दासता और स्वार्थ पर आधारित नय ही उसे टोरी बनने के लिए विवश करते हैं। इस प्रकार के प्रभाव में रहनेवाला व्यक्ति निर्दय नसे हो किन्तु वह भीर नहीं हो सरता।

किन्तु इसके पूर्व कि हमारे और उनके बीच अमिट विभाजन ऐसा स्थायी जाय अथवा यह हागा कि हम परस्पर तक पूरक विचार-निर्माण कर लें। टोरियों का चरित्र शत्रु के लिए निमंत्रण है। फिर भी उनके बीच सहस्र में एक व्यक्ति भी इतना साहसी नहीं है कि यह श्रुति रूप से शत्रु का साथ दे सके। उन लोगों ने 'होव' (Howe) को उसी प्रकार घासा दिया है जिस प्रकार उन्होंने अमेरिका के राज्य को दाति पहुँचायी है। होव (Howe) को माया है कि वे लोग राज उठाकर उसका साथ देंगे। जब तक वे टोरी वर्गों पर बन्दूक रखकर उसकी सहायता नहीं करते, तब तक उसके लिए इनके मर्तों का कोई भूझ नहीं है क्योंकि होव (Howe) समिकों का चाहता है टोरियों को नहीं।

एक बार मैं टोरियों के सिद्धांत पर फट्ट हुआ था और वीगे अवसर पर

प्रारंभिक धर्मिता का कष्ट होना स्वाभाविक है। एक प्रसिद्ध टोपी को कि एम्बोय (Amboy) के एक पवित्राश्रम का स्वामी था, आठ या नौ वर्षों के एक वर्षभर सुन्दर लड़के का हाथ पकड़े अपने घर के द्वार पर खड़ा था। स्वतंत्रता-युद्ध होने विचारों को प्रकट कर लेने के बाद, अन्त में उसने अनुरोध विज्ञापन के रूप में कहा 'मुझे अपने जीवन-भर धर्मिता के रह लेने दो। इस महाद्वीप में एक भी धर्मिता ऐसा नहीं है जो यह विचार न करता हो कि एक-एक दिन शिर में से सम्पत्ति-विचार हल्ला है। अस्तु, एक अन्त-भवा विज्ञापन को यह कहना चाहिए कि यदि ईश्वर आकर ही रहेगा तो मेरे जीवन में ही या बाहे, विचारों से ही सदा धर्मिता-युद्ध रह सके। इस प्रकार का विचार प्रत्येक धर्मिता को उसके कर्तव्य का बोध करा देने के लिए पर्याप्त है। विश्व का कोई देश अमेरिका के समान धर्मिता-भरी नहीं है। अमेरिका कलह-कोलाहलपूर्ण विश्व में दूर है। ऐसे संसार के साधन-आचार के अतिरिक्त उसे कुछ नहीं करना है। विश्व प्रकार में यह विचार करता है कि ईश्वर सृष्टि का साधन करता है, उन्हीं प्रकार में यह भी मानता है कि जब तक अमेरिका विदेशी प्रभुत्व के मुक्त नहीं होता जब तक उसे आत्म-नहीं प्राप्त हो सकता। स्वतंत्रता-धर्मिता वह विचारों में कुछ होते रहे और अन्त में इस महाद्वीप की शिखर हामी। क्योंकि स्वतंत्रता की लड़ाई कुछ समय के लिए चलत रही हो कार्य उसकी शक्ति कभी भी कुछ नहीं बढ़ती।

अमेरिका में कभी भी धर्मिता का अभाव न था और न है किन्तु उस धर्मिता के अतिरिक्त शक्ति का अभाव अभाव था। कुछ एक दिन में प्राप्त नहीं होती और हमें कोई आश्चर्य नहीं है कि हम कर्मधार्य में भूल कर बैठते हैं। धर्म की अविनाश के कारण हम लोग ऐसा तैयार करना नहीं चाहते कि और सुदृष्ट के अतिरिक्त, देव-रक्षा अन्त-भवा द्वारा अस्थायी सुरक्षा पर ही निर्भर है। धर्म के दिनों में हमें भी अनुभव प्राप्त हुआ उसके अपने बहुत कुछ सीखा है। तो भी, जन-सैनिकों की टीमियों के अतिरिक्त प्रदल के द्वारा हमने धर्म की धर्मिता को सीमित कर दिया। ईश्वर की धर्मधार है कि वे टोपियां पुनः धर्मिता होने लगे नहीं। वे देव-रक्षा अन्त-भवा को आधुनिक प्रदल के लिए हम के अन्तरीक्ष-टीमियों मानता है, किन्तु धर्मधार्य धर्म के लिए वह अनु-गुप्त है। अन्तर्गत है कि होर (Howe) हम सब पर आक्रमण करे। यदि

बह डेलवेयर (Delaware) के इस पार असफल हो जाता है तो उसका सारा प्रयत्न व्यर्थ हो जायगा । किन्तु यदि वह सफल होता है, तो हमारे मध्य को कोई शक्ति नहीं होती । हमारे एक बंध के विरुद्ध उसने अपना सर्वस्व दांव पर लगा दिया है । मान लिया कि वह सफल होता है, तो परिणाम यह होगा कि महाद्वीप के दोनों छोरों से सेनाएँ उनकी सहायता के लिए जल पड़ेंगी जो इन बीच के प्रदेशों में सथाये जा रहे हैं । होव (Howe) सर्वम नहीं जा सकता । मैं होव (Howe) को तोरियों का सबसे बड़ा शत्रु मानता हूँ । वह उनके देश में घुस सा रहा है होव और तोरियों के कारण ही देश में घुस हा रहा है अत्यन्त घाति होती । यदि होव देश के बाहर अभी निवास दिया गया तो मेरी हार्दिक इच्छा है कि 'ड्विप' और 'टोरी' का भेद सदा के लिए दूर कर दिया जाय; किन्तु यदि टोरी उसे आगे बढ़ने का प्रोत्साहन देते हैं बल्वा उसके आ जाने पर उसकी सहायता करते हैं तो मैं चाहूँगा कि दूसरे वर्ष हमारी सेना उन्हें देश से बाहर निकाल दे और कांग्रेस उनकी संपत्ति पर अधिकार करके उन लोगों की सहायता में उसका उपयोग करे जो देश-सेवा के कार्य में पीड़ित हुए हैं । आसामी वर्ष का एक ही सफल युद्ध इस काम को पूरा कर देगा । उन कुष्ठ व्यक्तियों की सम्पत्ति का अपहरण करके अमेरिका दो वर्षों तक घुस कर सकता है, और उनके देश-अहिंस्य होने पर आनन्दित होगा । यह न कहिए कि यह बकवास है । यह मान उन पीड़ित व्यक्तियों का नम्र श्रेय है जिनकी दृष्टि में सार्वजनिक हित के अतिरिक्त अन्य कोई उद्देश्य नहीं है तथा जिन्होंने सदाय प्रसीध होनेवासी पटना के लिए अपना सब कुछ दांव पर लगा दिया है । परन्तु निर्विषय कठोरता के प्रति कोई भी एक प्रस्तुत करना मूर्खता मान है । बलवृद्धा कानों को प्रभावित कर सकती है । वेदना की बाली कस्या के आसू बहा सकती है किन्तु धूर्तधारणा के कारण गल्बर बने हुए हरय तक किसी की गति नहीं हा सकती है ।

इस कोटि के व्यक्तियों की छोड़ कर, एक निज के स्नेहपूर्ण उत्साह के साथ मैं यह उन लोगों से कुछ कहना चाहता हूँ जिन्होंने स्तुत्य कार्य किये हैं और जो मरिच्य में भी उसी प्रकार कार्य करभ के लिए इच्छा-संकल्प हैं । मैं इस प्रान्त या दूसरे प्रान्त के कुछ लोगों से नहीं बरन् सभी लोगों से यह रहा हूँ कि आप लोग हमारी सहायता करें । जब इतने बड़े मध्य की प्राप्ति के लिए हम प्रयत्न

कर रहे हैं तो अपनी शक्ति को समाप्तमग्न अधिक करना अच्छा है। इस माफी
 मिल को यह कहने का अवसर है कि दीलकाल के माध्य में जिस समय बाप
 और बचपार के अतिरिक्त अन्य कुछ बचन नहीं हो सकता वा सामान्य आपत्ति
 के बराबर होकर, अमेरिका के बर और बीच संवत्त होने तथा भय के इस
 फारस को दूर करने के लिए दक्षिण हुए। भुल जाये कि हमारे इन्होंने व्यक्ति
 मष्ट हो चुके हैं; यह लड़क को संख्या में आगे बढ़िए और आप के ऊपर अपना
 भार न छोड़ कर अपने निरवाह को कार्यरूप में अवस्थित कीजिए जिससे ईश्वर
 आपको बायीं बाई दे। आप चाहें किसी प्राण के रहने वाली हों अपना जीवन
 के चाहे किसी भी स्तर पर हों अनिष्टाप और वरदान दोनों में आपका
 बंध होना। दूर और निरट के अनेक नीतियों और जीवन का दृष्टिकोण बनी
 और निर्बल सभी समाज रूप से कुछ बचवा मुक्त के बायीं होंगे। जो हृदय इस
 समय आत्म-भूम्य है यह मृत है। माफी सम्पूर्ण उसकी कार्यरता को बिहारीनी
 जो ऐसे समय पीछे हटता है जबकि बीड़ी-बी घण्टि पुरे देश को बचकर उसे
 बुझी बना देती। ये उस आत्मी को प्यार करता है जो संकटों में मुस्कुरा
 सकता है, जो आपत्तियों से उत्थित प्राप्त करता है और विवेक के हाथ और
 करता है। बीछे हटना युद्ध मस्तिष्क वाली का काम है। किन्तु जिसका हृदय दृढ़
 है, और जन्म-करत जिसके परिवार का सम्बन्ध करता है। ये जीव मृत्यु पर्यन्त अपने
 सिद्धांतों का अनुसरण करते हैं। स्वयं मेरे लिए, मेरी लक्ष्य-व्यक्ति अकाश-रहित
 के समान सरल और स्वच्छ है। मेरा दृढ़ निश्चय है कि विश्व भर का कोप
 मुझे आत्मसन्तुष्टि के लिए प्रेरित न कर पाता क्योंकि इसे मैं हल्का
 मानता हूँ। किन्तु यदि एक ओर मेरे घर में कुछ जाता है, मेरी सम्पत्ति को
 अनाठा वा भष्ट करता है। मुझे तथा मेरे परिवार के अन्य सदस्यों को धारता
 है अपना अनेक दया में अपनी निर्दुःख दृष्टि हाथ मुझे बचाने की बचनी
 देता है। तो क्या मैं इसे नहीं? मेरे लिए इन बातों का कोई भार नहीं है कि
 यह चीज है एक राजा वा साम्राज्य आत्मी, मेरे देश वा सिवाही वा विदेशी।
 कोई एक दुष्ट दृष्टि कृत्रिम कार्य का करता है अपना दुष्टों की एक देना। यदि
 इन मुक्त रूप से विचार करें तो हमें कोई अन्तर न मिलेगा और न इस बात
 के लिए पर्याप्त कारण दिया जा सकता है कि एक स्थिति में हम उसे दूर हों
 और दूसरी स्थिति में उसे धका कर दें। मुझे राय-सोझी कहा जाना है इसे

स्वीकार करता है। इससे मेरा कुछ बिगड़ता नहीं है। बिन्तु निश्चित रूप से मर लिए वह महान दुःख की बात होगी यदि मैं एक ऐसे राजा की राज शक्ति स्वीकार करके अपनी आत्मा को अपवित्र करूँ जिसका माचारण एक नया-मूढ़, मल्लू हठी तथा अयोग्य व्यक्ति के समान है। कुछ स्थितियाँ ऐसी होती हैं जिनके बारे में जो कुछ कहा जाय सब थोड़ा है। वर्तमान स्थिति उनमें से एक है। कुछ मनुष्य ऐसे होते हैं जो बाकी दुःखियों को पूर्णरूप से समझ नहीं पाते। वे यह सोच कर संतुष्टता प्राप्त कर लेते हैं कि यदि वानु बिगड़ी हो गया तो वह उन पर क्या करेगा। जिन्होंने म्याय करना स्वीकार नहीं किया उनसे क्या की जाय करना मूर्खता की पराकाष्ठा है। जहाँ विजय सदा है वहाँ दया भी केवल दुःख-सम्बन्धी बात होती है। गौरव की धूर्तता और विह्वल का हिंसात्मक आक्रमण दोनों प्राणपातक होते हैं और हमें दोनों के प्रति सज्जन रहना चाहिए। कुछ समय का बर और कुछ वचन देकर 'होब' जनता को धूल रत देव तथा उसकी दया प्राप्त करने के लिए अस्तित्व करना या सज्जन बाह्य है। मंत्रिमंडल ने गेज (Gage) को मही करने को कहा और दोरियों के अनुसार मही घाति स्थापना है—वह घाति जो समय से परे है। यह वह घाति होगी जिसके दुराचार ही इतना अधिक बिनाश होगा जिसकी हम सोच करपना भी नहीं कर सकते। वैश्वविद्या के विचारों का इन बातों पर विचार कीजिए। यदि सीमान्त की कान्ठियाँ धूल रत दें तो वे सुवर्जित रेड-हन्डिबनों की सजा बन चिकार होंगी, कदाचित् टापी इराक लिए बुझी न होंगे। यदि भीतरी कान्ठियाँ धूल रत दें तो कर्तव्य-बुद्ध होन व अपराध में सीमान्त कान्ठियाँ अपने इच्छानुसार उगह दह देंगी। यदि कोई प्रान्त हविषार काम दे, तो वेप प्रान्तों के रोप से उठे अपान के लिए "होब" को ब्रिटिश सेना और क्रिया पर रखी गयी जमन सेना को उस प्रान्त में भर देना पड़ेगा। पारस्परिक प्रेम की श्रुतता में पारस्परिक डर मुख्य कड़ी है और जो प्रान्त उस सम्बन्ध को ताड़ उसने लिए वह दुःख की बात होगी। होब (Howe) आप लोगों को निदय बिनाश की ओर जाने का निर्मण दे रहा है। जो इसे नहीं समझेंगे व या तो पाठ होने या मूर्ख। यह मेरा कल्पना बिनाश नहीं है बरन् मैं सरसत्रम भाषा में राज्य को स्पष्ट रूप से आपकी बातों के सम्मुख रखने के लिए उन्हें प्रस्तुत कर रहा हूँ।

स्वीकार करता हूँ। इससे मेरा कुछ बिगड़ता नहीं है। किन्तु निश्चित रूप से भरे लिए वह महान दुःख की बात होगी यदि मैं एक ऐसे राजा की राज भक्ति स्वीकार करके अपनी आत्मा को अपवित्र करने जिसका आचरण एक नया-भूत, भन्द हठी तथा अयोग्य व्यक्ति के समान है। कुछ स्थितियाँ ऐसी होती हैं जिनसे भारे में जो कुछ कहा जाय सब थोड़ा है। वर्तमान स्थिति उनमें से एक है। कुछ मनुष्य ऐसे होते हैं जो प्राणी कुराखों को पूर्णरूप से समझ नहीं पाते। वे यह सोच कर सात्वता प्राप्त कर लेते हैं कि यदि धनु बिजयी हो गया तो वह उन पर दया करेगा। जिन्होंने न्याय करना स्वीकार नहीं किया, उनसे दया की आशा करना भ्रष्टता की पराकाष्ठा है। जहाँ विजय जरूर है वहाँ दया भी केवल मुठ-सम्बन्धी प्राप्त होती है। गीबड़ की गुरुता और सिंह का हिंसात्मक आक्रमण दोनों प्राणपातक होते हैं और हमें दोनों के प्रति सजब रहना चाहिए। कुछ धमक कर और कुछ पचन देकर 'हीब' जनता को, घबराए देव तथा उसकी दया प्राप्त करने के लिए आकर्षित करना या छतना चाहता है। मंत्रिमंडल ने गेज (Gage) को गद्दी बनने को कहा और टोरियों के अनुसार यही धाम्नि स्थापना है—वह धाम्नि जो गम्य है परे है। यह वह धाम्नि होगी जिसके कुछ बाद ही इतना अधिक बिनाश होगा जिसकी हम सोच रखना भी नहीं कर सकते। पैंसिलवनिया के निवासियों इन बातों पर विचार कीजिए। यदि सीमान्त की काठभट्टियाँ छद्म रूप दें तो वे गुस्मिस्त देह-हृदयनों की घना वा शिकार होंगी कदाचित् टोरी इसका लिए दुःखी न होंगे। यदि जीवरी काठभट्टियाँ छद्म रूप दें तो कर्तव्य-भ्रूत होय के अपराध में सीमान्त काठभट्टियाँ अपने इच्छानुसार उन्हें दंड देंगी। यदि कोई प्रान्त हवियार डाल दे, तो छप प्रान्तों के रोप से उसे बचाने के लिए 'हीब' को ब्रिटिश घना और कियाए पर रखी गयी धर्मन सेना का उस प्रान्त में भर देना पड़ेगा। पारस्परिक प्रेम की गुरुता में पारस्परिक डर मुख्य कड़ी है और जो प्रान्त उस सम्बन्ध को ताड़ें उसके लिए वह दुःख की बात होगी। हीब (Howe) आप लोगों को निदय बिनाश की ओर जाने का निमंत्रण दे रहा है। जो इसे नहीं समझेंगे वे या तो घट होंगे या भूत। यह मेरा मतना बिनास नहीं है बरन् मैं सरसमतम भावा में राज्य को स्पष्ट रूप से आपकी भातों के सम्मुख रखने के लिए एक प्रस्तुत कर रहा हूँ।

मलिन्य विषय की ओर बढ़ रहा है। हम मरीच के हस्तों को देखें और अनुभव द्वारा यह तय करें कि मलिन्य में क्या करना है।

पुनः के मित्रों सायन-ओय अमेरिका की प्राप्ति है अपने विषय के अन्य किसी देश को नहीं। अमेरिका के जीवन का उपभोग निरर्थक और उज्ज्वल था। हरर थोड़ा था। उसके सिवाय उचित और उदार रहे हैं। उसकी प्रकृति मान्य और रह है। सर्वोत्तम कार्यों से उसका आचरण सुन्दरस्थित रहा है। उसका सभी कुछ औरवास्तव है। कदाचित् विषय में ऐसा कोई देश नहीं है जिसका रूप इसका स्तुत्य रहा हो। भारत में यहाँ आकर, ओर विषय प्रकार बने यह अन्ति के लक्षणों के अनुकर था। रोष किसी समय विषय में सर्वोत्तम सामान्य था किन्तु उसका रूप क्या था? तुम्हें का एक कुंठ। दूत-मार्ग के बने सम्पन्न किया और मरीच आत्मार्थी के उचित महान् यत्ना। किन्तु, अपने जीवन की तथा विभिन्न परिस्थितियों की बार करता हुआ वह आज की स्थिति को प्राप्त हुआ है, उसकी चर्चा करने में अमेरिका कभी भी लज्जित नहीं होगा।

अन्तु, यदि मरीच की स्थितियों बनना कार्य उचित बन के करें तो उन्हें अमेरिका की करने आर्थिक व्यवस्था की बुद्धि-विवेक यत्नाकांक्षा की अपेक्षा देनी चाहिए। संसार ने अमेरिका की आर्ति में महान् देखा है। हमने अपने की भावना के विना बीरता और अपने के साथ अनेकों कठिनाइयों पर विजय प्राप्त की है। आनन्दार्थी के भारत कर्तव्यों बने होते बने हैं, त्यों-त्यों हम आज इस में हस्त होते रहे हैं। अमेरिका ने जो कुछ किया वह उनके जीव के अनुकर है। हम विषय को दिया है कि पुनः के समय हमने विषय बीरता का परिचय दिया है। अन्ति के अर्थों में हमारी सच्चाई सभी के अनुकर है।

इस समय अमेरिका अतिशय गुरु जीवन में प्रवेश कर रहा है। यहाँ निष्ठा की बड़ी छाया नहीं। वरन् परिचय के गुरुभार तथा बाधुर्ध्वय आनन्द है। इस स्थिति में बने यह कदाचित् नहीं सुनना चाहिए कि स्वर्गमार्ग के यत्ना ही स्वयं राष्ट्रीय दण्ड का भी महान् है। क्योंकि जबसे ऐसा समर्थ है जो विषय को यहाँ तक कि वस्तुओं को भी, अपने अनुकर बना लेने में समर्थ है। इसके द्वारा वह दीर्घ प्राप्त होगा है जो प्रायः कठिने थोड़े हैं और जो यहाँ भी सम्पन्न होगा है यही आश्चर्य एवं वीर्य महान् हो जाते हैं।

अमेरिका का संकट

[शांति और उसके सम्मन लाम]

जिन्होंने मानव-आत्मा की परत की वे शायद समाप्त हो गये और विश्व में सबसे महान और संपूर्ण क्षान्ति गौरव तथा मानवपूर्वक पूरी हुई ।

मय की परकाष्ठा से सुरक्षा तक युद्ध के कोसाहस से क्षान्ति की निस्तम्भता तक जाने का विचार तो अत्यन्त मधुर होता है । किन्तु उनके लिए इन्हीं की क्रमिक क्षान्ति की आवश्यकता है । सहसा उपस्थित होने पर क्षान्ति भी हमें हस्तुद्धि बना देने की क्षमता रखती है । बिरकासीन धर्मों में मन्त्रवात यदि एक क्षण में रुक जाये तो हम आनन्द भी नहीं । बरन् आश्चर्य की स्थिति में पड़ जायेंगे । स्मृति के कुछ क्षणों के उपरान्त ही हम आनन्द का आस्वादन कर सकते हैं । ऐसे अवसर प्रायः बिरते होते हैं जब कि मस्तिष्क आध्यात्मिक परिवर्तन के योग्य बना लिया जाता है । मानव-मस्तिष्क को स्मरण और तुलना के द्वारा आनन्द की उपलब्धि होती है और जब तक मस्तिष्क महीन दृश्य का रस लेने नहीं लग जाता तब तक विचार और तुलना के लिए पर्याप्त समय चाहिए ।

वर्तमान स्थिति में सत्य की महानता एवं उसके निमित्त जैनी गयी भाष्य की अनिश्चितताएँ के असंख्य और अटल संकट जिनको हमने जैना है अपना जिनसे हम सब निकले, हमारी वर्तमान प्रतिष्ठा तथा हमारा आध्यात्मिक महान भविष्य आदि सभी हमें विचार करने के लिए बाध्य करते हैं ।

संसार की सुभी बनाने की शक्ति का अपने में अनुभव करना मनुष्य जाति के सम्मुख एक आर्थात् उत्पन्न करना विश्व के रंगमंच पर एक ऐसे चरित्र की अवतारणा करना जो आज तक अज्ञात रहा तथा हमारे हाथों सुगुंरि हिये गये एक अभिनय निर्माण-कार्य को सम्पन्न करना आदि की महानताओं का जो कुछ अनुमान लगाया जाय जयवा जितने आनन्द के साथ उनको स्वीकार किया जाय वह सब थोड़ा है ।

अस्तु, स्मृति के इन क्षणों में जब कि जाँची रुक रही है और विगुण्य

अमेरिका का संकट

[शांति और उसके सम्भव लाभ]

जिन्होंने मानव-आत्मा की परत की ये छल समझ हो गये और विश्व में सबसे महान और संपूर्ण क्षान्ति और तत्त्वा आनन्दपूर्वक पूरी हुई ।

भय की पराकाष्ठा से सुरक्षा तक युद्ध के कोसाह्वन से शांति की निस्तम्भता तक जाने का विचार तो अत्यन्त मधुर होगा है किन्तु उसके लिए इन्डियों की कृमिक शांति की आवश्यकता है । सहसा उपस्थित होने पर शांति भी हमें हस्तुति बना देने की क्षमता रखती है । विरवासीन प्रबंध भंडारों पर एक छल में एक जाये तो हम आनन्द की नहीं, बल्कि आनन्द की स्थिति में एक जायेंगे । स्मृति के कुछ छलों के उपरांत ही हम आनन्द का आनन्दन कर सकते हैं । ऐसे अवसर प्रायः मिलते होते हैं जब कि मस्तिष्क आनन्दन परिवर्तन के योग्य बना लिया जाता है । मानव-मस्तिष्क को स्मरण और तुलना के द्वारा आनन्द की उपलब्धि होती है और जब तक मस्तिष्क सबीन रूप का रस लेने नहीं लग जाता तब तक विचार और तुलना के लिए पर्याप्त समय चाहिए ।

वर्तमान स्थिति में लक्ष्य की महानता एवं उसके निमित्त भेदी गयी मान्य की अनिश्चितताएँ से असंख्य और जटिल संकट जिनको हमने भेदा है अथवा जिनसे हम बच निकले, हमारी वर्तमान प्रतिष्ठा तथा हमारा आगापूरा महान भविष्य आदि सभी हमें विचार करने के लिए बाध्य करते हैं ।

संसार को सुग्री बनाने की शक्ति का अपने में अनुभव करना मनुष्य शक्ति के सम्मुख एक आदर्श उत्पन्न करना विश्व के रंगमंच पर एक ऐसे चरित्र का अवतारणा करना जो आज तक अज्ञात रहा तथा हमारे हाथों सुग्री भिजे गये एक अविनाश निर्मोह-कार्य को सम्पन्न करना आदि की महानताओं का जो कुछ अनुमान लगाया जाय अथवा जितने आजार के साथ उनको स्वीकार किया जाय वह सब थोड़ा है ।

अस्तु, स्मृति के इन छलों में जब कि आपी एक रही है और विशुद्ध

मस्तिष्क विद्या की ओर बढ़ रहा है। हम अतीत के हस्तों को देखें और अनुभव प्राप्त कर लें कि भविष्य में क्या करना है।

मुझ के जितने ज्ञान-स्रोत अमेरिका की प्राप्ति हैं पत्थर के युग की ही देख को नहीं। अमेरिका के जीवन का सब-काल निरन्तर और सम्भव था। उर्वर भू-भाग। उसके विज्ञान पवित्र और उदार रहे हैं। उसकी प्रगति जल्द और दृढ़ है। सर्वोत्तम कार्यों के उच्चका आचरण सुस्पष्ट स्थित रहा है। सबका सभी कुछ नीरवासर है। कदाचित् विश्व में ऐसा कोई देश नहीं है जिसका कुछ इतना सुन्दर रहा हो। आरम्भ में वहाँ बाकर, लौह विज्ञान प्रकार के बहुत कल्पित के लक्षणों के अनुकूल था। रोम किसी समय विश्व में सर्वोत्तम साम्राज्य था किन्तु सबका भूल गया था? सुनें का एक कुछ। सुन-पाद में उड़े सम्भव दिया और अतीत आवाचारों ने उसे महान बनाया। किन्तु अपने जीवन की तथा विभिन्न परिस्थितियों को धार कर रहा हुआ वह आज की स्थिति को प्राप्त हुआ है। उनकी चर्चा करने में अमेरिका कभी भी सम्भव नहीं होगा।

अस्तु, यदि अतीत की स्मृतियाँ करना कर्म उचित बन के करें तो उन्हें अमेरिका की अपने आरम्भिक युग की बुद्धि-विवेक बहुतायत की प्रशंसा देनी चाहिए। अन्तर्गत में अमेरिका की अवस्था में बहुत देखा है। हमने मुझे की भावना के बिना बीरता और पर्व के साथ अनेकों कठिनाइयों पर विजय प्राप्त की है। आश्चर्य के कारण क्यों-क्यों बने होते बने हैं। क्यों-क्यों हम लोग एक से इतर हो रहे हैं। अमेरिका ने जो कुछ दिया वह उसके पूर्व के अनुकूल है। हम विश्व को दिखा दें कि कुछ के समय हमने जिस बीरता का परिचय दिया है, धर्म के अर्थों में हमारी सभ्यता उसी के अनुकूल है।

एक समय अमेरिका धार्मिकता ब्रह्म-जीवन में प्रवेश कर रहा है वहाँ निरपराधी नहीं छोड़ा नहीं। धर्म विराम के पुनराकार तथा भावपूर्ण वा आनन्द है। इस स्थिति में उड़े बहुत कदाचित् नहीं भूलना चाहिए कि स्वतंत्रता के समान ही स्वतंत्र राष्ट्रीय दल का भी महत्व है। क्योंकि यहाँ ऐसा ही है जो विश्व की वही तक कि राष्ट्रों को भी, अपने अनुभूत बना लेने में समर्थ है। इसके द्वारा वह दीर्घ प्राप्त होता है जो प्रायः धर्म के अर्थ है और जो वही भी सम्भावित होता है वहाँ आश्चर्य एवं जीवन अलग ही पाते हैं।

अमेरिका की प्राप्ति उस युग के लिए दादबत गौरव है जिसने उसे सम्पन्न किया। इसने किसी भी मानवीय प्रयत्न की अपेक्षा बिम्ब को उद्वुड करने और मानव-जाति में उदारता एवं स्वतंत्रता की जाबना का बिस्तार करने में अधिक योग दिया है। इसलिये इस पर, चाहे किसी भी निमित्त भयबा रोग से, यदि एक भी कसक का टीका लग गया तो वह एक ऐसी अवांछनीय घटना होगी, जिसके लिए सदैव शोक मनाया जाएगा और जिसे सोच कभी नहीं भूलेंगे।

विरकासीन युद्ध की भीषण आपदाओं में से यह आपदा कुछ कम नहीं है कि इसके कारण मस्तिष्क सग मधुर ऐन्द्रिक अनुभवों से विरक्त हो जाता है जो अन्य लोगों में अत्यंत रमणीय प्रतीत होते हैं। दुःख का निरन्तर दण्ड हमारी क्रोमस अनुभूतियों को कुण्ठित कर देता है। उसे धैर्यपूर्वक सहन करने की आवश्यकता हमें उससे पर्याप्त परिचित करा देती है। इसी प्रकार समाज के प्रति हमारे कई नैतिक कठव्यों में निरन्तर क्षीण जाती रहती है और केवल आत्मसंयत्ता के उर्ध्व सम्पन्न करने की प्रथा हमारे बीच बर पड़ती है। वास्तव में इस प्रकार कलव्य किमुल होना अपराध है किन्तु प्रथा की आड़ में वह दामा करने योग्य एक निमित्त बन जाता है। फिर भी यदि एक राष्ट्र अपने चरित्र के विषय में उचित रूप से विचार करे, तो वह भविष्यपूर्वक उसकी रक्षा कर सकेगा। जिस निम्नस्तक चरित्र के साथ अमेरिका ने अपना काय आरम्भ किया उसकी अपेक्षा अधिक सुन्दर चरित्र से किसी देश ने अपने कार्य का आरम्भ नहीं किया। उस चरित्र को प्रतिष्ठा बनाए रखने का उत्तरदायित्व जितना अमेरिका पर है उतना अन्य किसी राष्ट्र पर नहीं है।

अमेरिका ने जो श्रेष्ठ लिया है उसका बाने में उसे जिस मर्य की प्राप्ति हुई तथा उससे जितने लाभ हुये इन सबकी पर्या की वदायित्व ही आवश्यकता है। अपने हकानुसार सुसामर्थ्य रहने और काम करने का उसे अधिकार है। विरक्त उसके हानों में है। उसके व्यापार पर किसी भी विदेशी शक्ति का विशेष अधिकार नहीं है। कोई भी विदेशी शक्ति न तो उसके विमान को बिगाड़ सकती है, और न उसकी उन्नति पर नियन्त्रण रख सकती है। संपर्क समाप्त हो गया। यह एक-न-एक दिन होना या और वदायित्व उसने लिए दण्डे

राज्यों की योग्यता उन्हें की महानता और राष्ट्रीय चरित्र के मूल्यों की तुलना में हम जो त्याग करेंगे वह अत्यन्त होना ।

किन्तु एक विवेकशील व्यक्ति के लिए राज्यों की एकता अत्यन्त महावपूर्ण कार्य है, जिसके सम्पन्न होने पर अन्य कार्य अत्यन्त सरल हो पायेंगे । इसी एकता पर हमारा राष्ट्रीय चरित्र निर्भर है । इसी के बल पर हमें अपने देश में सुरक्षा और विदेशों में प्रतिष्ठा प्राप्त होगी । संसार हमें इसी के माध्यम से एक राष्ट्र के रूप में जानता है या जान सकेगा । संयुक्त राज्य अमेरिका के भग्ने के कारण ही समुद्र में अपना विदेशी बन्दरगाहों पर, हमारे बहाल और वारिष्ठ सुरक्षित है । यैनी शान्ति अपना पालिष्ठ आदि सभी प्रकार की हमारी सम्पत्ति 'संयुक्त राज्य' अमेरिका के ही नाम से की जाती है । यूरोप हमें अन्य किसी नाम से नहीं जानता ।

इस साम्राज्य का राज्यों में विभाजन हमारी सुविधा के लिए है । किन्तु बाहर यह भेद भिन्न जाता है । प्रत्येक राज्य के कार्य भेद हैं । अपनी सीमा के जाने से नहीं जा सकते । इन राज्यों में जो सबसे अधिक सम्पन्न राज्य है उसका सम्पूर्ण धन, यदि उसकी सरकार की वारिष्ठ आय के रूप में प्राप्त हो जाय तो भी विदेशी समुद्र के आक्रमण को रोकने में वह समर्थ न होना । संसार में 'संयुक्त राज्य' के अतिरिक्त हमारा राष्ट्रीय प्रभुत्व और किसी रूप में नहीं है, और यदि कोई अन्य रूप होता तो वह हमारे लिए अत्यन्त लाभ होता । क्योंकि उसका धन इतना अधिक होता कि उसे सम्मानना असम्भव हो जाता । एक व्यक्ति या एक राज्य अपने को चाहे जिस नाम से बुलावे किन्तु संसार और विशेषकर समुद्रों का संसार केवल नाम से आकर्षित नहीं होता । 'साम्राज्य' में अपने उन सभी भागों की रक्षा करने की शक्ति होनी चाहिए जिनके संयोग से उसका निर्माण हुआ है । 'संयुक्त राज्य' के रूप में हममें वह शक्ति है और हम उसकी महत्ता के योग्य हैं अन्यथा नहीं । बुद्धिमत्तापूर्ण ढंग से व्यवस्थित होने पर हमारा संघ महान एवं शक्तिशाली होने का सरलतम साधन है तथा अमेरिका की वर्तमान स्थिति में स्वीकृत होने योग्य सरकार के स्वरूप का सुन्दरतम आविष्कार है । अमेरिका के 'संयुक्त राज्य' की वर्तमान सरकार प्रत्येक राज्य से ऐसी शक्ति एकत्रित करती है, जो स्वयं अपने में अपूर्ण होने के बावजूद अपने राज्य के काम नहीं आ सकती

किन्तु इन प्रकार, सब राज्यों की सम्मिलित शक्ति सब राज्यों का साथ सम्भर करने में समर्थ होती है।

राज्यों के अलग-अलग प्रभुत्व का क्या परिणाम होता है इसके उदाहरण हमें के राज्य हैं। अपनी विभिन्न स्थिति के कारण उन्हें नामा प्रभार के कारण अतिशय आपराधी और राष्ट्रीय शक्ति का संकट बना पड़ा है। राष्ट्रिय कर से प्राप्त किसी निरुत्तर पर पहुँचने तथा उस निरुत्तर को कार्यान्वित करने की आवश्यकता उनके लिए अतीव आपराधी का बीड़ा है। यदि हम सब प्रकार की विभिन्नताओं से रहित हो जाएँ तो हमें भी अपनी आपराधी को खोजना पड़ेगा।

हमारे के प्रति स्थिति का जो वर्तमान है, वही 'संयुक्त राज्य' के अन्तर्गत होने वाले प्रत्येक राज्य का उसके प्रति है। सम्पूर्ण को सुदृष्टित बनाने के लिए हमें को करना कुछ स्थापित करना पड़ता है। इस दृष्टिकोण से देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि इन विचारों से है उनके अधिक प्राप्त करने हैं और नून से अधिक शक्ति प्राप्त करने हैं। अब हमें में अपनी स्वतंत्रता और सुरक्षा के इस महान संरक्षण 'संयुक्त' की आवश्यकताओं को पूरा हैं तो हमें कुछ होता है। अमेरिका के संविधान में यह 'संयुक्त' व्यवस्था प्रतिष्ठित है और प्रत्येक व्यक्ति को इस पर सर्व हीमा चाहिए। 'संयुक्त राज्य' की नागरिकता हमारा बोलू बंद है। इन महाद्वीप के भीतर देश में इन राज्य विदेश के नागरिक के रूप में जाने जाते हैं। किन्तु बाहर अमेरिका के नागरिक के रूप में। 'अमेरिका-निवासी' हमारी महान शक्ति है हमारी अन्य अमेरिका हीन शक्तियाँ स्वयं के अनुसार विद्यमान हैं।

वही एक मुख्य हो सकता है। जैसे स्वयं स्वीकार करने का सब के हितों को एक सम्मान-मूल में बाँटने का और देश के अतिरिक्त को एक देश पर अतिरिक्त करने का प्रयास विचार। इस विचार से कि वे व्यक्ति के बुनियादी काम अमेरिका में अन्तर्गत हो कर रहें। वे अपने राज्य अपना 'संयुक्त राज्य' में यह अपना नाम के लोगों की उम्मीद की है। वे सर्वोच्च समस्त सम्मानों से दूर पड़ा। इसका ही नहीं किन्तु देने करने सभी व्यक्तिगत तथा अन्य महान के रूपों की ओर ध्यान नहीं दिया। यदि हम इस महान कार्य पर विचार करें कि हमने कुछ किया है तथा उसकी अतिरिक्त महान का अनुभव

करें, तो हमें यह विनिश्चित होगा कि वैयक्तिक शुद्ध कसह और अविष्ट विचार हमारे महान चरित्र के लिए अपमानजनक तथा आत्मन्य के लिए हानिकारक है।

अमेरिका की स्थिति ने मुझे सिसक बनाया। मैंने देखा कि स्वतंत्रता की घोषणा जो एकता स्थापित करके हमारी रक्षा कर सकती थी न बरके देश उन लोगों से एक असम्भव और अप्राकृतिक समझौता करने जा रहा है जो उसे नियंत्रित बना देने के लिए कुत्त-संघर्ष है। देश की इस भयावह स्थिति ने मेरे मस्तिष्क को इस प्रकार प्रभावित किया कि मेरे लिए कुछ उम्मा असम्भव हो गया। गत सात वर्षों से अधिक समय तक यदि मैंने देश की कोई सेवा की है तो यह भी निश्चित है कि मैंने साहित्य को अनासक्त भाव से मानवता की महान सेवा में नियोजित करने उसके पक्ष की लड़ाई की है, और यह भी प्रकट कर दिया है कि अव्यभिचारित प्रतिभा का भी अस्तित्व होता है।

मैं बराबर इस बात को मानता रहा हूँ कि स्वतंत्रता प्राप्त की जा सकती है यह असाध्य नहीं है। हाँ आवश्यकता इस बात की है कि देश में उसके लिए उपयुक्त विचार उत्पन्न हों और उसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्न किया जाय। विश्व में यह अद्वितीय घटना है कि इतने विस्तार देश के निवासी जिनकी भिन्न-भिन्न प्राचीन विस्तृत-व्यवस्थाएँ हैं और भिन्न-भिन्न परिस्थितियाँ हैं, सहसा एक राजनैतिक परिवर्तन के द्वारा एक साथ प्रभावित हो उठे, और जब तक उन्हें पूर्ण सफलता नहीं प्राप्त हुई तब तक अपने और बुरे अवसरों को भेदते हुए समान रूप से उन्होंने अपने मत का समर्पण किया।

किन्तु मुद्दे के दृश्य समाप्त हो गये हैं और प्रत्येक व्यक्ति वा मस्तिष्क अपने गृह-कार्यों तथा अपेक्षाकृत अधिक मुराभय जीवन की ओर मुड़ जाता है। अतः मैं इस विषय की यहीं समाप्ति करता हूँ। मैंने बड़ी सफाई के साथ व्याख्यान से अन्त तक इसके प्रत्येक पहलू पर विचार किया है और अद्विष्ट मैं मैं जाहूँ जिस देश में रहूँ, मैंने अमेरिका की स्वतंत्रता प्राप्ति के विमिरा को काय किया है उस पर मैं सच्चे गर्व का अनुभव करता रहूँगा। मुझे मानवता की सेवा करने का अवसर मिला इसके लिए मैं प्रकृति और परदे-बर्त का शुभ्य आभार मानता रहूँगा।

मनुष्य के अधिकार (भाग - १)

बार्न हॉलिपटन

प्रसौरेण्ड, 'संयुक्त राज्य' अमेरिका ।

घोषणा,

भारत के अनुकरणीय प्रयास सुझाते हैं स्वतन्त्रता के जिन सिद्धांतों की स्थापना में आधुनिक दौरेपसूरों सहयोग प्रदान किया है, उनके समर्थन में मैं आपको यह सुझाव प्रस्तुत करता हूँ । मेरी आशा है कि मनुष्य के अधिकारों को आपकी सरकार द्वारा अनेकानेक कार्रवाईयों द्वारा प्राप्त हो और आप आशीर्वाद के पुनर्जात को सुनने विषय के रूप में देखने का आनन्द प्राप्त कर सकें ।

भारत का आभार प्रकट करता हूँ

और

आशावादी विनम्र श्रेष्ठ

टॉम पेन

सांविधानिक नियम की परिसीमाएँ

फ्रांस की राज्य-क्रांति पर 'बर्क' द्वारा लिखित पत्रक उन सभी मतिपट्टताओं या दुष्प्रवृत्तियों का जसाधारण सङ्ग्रहण है, जिनके कारण राष्ट्र भ्रष्टता ध्वंसी एक दूसरे के प्रति संतप्त हो उठते हैं। फ्रांस की जनता और उसकी 'राष्ट्रीय सभा' को ईर्ष्या तथा उसकी संसद के कार्यों से कोई प्रयोजन नहीं है। किन्तु बर्क ने फ्रांस की जनता पर और उसकी संसद पर ऐसा आक्रमण आरम्भ किया जिसके लिए फ्रांस की ओर से कोई उत्तेजना प्राप्त नहीं हुई थी। बर्क का यह व्यवहार आचार की दृष्टि से बलवत्त है, और राजनीति की दृष्टि से अनुचित है। ब्रिजजी भाषा में ऐसा कोई अपराध नहीं है जिसका प्रयोग उन्होंने फ्रांस के राष्ट्र तथा उसकी 'राष्ट्रीय सभा' के लिए न किया हो। विद्वेष पूर्वधारणा अज्ञान या ज्ञान आवि के प्रभाव के अन्तर्गत बर्क को जो कुछ आया उसे उन्होंने अपने प्रचुर क्रोध के साथ सगमग चार ची पृष्ठों में व्यक्त कर दिया। जिस मूढ़ में और जिस योजना के आधार पर वे सित रहे वे उसके सहारे वे न जाने कितने सहस्र पृष्ठ लिख पाते। भावोन्माद की दशा में जब जिज्ञा भ्रष्टता सेसनी डीसी पड़ जाती है तो विषय तब तक समाप्त नहीं होता जब तक मनुष्य थक न पाय।

फ्रांस के कार्यों के विषय में मत निर्धारित करत समय बर्क ने जब तक कभी भूल नहीं की और न उन्हें कभी निराशा ही हुई। किन्तु उनकी भासा में इतना मनुष्य है या उनकी निराशा में इतना झोह है कि उनके कारण बर्क को अपना अभीष्ट सिद्ध करने के लिए नये बहाने मिला करते थे। एक समय या जब बर्क को यह विश्वास दिसाना असम्भव था कि फ्रांस में राज्य-क्रांति होगी। उस समय उनका मत था कि क्रांति के लिए फ्रांस में न शक्ति है और न सहनशीलता। किन्तु अब वहाँ राज्य-क्रांति हो चुकी है इसलिए उसकी निन्दा करके वे अपने उस पूर्व-निर्धारित मत का बचाव करना चाहते हैं।

फ्रांस की 'राष्ट्रीय सभा' की निन्दा करने पर भी पर्याप्त संतोष न होने पर बर्क ने उदारमन्य डाक्टर प्राइस (Dr Price) तथा ईम्सेड के 'क्रान्ति समाज' (Revolution society) और 'सांविधानिक-सूचना-समाज'

(society for constitutional information) पर अपना ध्यान
 करता।

बैसा कि ईंग्लैंड में शीघ्र थाते हैं तब १९५५ ई. में बड़ी शक्ति हुई
 थी। ४ नवम्बर, तब १९५६ ई. के दिन सर्वांग उपर्युक्त शक्ति के वापिको-
 लपर पर, डा० ब्राइट ने बयान को समोपदेश दिया। उसकी बर्णना करते हुए
 श्री रई यहोराब कहते हैं कि राजनीतिक समोपदेशक महोदय ने इसीपूर्वक
 यह स्वीकार किया है कि शक्ति के सिद्धान्तों के द्वारा ईंग्लैंड की जनता ने
 तीन बुनियादी अधिकार प्राप्त किये हैं। यथा

१. अपने शासकी को चुनना।
२. बुराचार के कारण उन्हें पर-भ्रुत करना।
३. अपने लिए सरकार का निर्वाह करना।

डा. ब्राइट यह नहीं कहते कि समस्त वाच करने के अधिकार का अस्तित्व
 बहुत शक्ति बचता बहुत प्रकार के शक्तियों में है, परन्तु उनके अनुसार यह
 अधिकार समस्त जनता में है यथा राष्ट्र में निहित है। इसके विपरीत बर्क
 महोदय की मान्यता है कि समस्त राष्ट्र में उसके किसी अंश में यथा नहीं
 की इस प्रकार का कोई अधिकार नहीं है। इस विषय में उनका हल है विभिन्न
 कथन यह है—ईंग्लैंड की जनता इस प्रकार के किसी भी अधिकार को
 मान्यता नहीं देती और अपने ब्राह्मों तथा सम्पत्ति की बाड़ी लगाकर यह
 उनकी आकाङ्क्षित स्वीकृति का विरोध करती।

अपने अधिकारों की रक्षा के लिए नहीं परन्तु इस बात की स्वीकार करने
 के लिए कि उनका कोई अधिकार नहीं है, शीघ्र यथा ब्रह्मने हवा अपने ब्राह्मों
 और सम्पत्ति की बाड़ी लगाकर—यह कथन निताम्य विविध समुच्चय है
 और बर्क की जनम-विगीकनी बुद्धि के अनुरूप है।

इसी प्रकार की विलक्षणता के द्वारा, बर्क ने यह सिद्ध किया है कि ईंग्लैंड
 की जनता को ऐसा कोई अधिकार नहीं था और इस समय राष्ट्र में उसके
 किसी भाग में यथा नहीं थी इस प्रकार का कोई अधिकार नहीं है। क्योंकि
 उनका उक्त है कि इस प्रकार के अधिकार सिद्ध पीढ़ी में वे यह इस समय
 मौलिक है नहीं है। उस पीढ़ी के वाच-लाभ अधिकार भी मर चुके हैं।

इसे सिद्ध करने के लिए, वे समग्र ही नहीं पूर्व विविध और भेरी के

प्रति कहे गये संसद के एक कथन का सखरखु इन शब्दों में देते हैं—‘हम राज्य सभा के लोकिक और आध्यात्मिक सदस्य और ‘सोक-सभा’ के सदस्य जनता (इंग्लैण्ड की तत्कालीन जनता) के नाम पर अत्यधिक नम्रता और बिनाश पूर्वक अपने को अपनी गलतियों को तथा भावी पीढ़ियों को सदा के लिए समर्पित करते हैं। बक ने उसी सासन के अन्तर्गत संसद के एक दूसरे अधिवेशन की एक घाटा का उल्लेख इस प्रकार किया है— (हम) अपने (अर्थात् तत्कालीन इंग्लैण्ड की जनता) को अपने उत्तराधिकारियों को तथा अपनी भावी पीढ़ियों को सदा के लिए उनके (वित्तियम और मेरी) उनके उत्तराधिकारियों तथा उनकी भावी पीढ़ियों के आधीन रखते हैं।

इन घाटों का उल्लेख करके बक महोदय अपने मत को पदार्थ रूप से प्रतिपादित समझते हैं और उससे बल पर यह सिद्ध करते हैं कि राष्ट्र अपने अधिकार के लिए सदा से बंचित हो गया है। वेब्स इस प्रकार के कथन की पुनरावृत्तियों से संतुष्ट न होकर वे जागे कहते हैं कि यदि इंग्लैण्ड की जनता को स्वतंत्रि के पूर्ण इस प्रकार का कोई अधिकार था तो इंग्लैण्ड के राष्ट्र ने ‘क्रान्ति के समय बड़ी सम्मीरता के साथ अपनी ओर से तथा अपनी भावी पीढ़ियों की ओर से उसे सदा के लिए त्याग दिया।

इंग्लैण्ड ही के प्रति नहीं बल्कि फ्रांस की राज्य-क्रान्ति और उसकी ‘राष्ट्रीय सभा’ के प्रति भी बक ने अपने भयंकर सिद्धांतों के कारण विष-बमन किया है और उस महान ‘राष्ट्रीय सभा’ पर, अन्यायपूर्वक अग्न्य की सम्पत्ति पर अधिकार करने का आरोप किया है। अतः मैं स्पष्ट रूप से उनके सिद्धांतों के विरुद्ध चिट्ठाचार का निर्वाह किये बिना सिद्धांतों की अग्न्य पदति प्रस्तुत करना।

सन् १६८८ ई० की ब्रिटिश संसद ने अपने निर्वाचकों की ओर से जो कुछ किया वैसे करने का उसे अधिकार था। किन्तु निर्वाचन के द्वारा उस संसद को जो अधिकार मिला था उससे बड़ी अधिक अधिकार उसने अपनी इच्छा से स्वीकार कर लिया। क्योंकि भावी पीढ़ियों को सदा के लिए बन्धन में बाँध देने का अधिकार उसे निर्वाचन से नहीं प्राप्त था बल्कि अपनी इच्छा से उसने अपने में इस अधिकार को मान लिया था।

इस प्रकार उस संसद के दो प्रकार के अधिकार सिद्ध होते हैं। पहले प्रकार का वह अधिकार है जो उसे निर्वाचन द्वारा प्राप्त था और दूसरे प्रकार

का अधिकार यह है जिसे उसने अपने में अपनी इच्छा से मान लिया था।
 प्रत्येक प्रकार के अधिकार के विषय में मुझे कुछ नहीं कहना है किन्तु दूसरे
 के बारे में बेरा निष्कर्षित उत्तर है —

किसी भी देश में ऐसी कोई संसद, मनुष्यों का ऐसा कोई वर्ग अथवा
 उनकी ऐसी कोई चीज़ नहीं है जो न ही और न होयी, जिसे शासकीय चीज़ों को
 बना के लिए बाँधने और नियंत्रित रखने का अधिकार प्राप्त हो अथवा सत्ता
 के लिए वह निर्दिष्ट करने का अधिकार हो कि किस का शासन किस प्रकार
 हो या कौन करे ? इसनिश्चय ऐसी सभी बातों, सभी अविनिश्चय या अपेक्षापूर्व
 स्थिति निष्पत्ति और निर्विक है जिसके द्वारा उनके निर्वाचक-कर्ता ऐसा कार्य
 करने का इरादा करते हैं जिसे करने का न उन्हें अधिकार है, न सामर्थ्य और
 विवशता निवारण करना उनके बंध की बात नहीं है।

प्रत्येक देश में दुर्बलाधीषुओं और चींटियों के समान ही अनुपाती पुनः
 और चींटियाँ बनने लिए काम करने में पूरी स्वतंत्र है। 'मनुष्य के व्यवस्था' की
 शासन करने का अधिकार मान लेना सर्वोच्च हान्यकार और अरु हान्यकार है।

मनुष्य मनुष्य की सम्पत्ति नहीं है और न अनुपाती चींटियाँ पूर्वपायी
 चींटियों की सम्पत्ति है। मनु १६५५ ई. की अथवा अन्य किसी समय की
 संसद या जनता को आज की जनता के अधिकारों को देव देने उसे बाँधने
 अथवा जिस किसी की कब के उनका नियंत्रण करने का अधिकार छीन उसी
 प्रकार नहीं या जिस प्रकार ही अथवा सत्ता सभी बार होने वाले व्यक्तियों
 के अधिकारों को देवने उन्हें बाँधने अथवा उनका नियंत्रण करने का अधिकार
 मान की जनता अथवा संसद को नहीं है।

प्रत्येक चीज़ को अपने पुनः की आवश्यकता के अनुसार काम करने का
 पूरा अधिकार है और होना चाहिए। किसी भी पुनः में व्यवस्था चींटियों के
 लिए भी बांधी है मनुष्यों के लिए नहीं। जब मनुष्य का जीवन समाप्त हो
 जाता है तो उसके बाद ही उसके अधिकार एवं उसकी इच्छाओं की या
 सम्पत्ति ही जाती है। उसके बाद निरन के बाँधी में वह मनुष्य व्यक्ति का
 कोई मान न होता। मानु, इसे यह कहने का अधिकार नहीं है कि निरन के
 शासन कोन होये सरकार का निर्माण या शासन किस प्रकार होना ?

ये सरकार के स्वतंत्र विधीय के बंध में या विषय में कुछ नहीं कह रहा

और न तो यहाँ के अथवा अग्यन कहीं के किसी राजनीतिक दल के पक्ष या विपक्ष में कुछ कह रहा हूँ। सम्पूर्ण राष्ट्र जिसे अष्टाक्ष समझता है उस कार्य को सम्पन्न करने का उसे पूरा अधिकार है। किन्तु बर्क महोदय इस बात को नहीं मानते हैं। मैं पूछता हूँ कि फिर उस अधिकार का अस्तित्व कहाँ ? मैं जीवित व्यक्तियों के अधिकार का समर्पण करता हूँ। मृतकों के अपनी इच्छा से माने हुए अधिकार के द्वारा भावी पीढ़ियों के नाम पर जो कुछ समझौता किया अथवा जो अधिनियम बनाये जीवित व्यक्ति जहाँ के द्वारा नियंत्रित हों वह मैं नहीं चाहता। किन्तु बर्क जीवितों के अधिकार और स्वातंत्र्य पर मृतकों के प्रभुत्व का समर्पण करते हैं।

एक समय का जब कि मुलु शम्पा पर पड़े हुए राजा अपने इच्छानुसार अपना मुहुड बेच दिया करते थे और अपने द्वारा नियुक्त किसी भी उत्तम-धिकारी के हाथों में, जानवरों के समान, अपनी प्रजा को सौंप जाते थे। यह प्रथा इस समय इसकी कुत्सित मानी जाती है कि कोई इसे याद रखना भी नहीं चाहेगा। इसकी विसंगतता के कारण सहसा इस पर विश्वास नहीं होता। किन्तु संसद को वे याद दिलाएँ जिन पर बर्क महोदय ने अपने राजनीतिक पुर्न का भ्रम निर्माण किया है इसी प्रकार की है।

किसी भी देश के नियमों को कुछ सामान्य सिद्धान्तों के अनुरूप होना चाहिए। इंग्लैण्ड में जब किसी व्यक्ति की अवस्था इतनी बुरी हो जाती है तो उसकी वैयक्तिक स्वतन्त्रता पर उसके माता-पिता स्वामी अथवा जिसने अपने को सर्वशक्तिमान कहा है उस संसद का कोई बंधन या नियंत्रण नहीं रह जाता है। फिर, किस आधार पर, सन् १९८८ ई० की या अन्य कोई संसद सभी भावी पीढ़ियों को अनन्तकाल तक बांध सकती थी ?

जो संसार से उठ गये हैं और जो संसार में अभी आये नहीं हैं उनके बीच की दूरी की जितनी कल्पना की जाय उतनी लोड़ी है। उनके बीच कोई भी सम्बन्ध सम्भव नहीं है। इन दोनों जनस्तिष्ठों में हैं एक का अस्तित्व समाप्त हो चुका है और दूसरा अस्तित्व में आया ही नहीं है। ये दोनों कभी भी बिस्व में मिल नहीं सकते। फिर किस नियम या सिद्धान्त के आधार पर यह कहा जा सकता है कि एक का दूसरे पर सदा के लिए नियन्त्रण रहे ?

ऐसा कहा जाता है कि इंग्लैण्ड में किसी की स्वीकृति के बिना उठना पन

नहीं दिया था सकता है। किन्तु १९८८ ई की संसद को जिसने ऐसा बहिसार दिया था वही ऐसा अधिकार है सकता था, कि वह उन अनुपाती सीटों का अधिकार छीन ले और कुछ विधियों में यथा के लिए काम करने का हमारा अधिकार सीमित कर दे। जो उह समय तक अस्तित्व में रहो बाकी ही और जिन्होंने न तो अपनी स्वीकृति की थी और न अस्वीकृति ?

वर्क महोदय ने अपने वाद्यों के सम्मुख त्रिष प्रकार की मूर्खता का प्रदर्शन किया है। पहले यह कह कर अन्य मूर्खता नहीं हो सकती। वे अपने वाद्यों से और जाने बस्ते बिना के बहते हैं कि तो क्यों पूर्व अस्तित्व में रहने वाली 'संसद' ने एक नियम बनाया जिसे बदलने का अधिकार, वर्तमान समय में राष्ट्र को नहीं है। वही अधिकार न कभी होया और न कभी संभव है। (राज्यों के) समान-विषयक वही अधिकार को मानव पाठि के बहुत विरवाद पर जिसने विद्वत्पण्डितों या बुद्धिमानों के साथ बोझ दिया है। जो वर्क ने, उनके अतिरिक्त एक अन्य का अनुसंधान किया है।

उन वाद्यों की बनता के सम्मुख रख कर, वर्क ने अपने समय का ही नहीं बल्कि जनता का हित अवलम किया है। उन वाद्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि हमें इस बात का बराबर ध्यान रखना आवश्यक है कि राज प्रति न हाथ नहीं अधिकार के अतिरिक्त का प्रयत्न ही नहीं हो रहा है। इसलिए मैं कहूँ कि इन राज-प्रति की अति की ओर जाने से रोके।

यह बड़े भारी की बात है कि अधिकार को अपनी इच्छा से मान लेने के बिना जनता के लिए केन्द्र प्रिन्स को देख-बहिष्कृत होना पड़ा नहीं जायज सर्वथा नहीं। इन में वही संसद करे जिसने केन्द्र प्रिन्स को देखा है बाहर निकाला। इसके स्पष्ट हो जाता है कि कांति (वर्क १९८८ ई०) के समय अनुपपन्न के अधिकारों की पूर्णतः समझ नहीं बसा था क्योंकि वह निर्दिष्ट है कि संसद ने जावाबी सीटों के व्यक्तियों और अपनी स्वतंत्रता के ऊपर अपना जो अधिकार मान लिया वह वही प्रकार का अपाचारपूर्ण अधिकार था जिसे केन्द्र प्रिन्स ने संसद और राष्ट्र के ऊपर स्वीकार करना पड़ा और जिसके लिए उसे देख-बहिष्कृत किया गया। यह प्रकार का अधिकार उन संसद को ही नहीं बसा था वह तीसरा था ही नहीं करता था क्योंकि वही तीसरे जाने व्यक्ति वह समय बीता नहीं हुए है।

जहाँ तक सिद्धान्तों का प्रश्न है जेम्स द्वितीय और उपयुक्त संदर्भ में कोई अन्तर नहीं है अन्तर केवल इतना है कि जेम्स द्वितीय ने प्रीवियों के अधिकार को हड़पना चाहा और संसद् ने उन व्यक्तियों के अधिकारों को हड़पना चाहा जो उस समय तक उत्पन्न नहीं हुए थे। इन दोनों में से किसी एक का अधिकार दूसरे के अधिकार की अपेक्षा अच्छा नहीं कहा जा सकता; इसलिए दोनों के अधिकार निष्प्रभाव और निरर्थक सिद्ध होते हैं।

किस आधार पर 'बर्क' यहोदय यह सिद्ध करते हैं कि आगामी पीढ़ियों को सेवा के लिए मौख रक्षने का अधिकार मनुष्य को प्राप्त है? उन्होंने संसद की उन पाठशालों का उल्लेख किया है किन्तु उन्हें इस बात का प्रमाण देना चाहिए कि इस प्रकार का अधिकार प्राचीन काल में कभी रहा है। यदि इस प्रकार का अधिकार कभी रहा है तो उसे इस समय भी रखना चाहिए क्योंकि जिसका सम्बन्ध मनुष्य की प्रकृति से रहा है मनुष्य उसका सम्भाल नहीं कर सकता।

मरना मनुष्य की प्रकृति है; अस्तु जब तक वह जन्म धारण करता रहेगा तब तक वह मरता रहेगा। किन्तु श्री बर्क ने राजनीति के क्षेत्र में एक ऐसे आदम (Adam) की अवधारणा की है जिसमें सभी अनुयायी पीढ़ियाँ बच हैं। इसलिए उन्हें यह सिद्ध करना चाहिए कि उनके इस 'आदम' के पास इस प्रकार का अधिकार था।

माया अितना निर्बल होता है उतना ही वह सिद्धान्त को कम सह पाता है। उसे सीबने की नीति का अनुसरण करना अत्यंत धातक है। हाँ यदि हम उसे छोड़ना चाहते हैं तो बात दूसरी है।

यह सत्य है कि एक पीढ़ी के बने हुए नियम प्रायः अनुयायी पीढ़ियों में भी बने रहते हैं किन्तु वे व्यक्तियों की स्वीकृति के बल पर ही बने रहते हैं। यदि कोई नियम मंग नहीं हुआ तो वह बना रहता है और उसके मंग में बिये जाने का तात्पर्य है उसकी स्वीकृति।

यह बात भी बर्क यहोदय द्वारा प्रतिपादित उन धारणों के विपरीत है। अमर होन का प्रयत्न करने में वे पाठार्थ व्यर्थ हो गयी है। उन्होंने आगामी पीढ़ियों की स्वीकृति पर प्रतिबन्ध लगा दिया है। उन पाठशालों को जो अधिकार प्राप्त नहीं हो सकता उसे अपने अधिकार का आधार बनाकर उन्होंने

हमना अधिकार भी दिया। मनुष्य का अधिकार अमर नहीं है, और इसलिए मनुष्य का अधिकार अमर नहीं हो सकता।

सन् १९४८ की संसद ने बिना प्रचार किये अधिकार को शास्त्र बनाने के लिए एक नियम बनाया। उसी प्रकार वह सर्वेसर्वाधिकार देने का अधिकार प्राप्त करने के लिए भी कोई नियम बना सकती थी। उन बातों के विषय में इसलिए इतना कहा जा सकता है कि वे केवल विधि-निर्वाह के लिए मनुष्य के हित हैं, जिनके माध्यम से बाकी उस संसद ने करने को सम्भव होते हुए जनसंसार के पुरातन धर्मों में कहा है संसद। तुम विचारो यही ॥”

विषय की परिस्थितियाँ निरंतर परिवर्तित हो रही हैं और साध-ही-साध मनुष्य के विचार बदल रहे हैं। सरकार मुक्तों के लिए नहीं बल्कि जीवितों के लिए है; इसलिए सरकार के नियमों को बनाने का अधिकार जीवितों को है। हमारा है कि एक युग में जो कार्य अतिशय और अनुमानजनक प्रतीत होता है दूसरे युग में सोम वसे अनुचित और अनुमानजनक लगते हैं। इन बातों में निर्णय का अधिकार किस है जीवितों को या मृतकों को ?

‘बर्क’ महोदय ने इन बातों के आधार पर जो वृत्त रखी हैं। ऊपर वह लिख दिया या कुछ है कि वे वास्तव में हैं क्योंकि उनका निर्माण करने वाली संसद का अनुमानों कीड़ियों को बचा के लिए बाँध रखने का कोई अधिकार नहीं था। इसलिए वह स्पष्ट है कि उन बातों पर आधारित बर्क के सभी तर्क व्यर्थ हैं।

मनुष्य के प्राकृतिक और नागरिक अधिकार

अब तुमसे ‘बर्क’ के उस विचारगत रचना पर विचार करना है जिसमें उन्होंने एक प्रकार से सरकार के कार्यों की व्याख्या की है। किन्तु इस व्याख्या के बाद कि वे जो कुछ कह रहे हैं उस पर विचार कर लिया जायगा। अभी तो हमारी बात के सम्बन्ध में कोई प्रमाण बनना तर्क न प्रस्तुत करके जो कुछ भी मैं माना उसे कहा है।

किन्ती निर्णय पर पहुँचने के लिये के तक आरम्भ करने के पूर्व आपार

स्वल्प किन्हीं निश्चित सिद्धान्तों या तथ्यों की स्वीकृति या अस्वीकृति की स्थापना आवश्यक है। 'बर्क' ने स्वभावतः फ्रांस की 'राष्ट्रीय सभा' द्वारा प्रस्तावित 'मनुष्य के अधिकारों की घोषणा' जिसके आधार पर फ्रांस का संविधान बना है, की निम्ना की है। उन्होंने उसे मनुष्य के अधिकारों का 'सुदृढ़ और काग्रेसी' पूर्ण पत्र' कहा है।

क्या 'बर्क' महोदय यह कहना चाहते हैं कि मनुष्य का कोई अधिकार नहीं है? फिर तो, उन्हें यह भी मानना पड़ेगा कि अधिकार जैसी वस्तु नहीं है और स्वयं उन्हें भी कोई अधिकार नहीं है। किन्तु यदि 'बर्क' के करने का अभिप्राय यह हो कि मनुष्य के अधिकार हैं तो प्रश्न होता कि वे कौन कौन-से अधिकार हैं और प्रथम मनुष्य ने उन्हें किस प्रकार प्राप्त किया।

मनुष्य के अधिकारों की महत्ता को जानने वाले जो लोग प्राचीन प्रजाओं के आधार पर तर्क करते हैं वे प्राचीनता में पर्याप्त दूर तक न जाने की भूल कर बैठते हैं। वे प्राचीनता की पूरी दूरी तक नहीं करते बल्कि बीच के सभी सहस्र वर्षों तक पहुँचकर रुक जाते हैं और उस समय जो कुछ किया गया उस आज के लिए नियम के रूप में प्रस्तुत करते हैं। किन्तु ऐसा उपयुक्त नहीं है।

यदि हम अपेक्षाकृत अधिक प्राचीनता का अध्ययन करें तो हमें ज्ञात होगा कि उस समय नितांत विपरीत मत प्रचलित था। यदि प्राचीनता ही प्रमाण है तो क्रमशः सहस्रों ऐसे प्रमाण प्रस्तुत किये जा सकते हैं जो एक-दूसरे का विरोध करते हैं। किन्तु यदि हम प्राचीनता में बहते चले तो अन्त में ठीक स्थान पर पहुँचेंगे। इस प्राचीनता के उस किन्तु पर पहुँचेंगे जहाँ मनुष्य अपने बचाने वाले के यहाँ से तीखा पृथ्वी पर आया। वह उस समय क्या था मनुष्य। उस समय उसकी एक मात्र संज्ञा थी 'मनुष्य'। उसका बड़ी परबनी सने ही नहीं आ सकती है। इन परबियों की पर्चा बाद में होगी।

अब हम मनुष्य के जन्म और उसके अधिकारों के सूर्य तक पहुँचेंगे। उस दिन से लेकर आज तक निरन्तर शिन निमित्त प्रजाओं ने धामित होता आ रहा है, उनसे हमें केवल इतना प्रयोजन है कि हम उनकी भुटियों और गुणों का सदुपयोग कर सकें। आज से ही का सहस्रों वर्षों पूर्व रहने वाले मनुष्य अपने युग के लिए अपने ही आधुनिक वे जितने कि इस समय हम जीव हैं। उनके भी पूर्वज थे, उन पूर्वजों के पूर्वज थे और प्राचीन पीढ़ियों के लिए हम भी पूर्वज होंगे।

अगर केवल प्राचीनता का नाम भीषण के नामों का घातक करे तो जिस प्रकार है इस सी या सहस्रों वर्षों पूर्व रहने वालों को प्रमाण मानते हैं, वही प्रकार ही या सहस्रों वर्षों बाद होने वाले लोगों के लिए हम भी प्रमाण होयें।

वास्तविकता यह है कि प्राचीनता के विभिन्न अंश सभी को प्रमाणित करते हुए निश्चित रूप से कुछ भी प्रमाणित नहीं कर पाते हैं। एक प्रकार के दूसरे प्रकार का विशेष करण है और जगत् में हम धृष्टि के अधिकार में पहुँचे हैं वहाँ मनुष्य के अधिकारों का बीबी उत्पन्न है। वहाँ हमारी प्रोच प्रमाण होती है और उन्हें को आधार मिलता है।

अगर तथ्य के भी वर्षों बाद मनुष्य के अधिकारों के विषय में समझा प्रमाण हुआ होता, तो वह समय जगत् मनुष्य के अधिकारों के इसी बीबी उत्पन्न को प्रमाण मानते। वास्तु, हमें भी इसी को प्रमाण मानना चाहिए।

यद्यपि मैं मनुष्य के सम्प्रदाय विरोध के सिद्धान्तों की चर्चा करता नहीं चाहता किन्तु यह स्पष्ट है कि ईसा मसीह की चर्चा-परम्परा 'आरम्भ' तक पहुँचती है। फिर मनुष्य के अधिकारों का उत्पन्न मनुष्य की धृष्टि को क्यों नहीं मानते? मेरे मत में इसका जही उत्तर है कि बीबी में कई प्रकार के अतिसूचक अस्तित्व में आये और वे धृष्टत-पूर्वक मनुष्य के रूप को मनुष्य करती रही हैं।

अगर प्रत्यक्ष जगत् एक विषय की घातक-व्यक्ति का आदेश देने का अधिकार किसी भी बीबी को या तो वह तथ्य को उत्पन्न बीबी को रहा और यदि वह बीबी में ऐसा कोई आदेश नहीं दिया तो बाद की बीबी इस प्रकार का आदेश देने के लिए कोई प्रमाण प्रमाण नहीं कर सकती और वे बीबी प्रमाण ही स्थापित कर सकती हैं।

'अधिकार-साम्य' के बीबी सिद्धान्त का अन्तर्गत केवल भीषण व्यक्तियों के ही नहीं बल्कि अधिक बीदियों के भी है। वहाँ तक अधिकार का प्रत्यक्ष है, अत्यन्त बीबी अपनी पूर्ववर्ती बीदियों के समान है जिस प्रकार प्रत्येक व्यष्टि अपने समानाधिकारों के अन्तर्गत अधिकार लेकर उत्पन्न होता है।

धृष्टि की रचना जब और जिस प्रकार हुई, इसके बारे में जिसने इतिहास का परम्परागत कथाएँ प्रमाणित हैं वे चाहे विभिन्न प्रकार की उत्पन्न हों या अधिकार अन्तर्गत बी, वे चाहे किसी मत या विचार के विषय में एक दूसरे के विरुद्ध हों किन्तु वे सभी मनुष्य के अन्तर्गत अधिकार को एक स्तर में रखीकार

स्वरूप किन्हीं निश्चित सिद्धांतों या तथ्यों की स्वीकृति या अस्वीकृति की स्थापना आवश्यक है। 'वर्क' ने स्वभावतः फॉस की 'राष्ट्रीय समा' द्वारा प्रकाशित 'मनुष्य के अधिकारों की घोषणा' जिसके आधार पर फॉस का संविधान बना है की निम्ना की है। उन्होंने उसे मनुष्य के अधिकारों का 'शुद्ध और कात्तमा पूर्ण पत्र' कहा है।

क्या 'वर्क' महोदय यह कहना चाहते हैं कि मनुष्य का कोई अधिकार नहीं है? फिर तो, उन्हें यह भी मानना पड़ेगा कि अधिकार नहीं है वस्तु नहीं है और स्वयं उन्हें भी कोई अधिकार नहीं है। किन्तु यदि 'वर्क' के करने का अभिप्राय यह हो कि मनुष्य के अधिकार हैं तो प्रत्यक्ष होना कि वे कौन कौन-से अधिकार हैं और मूलतः मनुष्य ने उन्हें किस प्रकार प्राप्त किया।

मनुष्य के अधिकारों की महत्ता को जानने वाले जो लोग प्राचीन प्रमाणों के आधार पर तर्क करते हैं वे प्राचीनता में पर्याप्त दूर तक न जाने की भूल कर बैठते हैं। वे प्राचीनता की पूरी दूरी तक नहीं करते बल्कि बीच के ही पं सहज क्यों तक पहुँचकर रुक जाते हैं और उस समय जो कुछ किया गया उसे आज के लिए नियम के रूप में प्रस्तुत करने हैं। किन्तु ऐसा उपयुक्त नहीं है।

यदि हम अपेक्षाकृत अधिक प्राचीनता का अध्ययन करें तो हमें ज्ञात होगा कि उस समय नितांत विपरीत मत प्रचलित था। यदि प्राचीनता ही प्रमाण है तो स्पष्ट सद्भावों ऐसे प्रमाण प्रस्तुत किये जा सकते हैं जो एक-दूसरे का विरोध करते हैं। किन्तु यदि हम प्राचीनता में बहुत जर्म तो जन्त में ठीक स्थान पर पहुँचेंगे। हम प्राचीनता के उस बिन्दु पर पहुँचेंगे जहाँ मनुष्य अपने जमाने वाले के यहाँ से सीधा पृथ्वी पर आया। वह उस समय गया था मनुष्य। उस समय उसको एक मात्र संज्ञा थी 'मनुष्य'। उससे बड़ी परबरी भले ही नहीं जा सकती है। इन परबियों की जर्जा बाद में होगी।

अब, हम मनुष्य के आज और उसके अधिकारों के मुख्य तत्त्व पहुँचेंगे। उस दिन से लेकर आज तक विश्व जिन विभिन्न प्रकारों में स्थापित होता आ रहा है, उनसे हमें केवल इतना प्रयोजन है कि हम उनकी वृद्धि और गुणों का अनुपयोग कर सकें। आज से ही या सदियों क्यों पूर्व रहने वाले मनुष्य जीवन के लिए अपने ही आधुनिक से जितने कि इस समय हम लोग हैं। उनके भी पूर्वज थे, उन पूर्वजों के पूर्वज थे और बाकी बीड़ियों के लिए हम भी पूर्वज हैं।

नहीं है कि मनुष्य, मनुष्य के मन में अपने निर्वाण-कर्ता के बहुत दूर दूरा दिखा दिया है और बीच के बहुत दृष्टिमान अन्तर को कटिपथ बननेवाले के भर दिया गया है। मनुष्य को उन अवरोधों में से होकर ही जाने पड़ता है।

'बर्क' महोदय ने मनुष्य और उसके कर्मा के बीच कई अवरोध प्रस्तुत किये हैं। वे लिखते हैं—'हम ईश्वर से डरते हैं; एकाकीता का आश्चर्यजनक भय की दृष्टि से देखते हैं। संघर्ष के प्रति स्नेह रखते हैं। व्यापारिक के प्रति कर्तव्यनिष्ठ रहते हैं। पुण्यार्थ का आग्रह करते हैं और भुखीन लोगों का सम्मान करते हैं।' 'बर्क' महोदय 'चीरी' (Cherry) को चुन बने। 'पीटर' (Peter) का नाम भी ने कहा कि चुन बने।

मनुष्य का कर्तव्य अपने अवरोधों से भरा हुआ नहीं है कि अपने वास्तविक कर्तव्य का पालन करने के लिए उसे अपने अवरोधों को एक-एक कर के पार करना पड़े। मनुष्य का कर्तव्य वास्तविक चरण है। उसके कैवल्य हो पड़ है—ईश्वर के प्रति और पड़ोसी के प्रति। ईश्वर के प्रति अपना कर्तव्य प्रत्येक व्यक्ति को समझना पड़िये और पड़ोसी के प्रति उसी प्रकार का व्यवहार उसे करना पड़िये, जिस प्रकार का व्यवहार वह अपने प्रति चाहता है। यदि कत्तावादी अपना काम ठीक से करे तो उनका आग्रह अवश्य ही होगा किन्तु यदि वे अपना काम ठीक से नहीं करते तो लोग उनसे घृणा करेंगे। किन्तु कोई अधिकार होता नहीं गया है, परन्तु किन्तु अधिकार मिठा है। विवेकीय संसार में उन्हें मान्यता नहीं मिल सकती।

अब तक मैंने मनुष्य के प्राकृतिक अधिकारों की आधिकारिकता की है, अब हम मनुष्य के नागरिक अधिकारों पर विचार करें और यह देखें कि उनका व्यवस्था-स्रोत कहाँ है। मनुष्य समाज में इसलिए सम्मिलित नहीं हुआ कि उसकी स्थिति बनने की कोशा और कुपि हो जाय और न इसलिए कि उसके अधिकार रहने की कोशा कम हो जाय। परन्तु इसलिए कि उसके निजी अधिकारों की कोशा-सूची अधिक सुरक्षा प्राप्त हो सके। उसके प्राकृतिक अधिकार ही उसके नागरिक अधिकारों के आधार हैं। किन्तु इस चेत के पदार्थ बीच के लिए इन प्राकृतिक और नागरिक अधिकारों के विषय-निर्णय अवरोधों का ज्ञान आवश्यक है।

प्राकृतिक अधिकारों का सम्बन्ध मनुष्य की कृपा से है। उनके अन्तर्गत नैतिक अधिकार का धार्मिक अधिकार और उन सभी कार्यों की करने का

करते हैं। मनुष्य के समान अधिकार का अर्थ है कि सभी मनुष्य एक कोटि के हैं। वे सर्वत्र समान पया होते हैं और उनके प्राकृतिक अधिकार समान हैं। सृष्टि का कार्य है संतति के रूप में नष्ट-निर्माण जिसे वह पीढ़ियों के माध्यम से सम्पन्न करती है। अस्तु बिस्व में उत्पन्न होने वाला प्रत्येक विपु सीधे ईश्वर से अस्तित्व प्राप्त करता है। उसके लिए विश्व उत्पत्ता ही महीन है, भित्ति महीन वह उस व्यक्ति के लिए या जो सबप्रथम उत्पन्न हुआ होगा और उसके प्राकृतिक अधिकार उसी आदिम व्यक्ति के प्राकृतिक अधिकार के समान होंगे।

यूदा ने सृष्टि का जो इतिहास बताया है चाहे उस ईवी प्रमाण माना जाय या केवल ऐतिहासिक वह मनुष्य के अधिकारों की एकरा या समानता का स्पष्ट दृष्टि में समर्थन करता है। यसा 'ईश्वर ने कहा कि अपनी प्रतिमा के अनुरूप हम मनुष्य का निर्माण करें अपनी प्रतिमा के अनुरूप उसने मनुष्य को बनाया और ऊर्ध्व नर और नारी का रूप दिया। इस वचन में नर और नारी के घेद की ओर संकेत है किसी जग्य भेद की ओर नहीं। यदि इस ईवी प्रमाण ने माना जाय तो कम-से-कम ऐतिहासिक मानना ही होगा। इससे स्पष्ट हो जाता है कि मनुष्य की समानता का सिद्धांत महीन नहीं बरन् सबसे पुरातन सिद्धांत है।

यह भी दृष्टव्य है कि बिद्वत् के सभी धर्मों का व्यापार है मनुष्य की एकरा। उनके अनुसार सभी मनुष्य एक कोटि के हैं। मृत्यु के बाद स्वर्ग में नरक में जयवा जहाँ नहीं भी मनुष्य का अस्तित्व माना जाय उनके भेद केवल अस्त्रास्त्रों और कुरादों के आधार पर होवे। व्यक्तियों में नहीं बरन् अपराधों के अनुसार बग का निर्माण करके सरकार भी इसी गिद्धांत को मानती है।

उपर्युक्त सत्य सर्वोच्च सत्य है, और उस मान कर नाम करने में हमारा महान् हित है। इस सत्य के प्रकाश में यदि मनुष्य को देखा जाय और प्रत्येक व्यक्ति को इस बात की सिखा दी जाय कि वह अपने को इसी प्राण में देखे तो सृष्टि-वर्तन जयवा ससार के प्रति जगज्जगतियों को वह पूर्णतः समझ पायेगा। किन्तु जब वह अपने सदस्य को भूल जाता है जयवा यों वहे कि पर वह अपने जाति और रंग का भूल जाता है केवल उसी समय वह दुष्टपारी बनता है।

यूरोप के प्रत्येक देश की वर्तमान सरकार की कुरादों में से यह कम कुराई

अगर की बर्बाद से छीन काटें स्पष्ट हो जाती है, जो इस प्रकार है—

१—राष्ट्रीय नागरिक अधिकार व्यक्ति के प्राकृतिक अधिकार से उत्पन्न होता है या यों कहें कि किसी प्राकृतिक अधिकार के विविधय में हमें कोई नागरिक अधिकार प्राप्त होता है ।

२—समाज-व्यक्ति अपने वास्तविक रूप में मनुष्य के वैयक्तिक (प्राकृतिक) अधिकारों के उन विविध रूप का संलयन (संयोजन या मैगीकरण) है जो व्यक्तिगत-व्यक्ति के रूप में अवर्णित होता है तथा जिसके द्वारा व्यक्ति विवेक का कार्य सिद्ध नहीं होता । किन्तु अधिकारों का वही रूप जब समाज में फैल-झूल कर दिया जाता है तो वह प्रत्येक व्यक्ति का प्रयोजन सम्पन्न करने में समर्थ होता है ।

३—जिन प्राकृतिक अधिकारों को वास्तविक करने की राष्ट्रीय व्यक्ति में नहीं होती उनको राष्ट्र ने उत्तम राष्ट्र का प्रयोग व्यक्ति के उन अधिकारों के ऊपर नहीं किया था क्योंकि किन्हीं व्यक्ति ने अपने नाम बचा रखा है और जिसका निष्पादन करने की व्यक्ति उसमें पूर्ण है ।

दोने संलय में प्राकृतिक व्यक्ति से लेकर सामाजिक व्यक्ति तक मनुष्य के विकास की बर्बाद की और व्यक्ति ने जिन प्राकृतिक अधिकारों को अपने पास बचा रखा है उनके तथा किन्हीं उनसे समाज की लेकर नागरिक अधिकार प्राप्त होते हैं उन प्राकृतिक अधिकारों के अंशों को स्पष्ट किया अवस्था स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है । अब हम इन विचारों के प्रकाश में सरकारों पर विचार करें ।

[सरकार के गुण]

यदि हम विश्व के इतिहास पर दृष्टिपात करें, तो हम आसन्न भुविता-पूर्वक उदात्त बचता सामाजिक समझौते से उत्पन्न हुई सरकारों का राज्य प्रकाश की सरकारों के अन्तर जान सकते हैं । किन्तु इसे धरेतावत अधिक स्पष्ट रूप से बचाने के लिए अग्रणी होता कि हम उन कठिन अवस्था-स्रोतों का परिचय प्राप्त कर लें जिनके सरकारों की उत्पत्ति हुई है और जिन पर वे आधारित हैं ।

उन सभी अवस्था-स्रोतों को हम छीन करी में विवेक कर सकते हैं—

प्रथम रूप से उत्पन्न हुई पहली सरकार, दूसरे रूप में समय रिक्त-ताओं की सरकार की और तीसरा बना बुद्धिवादी सरकार का स्रोत ।

अधिकार है जिन्हें हम व्यक्तिगत रूप से अपनी सुविधा और सुख के लिए करते हैं किन्तु जो दूसरों के प्राकृतिक अधिकारों के लिए हानिप्रद नहीं है। नागरिक-अधिकार मनुष्य के वे अधिकार हैं जिन्हें वह समाज का सदस्य होने के नाते प्राप्त करता है।

प्रत्येक नागरिक अधिकार का आधार कोई-न-कोई ऐसा प्राकृतिक अधिकार होता है जो व्यक्ति में पहले से रहता है किन्तु उसका उपयोग करने में व्यक्ति तब तब तक समी दशाओं में पुनः समर्थ नहीं होती। सुरक्षा और प्रतिरक्षा विषयक सभी अधिकार इसी प्रकार के हैं।

इस सतिष्ठ विवेचना के आधार पर हम मनुष्य के प्राकृतिक अधिकारों के दो भेदों को स्पष्ट रूप से समझ सकते हैं। प्राकृतिक अधिकारों का एक वर्ग यह है जिसे समाज में सम्मिलित होने पर भी मनुष्य अपने पास रखता है और छोड़ता नहीं दूसरा वर्ग यह है जिस वह समाज का सदस्य होने के नाते समाज को सौंप देता है।

जिन प्राकृतिक अधिकारों का वह अपने पास बचा रखता है वे ऐसे अधिकार हैं जो स्वयं पूर्ण हैं और जिन्हें कार्यान्वित करने की उपयुक्त शक्ति भी व्यक्ति में होती है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है बौद्धिक अधिकार या मानसिक अधिकार इसी प्रकार के हैं और यम भी उन अधिकारों में से एक है।

वे प्राकृतिक अधिकार जिन्हें व्यक्ति अपने पास बचा कर नहीं रखता ऐसे अधिकार हैं जो स्वयं पूर्ण हैं, किन्तु व्यक्ति में उन्हें कार्यान्वित करने की शक्ति अपूर्ण है। अतः, उनसे व्यक्ति का काम पूरा नहीं होता। अपने प्राकृतिक अधिकार के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को करना निम्न करने का अधिकार है, और जहाँ तक संस्थित के अधिकार का प्रश्न है वह करना निर्णय करने का अधिकार नहीं छोड़ता किन्तु निर्णय करके ही वह बसा करेगा यदि उस निश्चय को कार्यान्वित करने की शक्ति उसमें नहीं है? इसलिए वह करना अधिकार समाज को सौंप देता है और अपनी शक्ति के अनिवार्य तबसे नहीं अधिक समाज की शक्ति का अवलम्बन प्राप्त करता है। समाज व्यक्ति को कुछ दान नहीं देता। समाज में प्रत्येक व्यक्ति ने अपना अधिकार-धन लगाया है। परिणामस्वरूप समाज में जो लाभ होता है व्यक्ति तबसे ही करना स्वयं प्राप्त करता है।

वास्तविकता यह रहती है कि सभी मनुष्यों ने अपने अधिकृत एवं पूर्ण अधिकार के साथ परस्पर सरकार स्थापित करने का समझौता किया। केवल इसी पद्धति से सरकारों की अस्तित्व में आने का अधिकार है, और यही एक मात्र सिद्धान्त है जिस पर सबका अस्तित्व बना रहना चाहिए।

सरकार क्या है और इसे क्या होना चाहिए, इस बात को सम्मिलित रूप से के लिए इसके उद्गम पर विचार करना आवश्यक है। इस प्रकार हम तुलनात्मक यह बात समझें कि सरकारें या तो जनता के बीच से उत्पन्न हुई होती हैं या उनके ऊपर लायी गयी होती हैं। बर्क यही सिद्धांत ने इस प्रकार का कोई भेद स्पष्ट नहीं किया।

'बर्क' किसी वस्तु के मूल तक जाकर उसका परीक्षण नहीं करते। इसीलिए वे प्रत्येक वस्तु की 'वर्णना' करते हैं। किन्तु विषय में 'इंक्विजिशन' और 'अंश' के संविधानों की तुलनात्मक समीक्षा करने का अपना अनिवार्य कर्तव्य स्पष्ट किया है।

जुनीटी देकर 'बर्क' ने इस विषय को विवादास्पद बना दिया है। जहाँ वे अपनी जुनीटी स्वीकार कर रहा है। यही जुनीटियों के माध्यम से ही मूल्य मूल्य प्रकट हुआ करता है। वे इस जुनीटी को यही उत्तरा के साथ स्वीकार करणा है। क्योंकि इस प्रकार जुने समाज से उत्पन्न होने वाली सरकारों की वर्णना करने का अवसर प्राप्त होता है।

किन्तु, सबसे बड़ी हमें यह निर्दिष्ट कर लेना चाहिए कि 'अधिकार' का तात्पर्य क्या है। केवल 'अधिकार' शब्द का प्रयोग कर लेना पर्याप्त नहीं है। हमें इस शब्द का सामाजिक अर्थ निर्दिष्ट कर लेना चाहिए।

'अधिकार' केवल नाम की वस्तु नहीं, बल्कि एक शब्द है। इसका अस्तित्व सामाजिक नहीं, बल्कि वैयक्तिक है। अधिकार सरकार या पूर्ववर्ती होता है और सरकार केवल अधिकार की वृद्धि है। किसी देश का अधिकार उसकी सरकार का कार्य नहीं। बल्कि उस सरकार का निर्वाह करने वाली जनता का कार्य है। अधिकार यह तब करता है कि सरकार की स्थापना किन सिद्धान्तों पर होती, उसकी व्यवस्था किस प्रकार की जायगी। इसके अधिकार क्या होंगे निर्दिष्ट पद्धति क्या होगी। 'अधिकार' का कार्य-काल क्या होगा सरकार के 'कार्यवाहक विभाग' (Executive part) के अधिकार क्या होंगे। संक्षेप में हम यह

जब कुछ पासाक मनुष्यों ने सिद्धों के माध्यम से ईश्वर के साथ संबंध स्थापित करने का बहाना किया तो बिना पूर्णतः अन्ध-विश्वास द्वारा पालित रहा। सिद्धों से पूछा जाता था और उनसे जो कुछ कहलाया जाता था, वही कानून होता था। जब तक विश्व में अन्ध-विश्वास का बोझा होता था तब तक इस प्रकार की सरकारों का अस्तित्व रहा।

इसके अनन्तर बिजेताओं का युग आया। विजयी विधियम के समारंभ के अस्तित्व के अंत पर ध्यान करके वे और तत्काल में राजदण्ड की संज्ञा प्राप्त की। इस प्रकार की सरकारें तब तक अस्तित्व में रहती हैं जब तक उन्हें स्थापित करने वाली शक्ति बनी रहती है। प्रत्येक प्रकार की शक्ति को अपने अनुकूल घमन के अन्तर्गत वे उन बिजेता शासकों ने बल और क्षमता का पठन किया तथा 'दीवी अधिकार' (Divine Right) की आराध्य प्रतिमा पढ़कर उसके द्वारा लोगों का प्रभावित करने का काम रखा। आये बल कर उन प्रतिमा ने पोषण जो अपने को आध्यात्मिक और लौकिक कहा है अनुकरण करके ईसाई धर्म के प्रवर्तक के विरोध में एक मूर्त प्रतिमा का स्वरूप धारण किया जिस धर्म और राज्य (Church and State) कहा गया।

जब मैं मनुष्य के प्राकृतिक गौरव पर विचार करता हूँ तो क्षमता और शक्ति द्वारा मनुष्य जाति का शासन करने के प्रयत्न पर मुझे क्रोध आता है और उन लोगों से भी अप्रसन्न हुए बिना मैं नहीं रह सकता जिन्हें मृत और दुष्ट मानकर उनका शासन किया जाता है।

जब हम उन सरकारों का परीक्षण करें जो अन्धविश्वास और विजय के द्वारा स्थापित नहीं की जाती बल्कि जो समाज में उत्पन्न होती हैं।

स्वतंत्रता के सिद्धांतों को स्थापित करने की दिशा में इस कथन का एक महान् प्रयत्न माना जाता है कि सरकार शासन और नागरिकों के बीच एक समझौता है। किन्तु यह कथन सत्य नहीं हो सकता क्योंकि इस प्रकार, कार्य का अस्तित्व कारण से पूर्व मान लिया जाता है। इतना ही निश्चित है कि मनुष्य की सृष्टि के बाद सरकार की सृष्टि हुई होगी और एक समझौता ऐसा रहा जब कि सरकारें नहीं थीं। इसलिए आरम्भ में उपर्युक्त प्रकार का समझौता करने के लिए कोई कारण नहीं रहे।

माने को वास्तव मान्य है। यह ज्ञान के दूर करने वाले परमियों के इन विचारों को अत्यन्त समझ कर वह उन्हें अनादर की दृष्टि से देखने लगा है। परमियों मनुष्य के आत्म की प्रतिष्ठा को क्षीयित कर देती है। परमियों वास्तव करने वाला व्यक्ति स्मृत्युपीय मानव-जीवन के दूर, एक छीटे-से समय के काटकार में बन्द हो जाता है।

अतः वह वास्तव की बात नहीं है कि व्यक्ति के परमियों की प्रथा उचित है। विश्व के किसी भाग में इन परमियों का रहना वास्तव में आश्चर्यजनक है। क्योंकि परमियों है क्या? उनका मुख्य क्या है और उनका परिणाम क्या होता है? इन सब एक 'म्यामाप्पस' अथवा 'विनाश' के बारे में सोचते 'या बुद्ध कहते हैं तो हमारे अस्तित्व में उनके किसी कार्य या परिणाम की बात उठती है। 'म्यामाप्पस' का विचार करते ही अथवा उनके बारे में सोचते ही उसकी 'वर्गीकरण' का भाव भी अस्तित्व में भूय जाता है। इसी प्रकार यह हम 'विनाश' की चर्चा करते हैं तो उसकी भीष्ठा की बात अस्तित्व में आर उठती है। किन्तु अब हम किसी समय को देखकर 'परमियों' के रूप में प्रकट करते हैं तो उनके द्वारा किसी अर्थ का बोध नहीं होता है।

इसलिए हम उन 'परमियों' का सम्मान किस प्रकार करें, जिनसे किसी अर्थ का बोध नहीं होता? मनुष्य की कल्पना के अतिरिक्त विचार क्यों और परमियों की कृष्टि की है जिनमें से किसी का अतीत मानव और आर के अतीत दोनों के क्या है। तो किसी वन-देवता का भाषा अतीत मनुष्य का है और भाषा बदले का है। परमियों की कल्पनाओं में भी हम कल्पना-विनाश का वर्णन करते हैं। किन्तु 'परमियों' की कृष्टि इन सभी अर्थों के अपूर्व है।

यदि सम्पूर्ण देव में इन परमियों के प्रति विचारों की प्रकृति ही तो उनका मुख्य स्वर्ण यह हो जाय और कोई व्यक्ति उन्हें स्वीकार न करे। तब अधिक नउ ही उन्हें मुख्य देता है या उनका मुख्य शीघ्र लक्ष्य है। परमियों को हटाने की आवश्यकता ही नहीं है। यह सब ज्ञान एक स्वर से उनकी ईश्वरी कल्पना है, उसी कारण वे स्वर्ण सुत हो जाती है। इन आधुनिक परमियों की वास्तव करने वाले व्यक्ति अब मनुष्य के अत्यन्त भाव में आत्म स्व के रूप होने लग गये हैं और अतीत अतीत की प्रकृति के साथ-साथ यह विचार माने जाया है कि कोई व्यक्ति 'परमियों' को स्वीकार नहीं करेगा।

कह सकते हैं कि संविधान में असेनिक सरकार (Civil govt) और उसके सिद्धान्तों की जिनके अनुसार उसे काम करना है और जिनमें उसे बड़ रहना है सम्पूर्ण व्यवस्था की जाती है।

अस्तु किसी देश के संविधान और उसकी सरकार में बड़ी सम्बन्ध है जो उस सरकार द्वारा बाद में बनाये हुए कानून और उसके अनुसार काम करने वाले ग्याय विभाग में है।। ग्याय-विभाग न तो कानून बनाता है और न उसे बदल सकता है। वह केवल बने हुए कानूनों के अनुसार काम करता है। इसी प्रकार सरकार संविधान द्वारा शासित होती है।

[कुलीन-सन्ध]

पदवियों केवल उपनाम है और प्रत्येक उपनाम एक पदवी है। जहाँ उस उपनामों या पदवियों का सम्बन्ध है उनमें कोई शेष नहीं है, किन्तु उनके कारण मनुष्य के चरित्र में एक प्रकार का आहम्बर उत्पन्न हो जाता है जो उसे पतन की ओर ले जाता है। इन पदवियों के कारण मनुष्य महान कार्यों के लिए अयोग्य हो जाता है और छोटी-छोटी बातों में ज़िर्बों का भद्दा अनुकरण करने लगता है। चरित्र में जब इस प्रकार का आहम्बर उत्पन्न हो जाता है, तो मुख्य लक्ष्यों एवं वस्तुओं के समान गुणवत्ता वस्तुओं की खोज करने लगता है। एक प्राचीन सैतक न लिखा है कि जब मैं शिशु था तब मैंने शिशु के समान सोचा किन्तु जब मैं बड़ा हो गया तो मैंने बचान की चीजों को छोड़ दिया।

फ्रांस के उन्नत मस्तिष्क ने पदवियों की पुराइयों को दूर कर दिया वह अच्छा ही हुआ। जिस प्रकार बड़ होने पर वयस्कता के बल व्यर्थ हो जाते हैं उसी प्रकार फ्रांस की उन्नत मानवता के लिए 'राइट' और 'ड्यूटी' की पदवियाँ व्यर्थ हो गयीं। इन पदवियों को हटाकर फ्रांस ने सबको सम पराक्रम पर ला दिया ऐसी बात नहीं है बल्कि उसने सबका उत्थान कर दिया। फ्रांस ने सामन (बोने) को मिटा कर उसके स्थान पर मनुष्य को खड़ा कर दिया। 'ड्यूटी' 'फाइट' तथा 'अर्थ' जैसे अत्यन्त सख्तों में अब कोई आकर्षण नहीं रहा। जिन्होंने इन पदवियों को धारण कर रखा था, उन्होंने भी अब इन्हें निरर्थक समझ कर त्याग दिया है।

मनुष्य का शुद्ध मस्तिष्क अपने प्राकृतिक वाच्य अर्थात् सामान की ओर

जन्म होने के लिए उत्पन्न होती है।

मानव-चरित्र का प्रत्येक अत्राहृतिक उत्पन्न अल्प या अधिक मात्रा में समाज को प्रभावित करता है। दृष्टि बर्णों की यह प्रथा भी इसी प्रकार समाज को प्रभावित करती है। अनेक सन्तानों को छोड़ कर जिन सभी सन्तानों को यह बात स्वीकार नहीं करता, वे समान्यतः जनता द्वारा पालित होने के लिए, न्यायों के समान समाज पर छोड़ दी जाती हैं। किन्तु उनके पालन-पोषण का व्यय अल्प दिगुणों के पालन-पोषण की अपेक्षा कहीं अधिक होता है। सरकारों नववा दरबारों में न्यायस्थल नहीं वा निर्वाह करके उन्हें निरुक्त किया जाता है और उनका मार अमरा संभालती है।

माता-पिता को अपनी कविह सन्तानों के प्रति किस प्रकार का वात्सल्य हो सकता है? प्रकृति के अनुसार वे उनकी सन्तानों हैं, विवाह के अनुसार वे उनकी सम्पत्ति की अधिकारिणी हैं किन्तु पुत्रीय वर्ग के अनुसार वे बारम्बार और नववा हैं। एक ओर तो वे अपने माता-पिता के एक हैं और दूसरी ओर कुछ भी नहीं हैं। अतः, इसलिए कि सन्तानों की माता-पिता मिले माता-पिता को सन्तानों में वारम्बार सम्मान स्थापित हो समाज को समुच्चय मिले तथा इस विभिन्न वर्ग का समुच्चय हो जाय किन्तु के संविधान ने 'असुर' के नियम को समाप्त कर दिया।

यहाँ तक हम लोगों ने 'पुत्रीय वर्ग' पर प्रभावित एक दृष्टिकोण से विचार किया। अब हम दूसरे दृष्टिकोण से इस पर विचार करें। किन्तु हम पारिवारिक नववा सार्वजनिक न्याय किसी भी दृष्टिकोण से इस पर विचार करें, प्रत्येक दृष्टा में इसकी दुर्गति ही प्रकट होती।

जन्म देरी की अपेक्षा अनेक के पुत्रीयवर्ग में एक लक्षण कम है। यहाँ के विधान-संग्रह में आनुवंशिक उत्पत्ति अनेक पुत्रीयवर्गों की कोई उम्र नहीं है। ईंग्लैण्ड की उच्च-सभा (House of Lords) को एम. डेलैयैट्ट (M. Delaunay) ने पुत्रीयवर्ग की उम्र के नाम से पुत्रीय वा अनेक में इस प्रकार की कोई उम्र नहीं है। अतः, अब हम उन कारणों पर विचार करें जिनके माते अनेक के संविधान ने इस प्रकार की किसी सभा को अस्वीकार कर दिया है।

यह और उच्च-सभा कारण यह है कि यह पुत्रीय-वर्ग पारिवारिक न्याय और न्याय पर आधारित है।

एक समय या जब कि जिसे हम नुसीन वर्ग (Nobility) कहते हैं, उसके निम्नतम स्तर के लोगों की यह प्रतिष्ठा थी जो आज के युग में उस वर्ग के उच्चतम स्तर के लोगों की नहीं है। आधुनिक 'इयूरो' की अपेक्षा साहसिक कार्य की सोच में 'क्रिस्टेण्डम' से हो कर जाने वाले सरासरी व्यक्ति को लोग अधिक भयानक से देखा करते थे। संसार ने इस मूर्खता के पतन का दर्शन कर लिया। इसका पतन इसलिये हुआ कि सबत्र इसकी सिद्धी उड़ायी जाने लगी। परियों का प्रहसन भी इसी प्रकार की दशा को प्राप्त होगा।

फ्रांस के वेपामन्तों ने उचित समय पर इस बात को समझ लिया कि समाज में ऐसी और प्रतिष्ठा के नवीन आचार होने चाहिए। पुराने आचार आज के युग के लिए व्यर्थ हो चुके हैं। परियों के वास्तविक आचार के स्वागत कर अब उन्हें चरित्र के ठोस आचार पर सजा होना चाहिए। इसी ध्येय से फ्रांस ने परियों को अति-वेदी पर भाकर बुद्धि-वेपसा के मिश्रित उन्हें होम कर दिया।

परियों की मूर्खता का सम्बन्ध यदि किसी अन्य धुराई से न होता तो घम्भीरता एवं विधि-पूर्वक उन्हें नष्ट करने की आवश्यकता न पड़ी होती जैसा कि फ्रांस की 'राष्ट्रीय सभा' ने किया। इसीलिए 'नुसीन वर्ग' के चरित्र और प्रवृत्ति की ओर छान-बीन आवश्यक है।

कुलीनों का यह वर्ग विजेताओं द्वारा स्थापित सरकारों से उत्पन्न हुआ। मूलतः यह वर्ग विजेताओं द्वारा स्थापित सैनिक सरकारों का समर्थन करने वाला अथवा उसे बल प्रदान करने वाला सैनिक वर्ग था और जिस उद्देश्य से उसकी उत्पत्ति हुई थी उसीको समय में रस कर इस वर्ग की परम्परा को बनाये रखने के लिए इसके परिवारों में 'जेष्ठत्व का नियम' लागू करके बंध की कनिष्ठ शाखाओं को पैतृक सम्पत्ति के अधिकारों से वंचित कर दिया गया।

इस उदर्युक्त तथ्य में नुसीन वर्गों की प्रवृत्ति और उनका चरित्र स्पष्ट है। यह कानून प्रवृत्ति के प्रत्येक कानून के विरुद्ध है और प्रवृत्ति स्वयं इसके विनाश की मांग करती है। पारिवारिक म्याम स्थापित करने पर 'मिष्टजनों' का यह बय स्वयं समाप्त हो जाएगा। जेष्ठत्व के उदर्युक्त नियम के द्वारा ये कुलीनों के परिवार में पाँच अपने माध्य पर अथवा यों कहिए कि उनके जीवन में जो कुछ विपत्तियाँ पड़े उन्हें सोचने के लिए छोड़ दी जाती हैं उन्हें पैतृक सम्पत्ति का अधिकार नहीं रहता। इस वर्ग के परिवार में केवल एक गन्तान होती है गीप

दूसरा कारण यह है कि इस वर्ग के व्यक्ति एक राष्ट्र के विपान-मन्दन के सदस्य होने के लिए सक्षम अयोग्य हैं। अपने छोटे भाई-बहनों और अन्य सभी सम्बन्धियों को कुपमते हुए वे जीवन का आरम्भ करते हैं और मजिष्ण से ऐसा ही आचरण करने की शिक्षा प्राप्त करते हैं। जो व्यक्ति परिवार की अन्य सभी समस्याओं के अधिकारों को हड़प लेता है या अहंकारपूर्वक उन्हें कुछ सम्पत्ति वितरकर देता है वह न्याय अथवा प्रतिष्ठा की कोन-सी भावना लेकर विपान-मन्दन में प्रवेश कर जाता है ?

‘विपान-मन्दन’ की आनुवंशिक सदस्यता की बात न्यायाध्यस्त अथवा ‘जुरी’ के पद को आनुवंशिक मान लेने के समान ही असंगत है। जिस प्रकार यह कहना मूर्खता है कि मणितञ्ज आनुवंशिक होते हैं, उसी प्रकार विपान-मन्दन की आनुवंशिक सदस्यता का विचार भी मूर्खतापूर्ण है। जिस तरह राजदरबारों में आनुवंशिक राजकवि होनी के पात्र होते हैं उसी प्रकार विपान-मन्दन के आनुवंशिक सदस्य भी हास्यास्पद हैं।

जो किसी के प्रति उत्तरदायी नहीं है, ऐसे मनुष्यों की समा का विस्वास किसी को नहीं करना चाहिए।

यह वर्ग विजेताओं द्वारा स्थापित सैनिक-सरकारों के बर्बर विद्वानों का बने रहने में सहायता प्रदान कर रहा है तथा मनुष्यों की मनुष्य की सम्पत्ति मान कर अपने वैयक्तिक अधिकार द्वारा उनका शायन करने के नीचे विचार को प्रभाव देता है।

इस वर्ग की प्रवृत्ति मनुष्य जाति को नष्ट करने की है। प्रवृत्ति की शान मौनिक व्यवस्था के अनुसार, हम यह जानते हैं और यहूदियों के उदाहरण से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि यदि मनुष्य का बर्ष-विशेष सामान्य समाज के विच्छिन्न होकर निरन्तर आपस में ही विवाह-सम्बन्ध स्थापित करता रहे तो वह संस्था में अग्रगण्य क्षीण हो जायगा।

यह वर्ग स्वयं अपने कथित सहोदय को भी शक्ति बहूभाषा है और जबसर जाने पर मनुष्य की कुसीनता के ठीक विपरीत कार्य करता है। बर्ष ‘कुसीन’ लोगों की चर्चा करते हैं। मैं पूछता हूँ कि इन ‘कुसीनों’ की कुसीनता क्या है ? विश्व के सर्वोत्तम चरित्र प्रजातन्त्रीय मर्यादा पर अवतरित हुए हैं। कुसीन तन्त्र प्रजातन्त्र की समानता नहीं कर सका है।

प्रस्त करने के लिए सामान्य रूप से उन्होंने इन धर्मों का प्रयोग किया है, और धर्म तथा राज्य को एक में मिलाकर न रहने के कारणों का ही 'उद्भूत धर्म' को लिया है। इसलिए इस विषय पर बड़ा विचार कर लेना चाहिए।

सभी धर्मों की प्रकृति बड़ा और व्यापक है। विश्व के सभी धर्म वैश्विक सिद्धांतों से युक्त हैं। इसलिए धर्म में किसी दुरे, निर्दयी असीद्ध अथवा अनात्मिक सिद्धांतों के प्रचार द्वारा वे अनुष्ठीय की बरतना न स्वीकार नहीं कर सकते हैं। विश्व के इन सभी धर्मों का अन्तः-अन्तः कारण हुआ होना और उन धर्म के उन धर्मों में विश्वास उत्पन्न करने हुए, अनुष्ठीय और असीद्ध द्वारा प्रकृति की होती। फिर उन्होंने सभी सामाजिक मजदूर छोड़कर (धर्म की सामाजिक स्वतंत्रता के विषय में) समाज और असीद्धता को क्यों अपना लिया?

यह है 'धर्म और राज्य' के विश्व सम्बन्ध की उत्पत्ति की है उसका यह परिणाम है। धर्म और राज्य के बीच से सम्बन्धों की-ही एक ऐसी सृष्टि उत्पन्न हुई है जिसमें स्वतंत्रता नहीं है, बल्कि वो केवल यह होने के लिए है। यह विश्व सृष्टि का नाम है 'इन्क्यूबेटर' स्थापित धर्मों। धर्म के धर्मों में ही यह सभी धर्मों के लिए अवस्थित है। इसका ही नहीं बल्कि जाने बजाकर सभी धर्मों को यह बड़ा ही कर देता है।

लेन में 'अन्वेषण-प्रश्नोत्तर' (Inquisition) उन धर्मों के कारण धर्म नहीं हुआ जिसे लोगों ने धर्म के स्वीकार किया था। परन्तु 'धर्म और राज्य' द्वारा उत्पन्न हुई सम्बन्ध सृष्टि के कारण। इसी वैश्व सृष्टि के कारण स्मिथफील्ड (Smith field) में लोग अन्तर्गत धर्म, और धर्म में इन्क्यूबेटर में ही विश्व धर्म की पुनर्स्थापित के कारण धर्म के निवासियों के बीच विरोध और अन्तर्गत का बीच-बीच हुआ तथा 'धर्म-प्रचारक-संस्था' के सदस्यों (Preachers) एवं धर्म मजदूरधर्मियों की इन्क्यूबेटर छोड़कर अमेरिका में प्रचार देना पड़ा।

असीद्ध किसी धर्म का धर्म नहीं है किन्तु यह धर्म द्वारा उत्पन्न सभी धर्मों का धर्म नहीं बरतता है। धर्म के कारण से धर्म का धर्म इसीलिए, धर्म के-ही ही धर्म प्रत्येक धर्म धर्म स्थापित

नहीं पड़ता, क्योंकि उपासना में उपासक और उपास्य का सम्बन्ध बसो दृढ़ता नहीं है।

फिर मानव-आत्मा और उसके निर्माता के बीच में मानेवाला कोई रीत हाता है? पाहे वह राजा हो धर्माध्यक्ष हो अथवा संघर्ष हो उपासक और उपास्य के बीच में दखल देने का उसे कोई अधिकार नहीं है। उससे अपना-अपना कार्य करना चाहिए। यदि किसी व्यक्ति का विश्वास दूसरे व्यक्ति के विश्वास से भिन्न है तो वह इस बात का प्रमाण है कि वह दूसरा व्यक्ति उसमें विश्वास नहीं करता जिसमें पहला व्यक्ति विश्वास करता है। दोनों में से कौन ठीक है और कौन गलत यह तय करना संसार में किसी के बस की बात नहीं है।

यदि प्रत्येक व्यक्ति से अपने धर्म मत की परीक्षा करने को कहा जाय तो कोई भी धर्म बुरा न सिद्ध होगा। किन्तु, यदि उनसे एक दूसरे के धर्म-मतों की परीक्षा करने को कहा जाय तो विश्व में कोई भी धर्म शोष रहित न बनेगा। इसलिये जहाँ तक धर्म की विभिन्न संज्ञाओं का प्रश्न है या तो सारा संसार ठीक है या सारा का सारा गलत।

इसके अतिरिक्त कि धर्म की कई संज्ञाएँ हैं और तार्कसीरिक मानव-विकास से सब-उपास्य ईश्वर की ओर दृष्टि रखते हैं इसके माध्यम से मनुष्य अपने भाव-आप्य को अपने निर्माता तक पहुँचाता है। यद्यपि व्यक्ति भेद से इन अप्यों में अन्तर सम्भव है किन्तु ईश्वर प्रत्येक मानव का कृतज्ञतापूर्ण अर्घ्य स्वीकार करता है।

दरहम (Durham) या विन्चेस्टर (Winchester) के वासी अथवा प्रधान धर्माध्यक्ष का यदि कोई वस्तु (जैसे पैरू घड़र आदि) सम्पन्न की जाय तो वे उसे स्वीकार कर लेंगे किन्तु वे ही व्यक्ति अपने निर्माता को आज्ञा नहीं देते कि वह मनुष्यों की विभिन्न उपासना की मेट-स्वीकार कर सकें।

डॉ. महोदय ने अपनी पुस्तक में बार-बार 'धर्म और 'राज्य' (church and state) की चर्चा की है। उनका अभिप्राय धर्म विशेष अथवा 'राज्य' विशेष से नहीं है बल्कि किसी भी धर्म और किसी भी राज्य का है। प्रत्येक देश में 'धर्म और राज्य' को निरंतर एक साथ रखने के राजनीतिक सिद्धान्त को

फ़ास की 'राष्ट्रीय सभा'

द्वारा

मनुष्य और नागरिक के अधिकारों की घोषणा

यह विचार करके कि मानव अधिकारों के प्रति हुआ अज्ञान बचवा महानता सामाजिक व्यक्तियों और सरकार के प्रयासों का एक मात्र कारण है, नाइ की सतता के प्रतिनिधियों ने 'उपम्य कक्षा' के रूप में बहुसं-
 पूर्ण बोधला-मर के द्वारा समुप्य के इन प्राकृतिक अधिकार तथा व्यक्ति-
 अधिकारों को प्रगट करने का निश्चय किया। इन प्रतिनिधियों ने यह घोषा
 कि यह बोधला सम्येक सामाजिक संस्था के तत्त्वों के अस्तित्व में विरुद्ध
 नहीं छोड़ी जिसके कारण वे अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति सर्व-
 मानक रहेंगे। सरकार की 'विवाहिनी शक्ति' (Legislative power)
 और कार्यवाहक-शक्ति (executive power) के कर्मों का अनेकानुस
 अधिक बाधर होना। क्योंकि उनके कार्य इस बोधला द्वारा निर्दिष्ट पत्राधिक
 संस्थाओं के अस्तित्व के अनुसार ही होंगे। इन कारण और निदिवाह सिद्धान्तों
 द्वारा परिचित होने के कारण नागरिकों के भावी राई सर्व-संविधान और
 नागरिक तत्त्व का निर्वाह कर लेंगे।

इन कार्यों के अंगीकृत करने के ईश्वर की साक्षी रख कर तथा अपने आधीन-
बाद की आशा करते हुए, मनुष्यों और नागरिकों के निम्नलिखित पवित्र अधिकारों को स्वीकार किया और प्रतिबद्ध हो गए हैं :

१. वहाँ तक अभिजातों का प्रान है। सभी मनुष्य स्वयंज और ब्रह्म
 वैदा होते हैं। तथा अभिजातों में भी ब्रह्म वैदा होते रहेंगे। इसलिये केवल सारं
 अनिक प्रबोधिना के आचार पर लौकिक और अमर है।

१. अनुपपन्न के प्राकृतिक और अधिष्ठित विकारों को अनुपपन्न रचना शरीर प्राकृतिक संस्थाओं का सद्व्यवहार है और वे विकार हैं—स्वतंत्रता सम्पत्ति सुरक्षा और अत्याचार का विरोध करना ।

ममता और दयालुता को पुनः प्राप्त कर लेगा। अमेरिका में प्रत्येक कैथोलिक पुरोहित एक सुनागरिक विष्ट व्यक्ति तथा सम्य पढ़ोसी होता है। 'एपिस्कोपल' पुरोहित भी इसी प्रकार एक सुनागरिक सम्य व्यक्ति और मत्ता पढ़ोसी होता है। इसका कारण है कि अमेरिका में शासन द्वारा धर्म की स्थापना नहीं है और सभी व्यक्ति धर्म के विषय में पूर्ण स्वतंत्र हैं।

यदि लौकिक दृष्टि से इस पर विचार करें तो हमें यह ज्ञात होगा कि राज्यों के विकास पर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है। धर्म और राज्य के गठबन्धन ने स्टेन को निधन बना दिया। नैन्टे (Nantes) की राज घोषणा को रद्द कर देने के कारण रेडमी बच्चों के कारीगर फ्रांस छोड़कर इंग्लैण्ड चले गये। इस समय धर्म और राज्य के कारण सूखी बच्चों ने कारीगर इंग्लैण्ड से अमेरिका और फ्रांस भाग रहे हैं।

हम 'बर्क' को 'धर्म और राज्य' के राजनीति-विरोधी विद्वानों का प्रचार करने दें इससे कुछ लाभ ही होगा। फ्रांस की राष्ट्रीय-सभा उनके कथनानुसार काम नहीं करेगी वरन् उनकी मूर्खता से लाभ उठावेगी। इसी तरह में इसके कुरिण्डों को देखने के कारण ही अमेरिका इससे प्रति सज्जम रहा और फ्रांस में उन कुरिण्डों का अनुसरण करने के नाते उसकी 'राष्ट्रीय सभा' न इस 'धर्म और राज्य' के गठबन्धन को गूँथ करके अमेरिका की तरह अन्तःकरण का सापेक्षीक अधिकार एवं नागरिकता के सार्वभौम अधिकार की स्थापना की है।

इस प्रकार 'धर्म और राज्य' के इस पदार्थ का भग्न होकर रहने हुए प्रांत की 'राष्ट्रीय सभा' ने अग्य सरकारों के समान प्रतिक्रियात्मक घोषणा न करके सबप्रथम मनुष्य के अधिकारों की घोषणा की जिसके आधार पर प्रांत का संविधान बना।

सांभलित किये गये कानून के द्वारा ही किसी मनुष्य को दण्ड मिलना चाहिए ।

८. यदि किसी व्यक्ति को नगरपाली अनिवार्य हो तो अपराध प्रभावित होने तक नियंत्रण माने जाने के कारण कानून उसके प्रति ऐसी कोई प्रत्येकता न प्रदर्शित करे, जो उसे नगरपाली रखने के लिए आवश्यक न हो ।

९. यदि किसी व्यक्ति के मर्तों के कारण कानून द्वारा स्थापित जन-अपराध को कोई बाधा अवस्थित नहीं होती तो उसके उन मर्तों के कारण बाधे से शक्तिहीन ही नहीं बल्कि उसे छूटाना नहीं चाहिए ।

११. विधायी और मर्तों की अनिवार्यता अनिवार्यता मनुष्य के सार्वजनिक बहुवृत्त अधिकारों में से एक है । इसीलिए कानून द्वारा पूर्व-निर्धारित स्थितियों में अपनी स्वतन्त्रता के दुरुपयोग का उत्तरदायित्व वहन करने पर, प्रत्येक नागरिक, स्वतन्त्रतापूर्वक कुछ भी सोच सकता है, निष्क संकटा है तथा सक्रियता कर सकता है ।

१२. मनुष्यों और नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए एक सार्वजनिक शक्ति की आवश्यकता है । समाज के हित के लिए, उस शक्ति को (एक संस्था के रूप में) स्थापित किया जाता है, न कि उन व्यक्तियों के साथ है लिए जिन्हें वह शक्ति दीयी जाती है ।

१३. उस-शक्ति का आच्छादन करने एवं सरकार के अन्य व्यक्तियों की पुष्टि के लिए 'सार्वजनिक बर्च-दान' आवश्यक है । अतः समाज के सदस्यों में उनके सामर्थ्य के अनुसार, उनका समाज नियंत्रण होना चाहिए ।

१४. प्रत्येक नागरिक की स्वतन्त्रता अपने प्रतिनिधि के माध्यम से सार्वजनिक बर्च-दानों की आवश्यकता उनके विविधता उनके शक्ति, निर्धारण-प्रवृत्ति तथा अवधि आदि का नियंत्रण करने में स्वतन्त्रता प्राप्त करके या अधिकार है ।

१५. प्रत्येक मनुष्य-समुदाय को अपने सभी प्रतिनिधियों से उनके कर्तव्यों के बारे में जानकारी प्राप्त करने या अधिकार है ।

१६. जिस समाज में अधिकार-सार्वजनिक और अधिकार-सुरक्षा की व्यवस्था नहीं है वही शक्ति का अभाव है ।

१७. सार्वजनिक अधिकार मनुष्य के सामर्थ्य एवं नैतिक अधिकार है, इसीलिए कानून द्वारा नियंत्रित एवं स्पष्ट सार्वजनिक आवश्यकता की स्थितियों के अतिरिक्त तथा वही की शक्ति शक्ति-पुष्टि की शक्त के बिना किसी भी शक्ति को इन अधिकारों से संबंधित नहीं किया जाना चाहिए ।

१. राष्ट्र तत्त्वतः समस्त प्रभुसत्ताओं का भूत है। किसी व्यक्ति अपना किसी संस्था को ऐसे किसी प्रभुत्व का अधिकार न होना जो उसे स्पष्टरूपेण राष्ट्र से प्राप्त नहीं हुआ है।

४. राजनैतिक स्वतंत्रता का अर्थ है उन कार्यों को करने का अधिकार जो दूसरों को दाँत नहीं पहुँचाते। प्रत्येक व्यक्ति अपने प्राकृतिक अधिकारों का प्रयोग उन संवत्स परिधीमाओं तक कर सकता है जो अन्य प्रत्येक व्यक्ति के तात्त्विक अधिकारों के स्वतन्त्र प्रयोग की सुरक्षा के लिए आवश्यक हैं, और इन सीमाओं का निर्धारण केवल कानून द्वारा होना चाहिए।

५. कानून केवल उन कार्यों का नियंत्रण करे, जो समाज के लिए अहितकर हों। जो कानून द्वारा निषिद्ध न हो उसे बाधित नहीं करना चाहिए और न ही किसी व्यक्ति को वह काम करने के लिए विवश किया जाय, जिसे कानून नहीं चाहता है।

६. कानून समाज की इच्छा की अभिव्यक्ति है। कानून बनाने में प्रत्येक नागरिक को व्यक्तिगत रूप से अथवा प्रतिनिधि के माध्यम से योग देने का अधिकार है। कानून सब के लिए एक होना चाहिए चाहे वह रसा कर या दण्ड दे। कानून की दृष्टि में सभी लोग समान हैं। अतः कुछ तथा दोष्यता-अन्य भेदों के अतिरिक्त अन्य किसी भेद के बिना अपनी विभिन्न क्षमताओं के अनुसार सभी व्यक्ति सभी प्रतिष्ठाओं परों और जायों के लिए समान रूप से जुटनेवाले योग्य हैं।

७. कानून द्वारा पूर्व-निर्धारित स्थितियों और निश्चित की गयी रीतियों के अतिरिक्त कोई व्यक्ति न अपराधी माना जाय न गिरफ्तार किया जाय और न नजरबन्द किया जाय। उन सभी लोगों को दण्ड मिलना चाहिए जो स्वच्छन्द आत्माओं को प्रोत्साहन देते हैं उन्हें पुरा करने का प्रयत्न करते हैं, उन्हा निष्ठादम करते हैं अथवा निष्ठादम करने की प्रेरणा देते हैं। यदि किसी नागरिक को कानून द्वारा न्यायानुसार में बुसाया जाता है अथवा उसे पकड़ा जाता है तो कानून के आदेश का पालन करना उसका कर्तव्य होना चाहिए और यदि कोई नागरिक ऐसे अवसर पर कानून का विरोध करता है तो वह अपने को इस कार्य द्वारा दोषी ठहराता है।

८. सर्वथा निताम्न आवश्यक दण्डों के अतिरिक्त कानून को किसी अन्य दण्ड का विधान न करना चाहिए। अपराध के पूर्व घोषित तथा नियमानुसार

कारणों से लेकर अन्त तक के सभी अनुष्ठीयों में साफ- सफ़ाई सिद्धान्तों का अन्तर्गत है जो प्रथम प्यारह अनुष्ठीयों में व्यक्त है। किन्तु अब समय आकर अनुष्ठित को विद्याकर उचित को स्थापित करने की ऐसी विशेष परिस्थिति में आ कि अन्य अनुष्ठित में अतिना आवश्यक का अन्तर्गत कहीं अधिक आवश्यक माना इसके लिए उचित ही था।

अब अधिकारों के बोधलाभ को 'उद्दीप्तता' के समुत्पन्न प्रत्युत किया गया, तो उसके कुछ अर्थों में के किसीने कहा कि यदि अधिकारों की बोधला प्रकटित की गयी तो साथ ही कर्तव्यों की बोधला भी होती चाहिए। इसमें शक नहीं कि जिस अर्थपर यह कह चुके अर्थपर हुई यह एक विचारणीय अर्थपर कहा हुआ किन्तु इसमें भी शक नहीं है कि अन्तर्गत तब तक न सोचने की शक्ति थी। वास्तव में अधिकारों की बोधला में कर्तव्यों की बोधला का अर्थ निहित है। अर्थ के अन्त में अन्त को अधिकार है, यही अन्त का भी और इसीलिए अन्त अधिकार को अन्तर्गत और अन्तों के लिए स्वीकार करना इस में है अन्तर्गत का अर्थ ही होता है।

अन्तर्गत तीन अनुष्ठित अर्थपर अन्तर्गत उद्दीप्त स्वतन्त्रता के आधार है। जिस देश की सरकार अन्त अनुष्ठितों में अन्त सिद्धान्तों के आधार पर अन्त स्थापित होती और अन्त अधिकार बनाये नहीं रखती यह देश स्वतन्त्र नहीं कहा जा सकता। विरुद्ध के लिए 'अधिकारों की बोधला' का विवरण अन्त तक अन्त हुए सभी विचारों और अन्तर्गतों की अन्तर्गत अधिकार प्रत्युत है, और अन्तर्गत अन्त विरुद्ध का अन्तर्गत अधिकार ही होता है।

अधिकारों की बोधला के अन्तर्गत अन्त एक ऐसे राष्ट्र का अन्त एवं अन्त स्वतन्त्र है, जो अन्तर्गत निर्वाता (राष्ट्र) के अन्तर्गत में एक सरकार की अन्तर्गत का अन्त अन्तर्गत कर रहा है। यह अन्त अन्तर्गत नहीं है और अन्तर्गत के निर्वाता की अन्तर्गत यह अन्तर्गत अन्तर्गत है कि अन्तर्गत लिए 'अन्तर्गत' अन्त का अन्तर्गत अन्तर्गत है वास्तव में यह अन्तर्गत का अन्तर्गत है।

अन्तर्गत और अन्तर्गत के अन्तर्गत के अन्तर्गत अन्तर्गत की अन्तर्गत अन्तर्गत और अन्तर्गत है ? अन्तर्गत की सरकार ही अन्तर्गत है ? अन्तर्गत के निर्वाता यह नहीं अन्तर्गत कि यह देश एक अन्तर्गत है यही अन्तर्गत अन्तर्गत का अन्तर्गत अन्तर्गत है और अन्तर्गत अन्तर्गत के अन्तर्गत, अन्तर्गत अन्तर्गत का अन्तर्गत अन्तर्गत है ? अन्तर्गत

अधिकारों की घोषणा की समीक्षा

सामान्य रूप से प्रथम तीन अनुच्छेदों में अधिकारों की सम्पूर्ण घोषणा समाविष्ट है। बाद के सभी अनुच्छेद या तो उन्हीं से उत्पन्न हुए हैं अथवा उनकी व्याख्याएँ हैं। पहले दूसरे और तीसरे अनुच्छेदों में जो सामान्य रूप में कहा गया है सोवे पाँचवें और छठे अनुच्छेदों में उन्हीं की विशेष व्याख्याएँ हैं।

सातवाँ आठवाँ नवाँ दसवाँ और ग्यारहवाँ अनुच्छेद उन सिद्धान्तों की घोषणा करते हैं जिनके आधार पर पूर्ण घोषित अधिकारों के अनु रूप, कानून बनाये जायेंगे। किन्तु यहाँ तथा भाग दोनों के कुछ भागों में व्यक्तियों द्वारा मत प्रत्यक्ष प्रकट जाता है कि क्या इससे अनुच्छेद से उस अधिकार की पर्याप्त सुरक्षा सम्भव है जिसके लिए उसका निर्माण हुआ है? यम को अनु रूप द्वारा निर्धारित कानूनों के आधीन रखकर यह अनुच्छेद उसकी अपूर्व दिव्यता उभरी थीन सैता है और अस्तित्व की प्रभावित करने वाली उसकी तात्त्विक को छीन बना देता है। ऐसी स्थिति में धर्म बाधनों के अवरोध में से प्राप्त होने वाले उस प्रदाय के समान अनु रूप के सम्मुख प्रस्तुत होता है जिसका उद्देश्य तो अनु रूप की इष्टि से ओम्मेन रहता है तथा जिसकी शुभित ररिक्तियों में अनु रूप को कुछ भी ऐसा दिखसाई नहीं पड़ता जिसका वह सम्मान कर सके। १

१—धार्मिक अवस्था कानून के इतिहास में यदि निम्नलिखित विचार सम्मुखीत प्रथम लिखा जाता है तो निम्नी व्यक्ति, व्यक्तियों की किसी संस्था का किसी सरकार के द्वारा धर्म के विषय में कृतज्ञता नहीं हो सकती। अनु रूप द्वारा स्थापित सरकारों के अस्तित्व के पूरु निरुध के आदि काल में अनु रूप की इस्तर के बीच एक समझौता रहा है। अपने निर्माण के प्रति अनु रूप के वैधानिक सम्बन्ध तथा स्थिति में मानवीय कानूनों अथवा मानवीय शक्ति के द्वारा कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। धार्मिक अवस्था और अनु रूप के बीच कुछ उदात्त समझौते का एक जोड़ा है इसलिए वह मानवीय कानूनों के आधीन नहीं रहा ग सकता। सभी कानून इस समझौते के अनु रूप होने चाहिए, न कि कानूनों के अनु रूप उस समझौते में परिवर्तन दिया जाय, क्योंकि कानून मानवीय होने के अनिवार्य, उस समझौते के उपरान्त ही अस्तित्व में आते हैं। मूल्य के प्रथम पक्ष में जो अवयव पक्षों का होता होगा और जो कानून वह अनु रूप दिया होगा कि कानून एवं जो कानून तथा कानून के लिए ही पक्षों और स्थिति-निराकार है तो कानून प्रथम क व धार्मिक निवेदन ही रहा होगा। अनु रूप के व्यक्ति को जो धार्मिक अवस्था तथा है कानून वह अवस्था बना रहना चाहिए। यदि सरकार इसमें किसी प्रकार के हस्तक्षेप करती है तो वह उसकी दुष्टता मान लेगी।

दुसर बार, वह बुद्धिमत्तापूर्ण योजना न होगी जो क्रियान्वित होने वाली नर
हिंदी देश की सरकार को एक नुर्खे के सिम्टे लीप है। बर्क ने अपने लिए जो
बाजार चुना है, वह उनके पक्ष के प्रत्येक बंध के लिए वातक निकला।

बानुबंदिष अधिकार से हटकर, अब बाय बा मरी बानुबंदिष बुद्धि पर।
प्रश्न है कि सर्वाधिक बुद्धिमान व्यक्ति कौन है? जब बर्क या तो यह सिद्ध करें
कि बानुबंदिष उत्तराधिकार की परम्परा में प्रत्येक राजा सलोमन (Solomon)
या बबसा सलोमन को बुद्धिमान राजा की संज्ञा देना प्रकृत नहीं है। बर्क
महोदय ने ऐसा विचित्र प्रहार किया कि राजाओं की सूची में कदाचित् ही कोई
मान रह गया हो। किन्तु बात हीछा है कि बर्क इस प्रकार के प्रत्युत्तर के प्रति
सम्मत थे क्योंकि इससे बचने के लिए उन्होंने सरकार को मानव-बुद्धि की अति
मूल्य योजना ही नहीं बरन् उसे बुद्धि का एकाधिकार भी कहा है। उनके मता
नुसार एक ओर नुर्खे का राष्ट्र है और दूसरी ओर बुद्धि की सरकार।
उत्तुष्टत बनका महना है कि ननुष्यों का वह अधिकार है कि इस बुद्धि के द्वारा
उनके अनाथों की व्यवस्था हो।

इतना स्पष्ट कर लेने के बाद, बर्क यह समझते हैं कि ननुष्यों के अभाव
क्या है और उनके अधिकार क्या है?

अपने इस प्रश्न में उन्हें कदाचित् संकलता मिली। सर्वप्रथम उन्होंने इसकी
संलग्नता के रूप में ननुष्यों के अनाथों की बुद्धि का अभाव बताया और फिर
वह समझा कि उन्हें बुद्धि ना नहीं बरन् बर्क के द्वारा प्राप्त होने का अधिकार
है। इन ननुष्यों के प्रतिपक्षों में बुद्धि के एक एकाधिकार-दायक के प्रति
आदर का विभिन्न माय उत्पन्न करने के लिए ऐसा उन्हें यह अवसर के लिए कि
इन राजन में सम्भव-असम्भव समझ-सही सभी प्रकार के कर्मों को निष्पादित
करने का महान साधन है बर्क महोदय निम्नलिखित रूप से उसकी शक्तियों का
वर्णन करते हैं।

'सरकार में ननुष्य के अधिकार उनकी सुविधाएँ हैं, और वे प्रायः अल्पांशों
संग्रह के रूप में मिलती हैं, कभी-कभी वे अल्पांश और बुद्धि के सम्मिलित के
रूप में प्राप्त होती हैं और कभी-कभी वे बुद्धि के बीच स्थापित सम्मिलित
के रूप में होती हैं। सर्वाधिक बुद्धि एक अभावपूर्ण सिद्धांत है जो
कानूनी शक्ति प्रदर्शनों को अभावपूर्ण या अतिरिक्त के अनुसार नहीं

यदि वहाँ फ्रांस की प्रीति की निम्दा की जाती है तो कोई आश्चर्य नहीं है।

यदि फ्रांस की प्रीति केवल दुष्ट निरंकुश शासन के विनाश तक ही सीमित होती तो बक और उन्हीं के समान अन्य सज्जन कदापि मोन रह गये होते। उनका कहना है कि यह प्रीति बहुत दूर पनी गयी अर्थात् उनके लिए बहुत दूर तक पनी पयी क्योंकि यह प्रीति भ्रष्टाचार का महान शत्रु है और वे सभी लोग, जिन्हें पन द्वारा क्रय किया जा सकता है भयभीत हो उठे हैं। उनके शोध में उनका डर स्पष्ट है। उठा है और वे अपनी बिनाश दुष्टता की वेदना प्रकट कर रहे हैं।

किन्तु इस प्रकार के विरोधों से क्षतिग्रस्त होने के स्थान पर फ्रांस की प्रीति को अभिमानजन प्राप्त होता है। इस पर जितना प्रहार होगा उतना ही इसका निसार होगा। किन्तु डर है कि इस पर कहीं अति प्रहार न हो। इसे प्रहारों से डरने की आवश्यकता नहीं है। शायद वे इसे स्थायित्व प्रदान किया है। समय स्वयं इसका प्रमाण देगा।

इस प्रकार, आरम्भ से लेकर बैसिल (Bastille) पर कब्जा करने की घटना तक मुख्य-मुख्य स्थितियों के माध्यम से फ्रांस की प्रीति-विषयक प्रवृत्ति और अधिकारों की घोषणा द्वारा इसकी स्थापना की चर्चा करने के बाद मै एम० डेलेफायेट (M Delafayette) के निम्नांकित गद्य उद्गार का उत्सर्ग करते हुए इस विषय को समाप्त करेंगे। 'एकत्रयता का यह महान स्मारक अत्याचारियों को शिरा दे और पीड़ितों के लिए आदर्श बने।

आनुवंशिक सरकार

आनुवंशिक अधिकार और आनुवंशिक उत्तराधिकार का जो समर्पण बक ने किया है तथा उन्होंने जो यह कहा है कि राष्ट्र की अपनी सरकार बनाने का कोई अधिकार नहीं है उसे उनका प्रमाण नहीं तो और क्या रहा पाय। किन्तु इसके अतिरिक्त संयोगवशात् उन्होंने सरकार की परिभाषा भी प्रस्तुत की है जो ध्यान देने योग्य है। उनका कहना है 'अच्छा मानव-बुद्धि की आविष्कृत योजना है।

सरकार मानव-बुद्धि की आविष्कृत योजना है इसे मान लेने पर यह भी मानना होगा कि आनुवंशिक उत्तराधिकार और आनुवंशिक अधिकार का इससे कोई सम्बन्ध नहीं है क्योंकि बुद्धि को आनुवंशिक समाना असम्भव है।

प्रतीत होता है। फिर भी यदि लोग राजनीत्यानुबंधक इस पर पुनर्विचार करें, और कुछ दूर तक विचार करें, अवश्य अपने नहीं बरन् अपनी कन्वैन्शनों के इतिहास से विचार करें, तो उन्हें यह स्पष्ट भाव होगा कि आनुवंशिक अधिकार मनुष्य उसी प्रकार का स्वेच्छाधार है जितने उन्होंने अपने लिए आसीनकार किया है। राष्ट्र द्वारा वंश विशेष को आनुवंशिक उत्तराधिकार अहित स्थापित करने का जब हुआ जाही पीढ़ियों की स्वीकृति का विरोध; और स्वीकृति का निरोध स्वेच्छाधार है।

यदि एक व्यक्ति को किसी समय सरकार का अधिकारि होना बचना उसका उत्तराधिकारी एक राष्ट्र से बड़ेवा कि आपकी कसौटी करके देने यह अधिकार प्राप्त किया है उस लोग यह न समझ पायेंगे कि यह किस अधिकार पर ऐसा करता है। एक व्यक्ति का यह अनुभव कि वह अपने पूर्वजों द्वारा वंश दिया गया है। उसका के सम्बन्ध में वह उस व्यक्ति के लिए संतोष्य नहीं, बरन् कर्तव्य होता है। जो किसी कार्य के शेष की बुद्धि करता है, उसीके द्वारा उस कार्य की संपत्ति नहीं किन्तु की जा सकती है। अतः आनुवंशिक उत्तराधिकार की वंश स्थापना नहीं हो सकती।

इस विषय का अवैतानिक अधिक स्पष्ट निर्णय करने के लिए हमें जाही पीढ़ियों के अतिरिक्त स्वतन्त्र रूप से उस पीढ़ी पर अहित विचार करना होगा जो एक वंश को आनुवंशिक अधिकारों अहित स्थापित करने का मार्ग करती है; और अनुवासी पीढ़ियों के प्रति उस प्रथम पीढ़ी का जो व्यवहार है उत्तर की विचार करना आवश्यक है।

यह पीढ़ी सर्वप्रथम एक व्यक्ति की पुत्री है और उसे राजा की पत्नी का मध्य कोई नाम देकर सरकार के धीरे-स्वाम्य पर रखती है, यह व्यक्ति चाहे बुद्धिमत् हो सकता मुक्त है। यह पीढ़ी अपने इच्छानुसार तथा अपनी स्वतन्त्रता के साथ अपने लिए ऐसा करती है। किन्तु यह व्यक्ति को राजा के घर पर निरुद्ध किया जाता है आनुवंशिक नहीं होता बरन् यह बना जाता है और उत्तराधिकार बन पर पर रखा जाता है। जो पीढ़ी उसे उस घर पर रखती है, वह किसी आनुवंशिक सरकार के द्वारा नहीं बरन् अपने इच्छानुसार स्थापित सरकार के द्वारा अहित होती है। यदि उस घर पर निरुद्ध किया गया यह व्यक्ति और अपने निरुद्ध करने वाली पीढ़ी का जीवन धारण हीना तो आनुवंशिक उत्तराधिकार

वरन् भीति के अनुसार, जोड़ता-पटाता है तथा गुणित एवं विभाजित करता है।

बर्क के आदर्शपूर्ण-व्यक्ति पाठक उनके उपर्युक्त विद्वत्तापूर्ण अर्थ-हीन बयान को समझने में असमर्थ होंगे। अस्तु मैं उनके कथन की व्याख्या का काम स्वीकार करूँगा।

बर्क के उपर्युक्त कथन का सारांश यह है कि सरकार किसी भी सिद्धांत द्वारा शासित नहीं होती। अपने इच्छानुसार वह कुराई को अच्छाई और अच्छाई को कुराई बना सकती है। संक्षेप में यह कह लीजिए कि सरकार एक स्वच्छन्द शक्ति है।

किन्तु कुछ बातों को बर्क महोदय भूल गये। पहली बात यह है कि उन्होंने यह नहीं बताया कि बुद्धि का उद्भव कहाँ से हुआ है और दूसरी बात यह है कि किस अधिकार के तहत वह उस बुद्धि से अपना कार्य आरम्भ किया। बर्क ने जिस प्रकार से विषय का प्रतिपादन किया है, उससे तो यही स्पष्ट होता है कि या तो सरकार बुद्धि को छीन लेती है अथवा बुद्धि सरकार को छीन लेती है। इस सरकार का कोई मूल्य नहीं है और इसकी शक्ति अधिकार-हीन है। संक्षेप में बर्क के अनुसार यह सिद्ध हुआ कि सरकार दूसरों की सम्पत्ति का अपहरण मात्र है।

किन्तु इस विषय का स्पष्टतर बोध कराने के लिए यह आवश्यक है कि हमें उन प्रतिपक्ष तीर्थकों में किमत दिया जाए जिनके अन्तर्गत एक राष्ट्र की आनुवंशिक गढ़ी या अधिक उपयुक्त रूप से यों कहिए कि सरकार-विषय आनुवंशिक उत्तराधिकार पर विचार करना चाहिए। वे विभाग इस प्रकार हैं—

१—बंस विरोध का स्वयं अपनी स्थापना करने का अधिकार।

२—राष्ट्र का बंस विरोध की स्थापना करने का अधिकार।

जहाँ तक पहले तीर्थक का प्रश्न है—अर्थात् राष्ट्र की स्वीकृति के बिना एक बंस का स्वयं अपने आनुवंशिक अधिकार की स्थापना करने का जहाँ तक प्रश्न है सभी समुच्च एक स्तर से इसे स्वेच्छाचार कहेंगे और इसका अधिकार सिद्ध करने का प्रयत्न उस सभी समुच्चों की बुद्धि का अतिव्यवहार होगा।

किन्तु दूसरा तीर्थक अर्थात् एक राष्ट्र का बंस विरोध को आनुवंशिक अधिकारों सहित स्थापित करने का अधिकार, प्रथम विचार में स्वेच्छाचार नहीं

जाति होता। फिर भी यदि लोच यन्त्रीरक्षणपूर्वक इस पर पुनर्विचार करें, और कुछ दूर तक विचार करें अवश्य अपने नहीं बरन् अपनी सम्प्रतिष्ठों के हितको के विचार करें तो उन्हें यह स्पष्ट बात होगी कि आनुवंशिक अधिकार अन्तः प्रती प्रकार का स्वेच्छाचार है जिसे उन्होंने अपने लिए बख्शीकार दिया। राष्ट्र द्वारा वंश विशेष को आनुवंशिक उत्तराधिकार सहित स्थापित करने का कार्य हुआ बाकी पीढ़ियों की स्वीकृति का विरोध; और स्वीकृति का विरोध स्वेच्छाचार है।

यह एक व्यक्ति, जो किसी समय सरकार का अधिकारी होता अपना उत्तराधिकारी एक राष्ट्र से कहें कि आपकी अपेक्षा करके मैंने यह अधिकार प्राप्त किया है अब सोच यह न समझ पायेंगे कि यह किस अधिकार पर ऐसा कहता है। एक व्यक्ति या यह अनुभव कि यह अपने पूर्वजों द्वारा वंश दिया गया है, राष्ट्र के सम्मेलन में यह उस व्यक्ति के लिए संतोषदा नहीं बरन् उत्तेजक होता। जो किसी कार्य के रोच की वृद्धि करता है, प्रतीके द्वारा उस कार्य की वैधता नहीं सिद्ध की जा सकती। अतः आनुवंशिक उत्तराधिकार की वैध स्थापना नहीं हो सकती।

इस विषय का अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट निर्णय करने के लिए हमें बाकी पीढ़ियों के अतिरिक्त स्वतन्त्र रूप से यह पीढ़ी पर अधिक विचार करना होगा जो एक वंश को आनुवंशिक अधिकारों सहित स्थापित करने का कार्य करती है और अनुवादी पीढ़ियों के प्रति उन प्रथम पीढ़ी का जो व्यवहार है उसपर भी विचार करना आवश्यक है।

यह पीढ़ी सर्वप्रथम एक व्यक्ति को चुनती है और उसे राजा की दहरी का अन्य कोई नाम देकर सरकार के शीर्ष-स्वायत्त पर रखती है वह व्यक्ति चाहे बुद्धिमान हो अथवा भूख। यह पीढ़ी अपने हितानुसार तथा अपनी स्वतन्त्रता के साथ करने लिए ऐसा करती है। किन्तु वह व्यक्ति को राजा के घर पर नियुक्त किया जाता है आनुवंशिक नहीं होता बरन् वह चुना जाता है और उत्तरदायक बन कर रहना पड़ता है। जो पीढ़ी उसे उस घर पर रखती है वह किसी आनुवंशिक सरकार के द्वारा नहीं बरन् अपने हितानुसार स्थापित सरकार के द्वारा चयनित होती है। यदि उस घर पर नियुक्त किया गया वह व्यक्ति और उसे नियुक्त करने वाली पीढ़ी का जीवन धारण होता तो आनुवंशिक उत्तराधिकार

वरन् पीति के अनुसार, जोड़ता पटाता है तथा गुणित एवं विभाजित करता है ।'

बर्क के आदर्श-व्यक्ति पाठक उनके उपर्युक्त बिज्ञतापूर्ण धर्म-हीन कथन को समझने में असमर्थ होंगे । अस्तु, मैं उनके कथन की व्याख्या का काम स्वीकार करूँगा ।

बर्क के उपर्युक्त कथन का सारांश यह है कि सरकार किसी भी सिद्धांत द्वारा शासित नहीं होती । अपने इच्छानुसार वह कुराई को अच्छाई और अच्छाई को कुराई बना सकती है । संक्षेप में यह कह लीजिए कि सरकार एक स्वच्छन्द शक्ति है ।

किन्तु कुछ बातों को बर्क महोदय भूल गये । पहली बात यह है कि उन्होंने यह नहीं बताया कि बुद्धि का उद्भव कहाँ से हुआ है और दूसरी बात यह है कि किस अधिकार के तहत उस बुद्धि ने अपना कार्य आरम्भ किया । बर्क ने जिस प्रकार से विषय का प्रतिपादन किया है, उससे तो यही स्पष्ट होता है कि या तो सरकार बुद्धि को छीन लेती है अपना बुद्धि सरकार को छीन लेती है । इस सरकार का कोई भ्रम नहीं है और इसकी शक्ति अधिकार-हीन है । संक्षेप में बर्क के अनुसार यह सिद्ध हुआ कि सरकार दूसरों की सम्पत्ति का अपहरण मान है ।

किन्तु इस विषय का स्पष्टतर बोध कराने के लिए वह आवश्यक है कि इसे उन कतिपय धीरे-धीरे में विभक्त किया जाय जिनके अन्तर्गत एक राष्ट्र की आनुवंशिक गरी या अधिप उपर्युक्त रूप से यों कहिए कि सरकार-विषयक आनुवंशिक उत्तराधिकार पर विचार करना चाहिए । वे विभाग इस प्रकार हैं—

१—बंद विरोध का स्वयं अपनी स्थापना करने का अधिकार ।

२—राष्ट्र का बंद विरोध की स्थापना करने का अधिकार ।

जहाँ तक पहले धीरे-धीरे का प्रश्न है—अर्थात् राष्ट्र की स्वीकृति के बिना एक बंद का स्वयं अपने आनुवंशिक अधिकार की स्थापना करने का जहाँ तक प्रश्न है सभी मनुष्य एक स्वर से इसे स्वेच्छाचार कहेंगे और इसका अधिकार सिद्ध करने का प्रयत्न उन सभी मनुष्यों की बुद्धि का अतिप्रयत्न होगा ।

विन्तु दूसरा धीरे-धीरे अर्थात् एक राष्ट्र का बंद विरोध को आनुवंशिक अधिकारों सहित स्थापित करने का अधिकार, प्रथम विचार में स्वेच्छाचार गरी

ने सभी आनुवंशिक सरकार नुर्बतानुर्ब ही प्रकट होती है। 'ज' को वह सरकार नहीं हो सकता कि वह 'ज' की सम्पत्ति लेकर अपनी इच्छा से उसे 'द' को सौंप दे। फिर भी आनुवंशिक उत्तराधिकार इसी सिद्धान्त पर काम-चला होता माना है।

फिजी एक पीढ़ी ने अन्य अनुयायी पीढ़ियों के अधिकारों को छीन कर उन्हें एक अन्य व्यक्ति को दिया जो बाद में उन अनुयायी पीढ़ियों से वर्क की जाया में कह सकता है कि आप लोगों का कोई अधिकार नहीं है, आपके अधिकार मुझे सौंप दिये गये हैं और मैं आप लोगों की परीक्षा करते हुए वास्तव करूँगा। इस प्रकार के सिद्धान्तों और ऐसी अज्ञानता से ईश्वर विस्म की रक्षा करे।

[निष्कर्ष]

ज्ञान और अज्ञान को परस्पर विरोधी तथा बालक-संसार का प्रभावित करने है। यदि किसी देश में हम को भी से किसी एक की बुद्धि हो जाय तो शासन-तन्त्र का परिवर्तन निश्चित नुसार कर ले होता है। ज्ञान अपना मार्ग स्वयं ढूँढ़ लेता है और अज्ञान वह तम स्वीकार कर लेता है, जो उसे आदेश के रूप में प्राप्त होता है।

संसार में दो प्रकार की सरकारें हैं एक निर्वाचन और प्रतिनिधित्व द्वारा स्थापित सरकार, और दूसरी आनुवंशिक अधिकार पर स्थापित सरकार। पहले प्रकार को हम जन-तन्त्र (Republic) कहते हैं और दूसरे को राज-तन्त्र कहना बुनीन-तन्त्र (Aristocracy)।

सरकार के उत्पन्न लोगों बिना और वास्तव विरोधी स्वयं ज्ञान और अज्ञान के दो पक्ष और परस्पर विरोधी भावों पर विभक्त होते हैं। यह विविध है कि सरकारी कार्यों के लिए बुद्धि और योग्यताओं की आवश्यकता है किन्तु बुद्धि और योग्यताएँ आनुवंशिक नहीं होती हैं। इसलिए यह स्पष्ट है कि आनुवंशिक उत्तराधिकार अनुप्य से एक ऐसे विरासत की कल्पना रखता है जिसे हम स्वीकार नहीं कर सकती और जो केवल अज्ञान के आधार पर स्थापित हो सकता है। यही कारण है कि किसी देश में अज्ञान का प्रभाव

फी बात न उठती। अस्तु, यह निर्विवाद है कि प्रथम पक्षों की मृत्यु के उपरान्त ही आनुवंशिक उत्तराधिकार का प्रश्न उपस्थित हो सकता है।

धुंकि जहाँ तक प्रथम पीढ़ी का सम्बन्ध है, आनुवंशिक उत्तराधिकार का प्रश्न उठता ही नहीं। इसलिये दूसरी तथा अन्य सभी अनुगामी पीढ़ियों के प्रति इस प्रथम पीढ़ी के व्यवहार पर हमें विचार करना है।

पहली पीढ़ी अन्य अनुगामी पीढ़ियों के प्रति जिस प्रकार का व्यवहार करती है वैसे करने का उसे अधिकार नहीं है। विधान बनाने के लिये वह वसीयत लिखने सक्ती है और वसीयत के रूप में भावी पीढ़ियों को एक सरकार सौंप देने का प्रयत्न करती है। इसका ही नहीं बल्कि वह भावी पीढ़ियों पर एक ऐसी सरकार थोपने का प्रयत्न करती है जो उस सरकार से सर्वथा भिन्न और नवीन स्वरूप की है जिसके अन्तर्गत वह पीढ़ी स्वयं रही है।

जैसा कि कहा जा चुका है पहली पीढ़ी आनुवंशिक सरकार के अस्तित्व नहीं रही बल्कि उसने स्वयं अपनी सरकार स्थापित की। किन्तु वही पीढ़ी वसीयतनामे के माध्यम से जिसका उस अधिकार नहीं है अन्य अनुगामी पीढ़ियों के अपने लिए स्वतन्त्र क्सेण कार्य करने के अधिकार को छीनने का प्रयत्न करती है।

मनुष्य न सामाजिक अधिकारों को न तो योजनान्वित किया जा सकता है, न हस्तांतरित किया जा सकता है और न उनका सम्भ्रान्त ही किया जा सकता है। वे केवल परम्परागत होते हैं और उन्हें परंपरागत होने से सर्वदा के लिए अक्षय्य करना किसी पीढ़ी के लक्ष्य की बात नहीं है। यदि वर्तमान या अन्य कोई पीढ़ी वास्तव ही स्वीकार करती है तो इससे अनुगामी पीढ़ियों के स्वतंत्र होने का अधिकार कम नहीं होता। शक्तियों को बीच उत्तराधिकार नहीं प्राप्त हो सकता। जब भी बर्क यह सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं कि उन १६८८ ई की क्रांति के समय इंग्लिश राष्ट्र ने सर्वाधिक सम्भीरता से शायद अपने तथा अपने सभी उत्तराधिकारियों के अधिकारों का सर्वना के लिए त्याग कर दिया तो वह ऐसी भाषा का प्रयोग करते हैं जिसका उत्तर न देकर केवल जनरल व्यभिचरित सिद्धांतों का विरस्कार किया जा सकता है अथवा उनही अमानता पर कुछ प्रकट किया जा सकता है।

किसी भी रूप से विचार किया जाय किन्तु अन्य पीढ़ी की इच्छा से उत्पन्न

नाश पड़ती ही नहीं। इसके बाद उत्तरदायित्व आता है मंत्री पर, जो तत्पर है उस बहुमत की धारण करता है जिसे वह नियुक्ति-पेंशन (Pension) तथा प्रत्याहार द्वारा प्राप्त कर लेना राजा के बल की बात है और वह बहुमत के विश्व अधिकार से मंत्री को बचा लेता है, उसीके द्वारा अपना अधिकार भी तिष्ठ कर लेता है। इस वाक्यविधि के कारण सरकार के प्रायेक अंग से और मन्त्र में संतुलन है, उत्तरदायित्व को दूर कर दिया जाता है।

जब सरकार का एक भाग ऐसा है जो कोई कृतघ्नी नहीं कर सकता तो इसका अर्थ यह हुआ कि वह कोई काम नहीं करता और वह केवल नाम धारि का, जिसकी योजना और निरूपण के अनुसार वह कार्य करता है, बनता है। शासन में निश्चित सरकार एक होती है। यह अपने विभिन्न भागों को जोड़ने के लिए आवश्यक कर के वार्षिक प्रत्याहार करती है। यह सरकार के सभी स्तरों को चला करने का भार देश के निरंतर कार्य देती है और मन्त्र में एक ऐसी 'विविध की सरकार' का रूप धारण कर लेती है जिसमें वरमय पाठा कार्यकर्ता, अनुसूचक अधिकाधिक तिष्ठ करने वाले उत्तरदायी और अनुसरणीय व्यक्ति स्वयं से ही उत्पन्न होते हैं।

इस एक अधिकाधिक योजना तथा इसमें एवं पाठों के परिवर्तन द्वारा निश्चित सरकार के विभिन्न भाग उन विषयों में है एक दूसरे का बचाव कर लेते हैं, जिन्हें निष्पादित करने का भार उनमें है कोई एक नाम अपने ऊपर नहीं ले सकता। जब काम की आवश्यकता पड़ती है तो ये विभिन्न अवयव प्रत्येक रूप से समन हो जाते हैं और सहायीय प्रवृत्ति के पुनः बोलने लगते हैं। वे एक दूसरे की बुद्धिमत्ता बराबरी और अवाक्यिक की आवश्यकपूर्ण बराबरी करते हुए राष्ट्र के ऊपर चढ़नेवाले भार पर एक स्वर से निश्चयाने प्रवृत्ति हैं।

जिन्हीं एक मुख्यविधायक गणराज्य (Republic) में इस प्रकार विभिन्न स्तरों को जोड़ने प्रवृत्ति करने तथा कुछ प्रवृत्ति करने का अभिनय नहीं होता। हमें देश के दलित भाग का समान एवं पुनः प्रतिनिधित्व रहता है और विधान विभाग (Legislative) तथा निष्पादन-विभाग (Executive) का चाहे बिना प्रभाव हो इसके नहीं करावी का एक ही प्राकृतिक गुण-सौख्य होता है इसके विभिन्न विभाग एक दूसरे के लिए, प्रजातन्त्र (Democracy) पुनःपुनः (Aristocracy) और राजतन्त्र (Monarchy) के समान

जितना ही अधिक होना, वह इस प्रकार की सरकार के लिए सतता ही अधिक उपयुक्त होता ।

इसके विपरीत सुव्यवस्थित जनतंत्र की सरकार मनुष्य से सही विज्ञान की अपेक्षा रखती है जिसे बख़्त स्वीकार करती है । जनतंत्रीय सरकार में प्रत्येक व्यक्ति उस सम्पूर्ण पद्धति के औचित्य उसके मूल तथा उसके कार्यों का विचार करती है और भत्तीमात्रिता समझ लिए जाने पर इसका कार्य संपादन सुचारुस्थिति होता है । परिणाम यह होता है कि इस प्रकार की सरकार के अन्तर्गत मानव-शक्ति सम्पूर्ण साहस के साथ कार्य करती है और अत्यधिक यौतक प्राप्त करती है ।

सरकार के उत्पन्न वा स्वल्पों में से प्रत्येक भिन्न भाषा पर कार्य करता है एक ज्ञान के सहारे स्वतन्त्रतापुरुष अपना कार्य करता है और दूसरा ज्ञान के सहारे । अब हमें यह देखना चाहिए कि जिसे हम मिश्रित सरकार कहते हैं उसके मूल में यह कौन-सी शक्ति है जो उसे यति प्रदान करती है ।

मिश्रित सरकार की मर्यादात्मक शक्ति है—अध्याचार । मिश्रित सरकारों में निर्वाचन और प्रतिनिधित्व अत्यधिक अपूर्ण ही क्यों न हो फिर भी आनु-बन्धिक सरकारों की अपेक्षा इनमें बुद्धि को कार्य करने का अधिक अवसर प्राप्त होता है और इसलिये उस बुद्धि को शरीर सेना आवश्यक हो जाता है । मिश्रित सरकार परस्पर विरोधी तरकों का अध्याचार द्वारा जोड़कर इकाई का निर्माण करती है और इसलिये प्रत्येक रूप से यह अपूर्ण है । बर्क को इस बात का महान् शोक है कि फ्रांस ने ब्रिटिश संविधान को स्वीकार नहीं किया । इस संबंध पर जिस ऐवपूर्ण डंय से उन्होंने अपनी बात व्यक्त की है उसमें यह भाव निहित है कि अपने दोषों की रक्षा के लिए ब्रिटिश संविधान को किसी और शय की आवश्यकता है ।

मिश्रित सरकार में उत्तरदायित्व का अभाव रहता है उसके अंत एक दूसरे को ऐसे डंके हुए रहते हैं कि उत्तरदायित्व समाप्त हो जाता है और अध्याचार, जो कि मर्यादात्मक शक्ति है अपने बचाव की योजना बना लेता है । जब सिद्धान्त रूप में इसे स्वीकार कर लिया जाता है कि राजा कोई गलती नहीं कर सकता तो राजा की स्थिति पूर्णतया अभावित शक्ति की स्थिति के समान ही सुरक्षात्मक हो जाती है । फिर तो उसके लिए उत्तरदायित्व की

बात बटोरी ही नहीं। उसके बाद उत्तरदायित्व जाता है मंत्री पर, जो संसद के उस बहुमत की पालु नेता है जिसे वह नियुक्ति-पेंशन (Pension) तथा प्रत्यक्ष द्वारा प्राप्त कर लेना राजा के पास ही बाता है; और वह बहुमत के जिस बहिष्कार के मंत्री को बचा लेता है। उसीके द्वारा अपना औचित्य भी सिद्ध कर लेता है। इस प्रक्रिया के कारण सरकार के प्रत्येक अंग से और अंग में संतुर्ल के उत्तरदायित्व को दूर कर दिया जाता है।

जब सरकार का एक भाग ऐसा है जो कोई समझती नहीं कर सकता तो दूसरा अंग यह सुझा कि वह कोई बात नहीं करता और वह केवल ज्ञान पीछे का, मिश्री मंचला और निर्दोष के अनुसार वह कार्य करता है, संन्यास है। वास्तव में मिश्री सरकार एक श्रेणी है। वह अपने विभिन्न भागों को जोड़ने के लिए आवश्यक रूप से आत्मिक प्रत्याहार करती है। वह सरकार के सभी त्वाकों को बहूत करने का भार देय के लिए परताप देती है और जगत् में एक ऐसी 'कर्मिणी की सरकार' का रूप बालु कर लेती है। मिश्री बलमर्ष राजा कर्मकर्ता अनुमोदक औचित्य सिद्ध करने वाले उत्तरदायी और अनुसूच-दायी अति शयन से ही प्यति होते हैं।

इस कुछ अविन्यायक योजना तथा इसी अंग भागों के परिवर्तन द्वारा मिश्री सरकार के विभिन्न भाग जब मिश्री में से एक दूसरे का अभाव कर लेते हैं जिन्हें निष्पादित करने का भार उनमें से कोई एक भाग अपने ऊपर नहीं ले सकता। जब जगत् की आवश्यकता बढ़ती है तो के विभिन्न अंगद्वय प्रत्यक्ष रूप से अलग हो जाते हैं और अत्यन्त प्रयत्न के पुनर्जीवने करते हैं। वे एक दूसरे की बुद्धिमत्ता बराबरता और अनात्मिक की आवश्यकपूर्ण बराबरता करते हुए राष्ट्र के ऊपर बढ़नेवाले भार पर एक स्वर से निरन्तर चोड़ते हैं।

जिन्हे एक मुख्यविषय 'गणतन्त्र' (Republic) में इस प्रकार विभिन्न तत्वों को जोड़ने प्रयत्न करने तथा कुछ प्रकट करने का अधिनियम नहीं होता। इसमें देश के प्रत्येक भाग का समान एवं बल प्रतिनिधित्व रहता है और विधान विभाग (Legislative) तथा निष्पादक-विभाग (Executive) का कोई जिस प्रकार प्रभाव हो इसके सभी कर्तव्यों का एक ही आधिकारिक भूमि-मोक्ष होता है। इनके विभिन्न विभाग एक दूसरे के लिए, प्रजातन्त्र (Democracy) अरिस्तोक्रासी (Aristocracy) और राजतन्त्र (Monarchy) के समान

मित्रता ही अधिक होया, वह इस प्रकार की सरकार के लिए सतता ही अधिक उपयुक्त होना ।

इसके विपरीत, सुसंस्थित जनतंत्र की सरकार मनुष्य से सही विरासत की अपेक्षा रखती है जिसे बुद्धि स्वीकार करती है । जनतंत्रीय सरकार में प्रत्येक व्यक्ति उस सम्पूर्ण पद्धति के अधीन उसके धर्म तथा उसके व्यर्थों का हि की जाय करता है और मनीमांति समझ लिए जाने पर इसका कार्य संवादन सुचारुस्थिति होता है । परिणाम यह होता है कि इस प्रकार की सरकार के अन्तर्गत मानव-शक्ति सम्पूर्ण साहस के साथ कार्य करती है और आर्थिक वीर्य प्राप्त करती है ।

सरकार के उपर्युक्त दो स्वधर्मों में से प्रत्येक भिन्न आधार पर कार्य करता है एक ज्ञान के सहारे स्वतन्त्रतापूर्वक अपना धर्म करता है और दूसरा मज्जन के सहारे । अब हमें यह देखना चाहिए कि जिसे हम मिश्रित सरकार कहते हैं उसके मूल में यह कौन-सी दक्षिण है जो उसे गति प्रदान करती है ।

मिश्रित सरकार की मर्यादात्मक शक्ति है—भ्रष्टाचार । मिश्रित सरकारों में निर्वाचन और प्रतिनिधित्व आत्यधिक अपूर्ण ही क्यों न हो फिर भी मानु मंडित सरकारों की अपेक्षा इनमें बुद्धि को कार्य करने का अधिक अवसर प्राप्त होता है और इसलिये उस बुद्धि को सही सेना आवश्यक हो जाता है । मिश्रित सरकार परस्पर विरोधी तत्वों का भ्रष्टाचार द्वारा जोड़कर इनाई का निर्माण करती है और इसलिये प्रत्येक रूप से वह अपूर्ण है । बर्के को इस बात का महान शोक है कि फ्रांस ने ब्रिटिश संविधान को स्वीकार नहीं किया । इस बखतर पर, जिस से हमें दंग से उठाने अपनी बात व्यक्त की है, उसमें यह भाव निहित है कि अपने दावों की रक्षा के लिए ब्रिटिश संविधान को किसी और तत्व की आवश्यकता है ।

मिश्रित सरकार में उत्तरदायित्व का अभाव रहता है उसके अंत एक दूसरे को ऐसे डंके हुए रहते हैं कि उत्तरदायित्व समाप्त हो जाता है और भ्रष्टाचार, जो कि मर्यादात्मक शक्ति है अपने बचाव की योजना बना लेता है । अब सिद्धांत रूप में इसे स्वीकार कर लिया जाता है कि राजा कोई गतनी नहीं कर सकता तो राजा की स्थिति पूर्ण अथवा आत्मविश्वास व्यक्ति की स्थिति के समान ही मर्यादात्मक हो जाती है । फिर तो उसके लिए उत्तरदायित्व की

है। यूरोप में इस समय बरि कोई सामान्य अंति हो पड़े हो लोगों को भी अप्रसन्न होना चाहते नहीं अधिक आरक्षण अब तक की हुई अन्तिमें पर होगा है।

यह हम मनुष्य की इस क्षणीय दशा पर विचार करते हैं कि शासन की पञ्चमीय वर्द्धि और आनुवंशिक वद्धि के अन्तर्गत मनुष्य अपने घर के निकल विवा जाता है तथा करों के द्वारा निर्जन बनाया जाता है तो यह स्पष्ट हो जाता है कि ये वद्धिमें दीवपूर्ण हैं, और सरकार के विद्वांस तथा वक्ताओं तथा भी सामान्य अन्ति की आवश्यकता है।

एक राष्ट्र के नायों के हस्त के अतिरिक्त सरकार और क्या है? सरकार, अतिरिक्त, व्यक्ति विशेष की सम्पत्ति नहीं है और न ही उम्मी है- बल्कि वह सबूत राष्ट्र की सम्पत्ति है। यद्यपि कम-अधिक द्वारा अपना निजी 'आविष्कृत योजना' द्वारा इसे विरासत के रूप में हस्त विवा क्या है, किन्तु अपहरण मनुष्यों के अधिकार को बल नहीं करता। यही एक अधिकार को बल है, अनुमति केवल राष्ट्र की होती है। किसी व्यक्ति की नहीं। यदि राष्ट्र सरकार के किसी स्वरूप को अनुविधानिक समझता है तो वह स्वयं को बल देने तथा अपने द्वि स्वभाव एवं मनुष्य के अनुसार सभी स्वरूप की स्थापना करने का उसे अनेक समय स्वाभाविक एवं अनिवार्य अधिकार प्रप्त है। पत्राओं और प्रचारों के रूप में विवे बने मनुष्यों के अनुसार और अधिक मेर यह सरकारों की विधि के अनुसार होते हुए भी नागरिकों के विर अनुमति है, और यह विद्वांस द्वारा निमित्त है जिसके आधार पर आजकल सरकारों का निर्माण हो रहा है। अनेक नागरिक प्रजासत्ता (Sovereignty) का सदस्य है और इसलिए वह वैयक्तिक आधीनता नहीं स्वीकार कर सकता, यही आकाशविता केवल शासकों के प्रति हो सकती है।

सरकार क्या है इस प्रश्न पर विचार करते समय यह स्वीकार करना पड़ेगा कि सरकार को इन सभी मनुष्यों और विषयों का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए जिनके लिए उसकी दक्षि का प्रयोग होना। सरकार विषयक इस विधिसे है अमेरिका और फ्रांस द्वारा स्थापित कम-समीक्ष-वद्धि मनुष्यों को अपनी विधि में रखती है और विभिन्न भागों के अतिरिक्त द्वारा स्थापित केन्द्र सभी भागों के सामान्य द्विों के ज्ञान के अवयव राष्ट्र है।

मित्र नहीं है। चूँकि गणतन्त्र (Republic) में परस्पर विरोधी तन्त्र नहीं होते अतः उसमें समझौते द्वारा भ्रष्टाचार करने जयवा योजना द्वारा मित्र होने का प्रयत्न ही नहीं उठता।

सार्वजनिक कार्य स्वयं राष्ट्र के ध्यान को अपनी ओर आकर्षित करते हैं और उन्हें निष्पादित करने के लिए किसी के मिथ्याभिमान से चाटुकारितापूर्ण प्रार्थना नहीं करनी पड़ती वरन् उनके गुणों के कारण राष्ट्र स्वयं उन्हें पूरा करता है। मित्रित सरकारों में राष्ट्र के ऊपर पड़नेवाले करों के भार पर आत्यन्त सफलतापूर्वक व्यक्त की जाने वाली दुःख की निरन्तर कराह, गणतन्त्र के अभिप्राय और भावना के सम्मुख असंगत ही सिद्ध होगी। यदि कर आत्यन्तक हैं तो निश्चित रूप से सामप्रद होंगे किन्तु उनके लिए यदि क्षमा-याचना की आवश्यकता पड़ी तो उस क्षमा-याचना में दोषारोपण का अर्थ निहित है।

जब मनुष्यों को राजा और प्रजाओं के विभिन्न नामों से पुकारा जाता है जयवा जब राजतन्त्र कुलीनतन्त्र और प्रजातन्त्र के भिन्न-भिन्न नामों से या मिथित नाम से सरकार की चर्चा की जाती है तो बिबेकशील व्यक्ति इन बातों का क्या अर्थ समझे? यदि विश्व में वास्तविक रूप से सामब-स्थापित के दो या अधिक मित्र एवं पक्क मूलतत्त्व कभी थे तो हमें उन कतिपय उद्गम-स्रोतों से अवगत होना चाहिए जिनके लिए उर्वरक त्यों का प्रयोग किया जा सके। किन्तु मनुष्य की एक ओर केवल एक जाति है इसलिए मानव दक्षिण का केवल एक मूलतत्त्व सम्भव है और वह है मनुष्य स्वयं। राजतन्त्र कुलीनतन्त्र और प्रजातन्त्र आदि केवल मानव बुद्धि की सृष्टियाँ हैं और इन तीनों के समान सृष्टियों अन्य प्रकार की सरकारों का आविष्कार किया जा सकता है।

अमेरिका और फ्रांस की क्रांतियों तथा अन्य देशों में दिसलाई पड़नेवाले सघर्षों से यह स्पष्ट है कि सरकार-पद्धति के बारे में विश्व मत बदल चुका है। क्रांतियाँ राजनैतिक अनुमान की परिधि के बाहर हैं। समय और परिस्थितियों की जिस प्रवृत्ति को मोघ महान परिवर्तनों के लिए आवश्यक मानते हैं वह क्रांतियों के उत्पन्न करनेवाले विचारों के वेग और मस्तिष्क की शक्ति को मापने के लिए अत्यधिक यांत्रिक हैं। अब तक जितनी क्रांतियाँ हो चुकी हैं उन्हें कभी असम्भव माना जाता था; उनके कारण सभी प्राचीन सरकारों को ध्वस्त तथा

जाय ही नष्ट हो जाय ।

कहा जाता है कि फ्रांस के दूसरी कम्युन ने जो कि एक विचार एवं व्यापक दूर का व्यक्ति का सन् १९१० ई. के आध्यात्म युरोप में युद्ध का सम्मुख करने की योजना प्रस्ताव की । इस योजना में यह कहा गया था कि यूरोप की एक वार्ड (फ्रांस के नेताओं ने इसे 'अध्यात्म जनता' के नाम से पुकारा है) का निर्माण हो जिसमें राष्ट्रीय प्रतिनिधि नियुक्त किये जायें, और यदि हो पायें हैं कोई कण्टा हो तो वही वार्ड संघर्ष करे । जिस समय प्रस्ताव दिया गया था यदि उन्हीं समय इन योजना को स्वीकार कर लिया गया होता तो फ्रांस की कम्युनि के आरम्भ-काल में इतनी ही और फ्रांस में जो कर सके हुए वे थे अनेकानुसृत वत मास स्थिति कायिक कम होते ।

हमका कारण मानने के लिए कि इस प्रकार की योजना क्यों नहीं स्वीकृत की गयी (और युद्ध का जल करने के लिए नहीं, बल्कि कई वर्षों के व्यर्थ समय के अग्रान्त केवल युद्ध समाप्त करने के लिए वार्ड का आभोजन क्यों दिया गया)? सरकारों के हितों को राष्ट्रीय हितों से विचित्र समझना आवश्यक है ।

जो एक राष्ट्र के लिए क्यों वा काय होना है । वही सरकार की आय का साधन भी होता है । प्रत्येक युद्ध का जल बरी में बुद्धि और परित्याग्य सरकार की आय में बुद्धि के साथ होता है । जिस रूप में आजकल युद्ध आरम्भ का समाप्त होने के हैं उनके अनुसार युद्ध की विधि की स्थिति में सरकारों के अधिकार बढ़ा दिये जाते हैं । भूँकि युद्ध बरी तथा बरी पर बलीम स्थितिओं की आवश्यकता का अभाव अनुमान-पूर्वक अनुमान करता है । बत करती इस कठोरता के साथ यह आधीन नगरों का बद्धि का अनुकूलन है । युद्ध को समाप्त करने की विधि की बद्धि की आवश्यकता का यह राष्ट्र के लिए अत्यधिक आवश्यक नहीं हो जब होता इस प्रकार की सरकार है अपने अत्यधिक आवश्यक आय को नष्ट कर देना । जिस मुख्य विषयों को लेकर आवश्यक युद्ध आरम्भ किये जाते हैं वे सरकारों की युद्ध-प्रकाश को बनाये रखने की प्रवृत्ति एवं शासक इच्छा को प्रकट करते हैं और यह निष्कर्षों का अन्वयार्थ करते हैं, जिस पर वे सरकारें काम करती हैं ।

अन्वयार्थ देश युद्ध में क्यों नहीं दूरते ? इसका कारण केवल यही है कि फ्रांस की सरकार की प्रवृत्ति ऐसी है कि उनके हित राष्ट्र के हितों से विचित्र नहीं

किन्तु प्राचीन सरकारों की रचना इस प्रकार की है कि न तो उन्हें देश का साम प्राप्त हो पाता है और न वे सुख दे पाती हैं। यद्यपि दीवारों के बाहर के विरोध का ज्ञान न रखनेवाले महानों की सरकार अतनी व्यसनत है उतनी ही व्यसनत है राजाओं द्वारा दासित सरकार।

प्राचीन काल में लोग जिन्हें व्यक्तिगत कहा करते थे वे व्यक्तियों के बदलने और स्थानीय परिस्थितियों के परिवर्तनों से कुछ ही अधिक होती थी। स्वाभाविक घटनाओं के समान उनके उदभव और विमर्श होते रहे हैं। उनके अस्तित्व अथवा नाश में ऐसी कोई शक्ति नहीं थी जो उनकी उदभव भूमि के अतिरिक्त अपना प्रभाव डाल सके। किन्तु अमेरिका और फ्रांस की क्रान्तियों के प्रभाव-स्वरूप ससार में वस्तुओं की प्राकृतिक व्यवस्था का नवीन रूप स्रित हो-रहा है। इन क्रान्तियों ने सिद्धान्तों की ऐसी पद्धति का जन्म दिया है जो सत्य और मानव-अस्तित्व के समान ही सावनीतिक है। उन्होंने राष्ट्रीय उन्नति राजनैतिक सुख तथा नीति का समन्वय किया है।

१. जहाँ तक अधिकारों का प्रश्न है सभी मनुष्य स्वतन्त्र और समान पैदा होते हैं तथा मरिये में भी समान पैदा होते रहेंगे। इसलिए बलवत् सार्वजनिक उपयोगिता के आधार पर नैतिक वेद सम्भव है।

२. मनुष्य के प्राकृतिक और अधिदेय अधिकारों को अतुल्य रखना सभी राजनैतिक संस्थाओं का उद्देश्य है और वे अधिकार हैं—स्वतन्त्रता सम्पत्ति सुरक्षा और अत्याचार का विरोध करना।

३. राष्ट्र तत्त्व समस्त प्रभुमत्ताओं का मूल है किसी व्यक्ति अथवा किसी संस्था को ऐसे प्रभुत्व का अधिकार न होगा जो उसे स्पष्टतया राष्ट्र से प्राप्त नहीं हुआ है।

इन उपर्युक्त सिद्धान्तों में ऐसा कुछ नहीं है जो महारजाकाता को उत्तमित्र करके राष्ट्र को अभ्यवर्धित कर दे। इन सिद्धान्तों का प्रयोग है राष्ट्र की योग्यताओं और दुर्बल का आकाहन करना ताकि उनके द्वारा संप्रतामस्य का हित-संपादन हो न कि विशेष प्रकार के व्यक्तिगत अथवा वर्गों का हित या अभ्युदय हो। राजतन्त्रीय प्रभुमत्ता को जो सामय्य भाति की शक्त और दुर्ग का श्रोत है समाप्त कर दिया गया और यह स्वयं अपने प्राकृतिक एवं मूल रक्षण राष्ट्र को सुदृढ़ कर दी गयी। यदि यूरोप पर न ऐसा ही हो जाय तो युद्ध के

एक समय हम को कुछ देखते हैं, उसके आधार पर हम कह सकते हैं कि राजनीति-क्षेत्र में किसी प्रकार के सुधार को अनिवार्य नहीं मानना चाहिए। वह क्रांतियों का युग है जिसमें सभी कुछ सम्भव है। राजस्व-स्रोतों का पक्ष, जिसके द्वारा कुछ को सेवा प्रीति दी जाती है, राष्ट्रों के एक संघर्ष को अपने विकास के लिए उत्तेजित कर सकता है। स्वतंत्र सरकार की प्रवृत्ति के कारण और राष्ट्रों की संगठित की वृद्धि के लिए यूरोप में एक कोशिश की स्थिति। अन्य और अमेरिका की क्रांतियों तथा उनके पारस्परिक सम्बन्धों की अनेक सम्भावना के अतिरिक्त है।

मनुष्य के अधिकार

(भाग २)

[भूमिका]

अर्कमिडीज (Archimedes) ने गणितीय शक्तियों के विषय में कहा था कि यदि हमें ज्ञात होने की स्थिति मिल जाए तो हम सारे विश्व को जित सकते हैं। यही बात बुद्धि और स्वतन्त्रता के बारे में भी सही हो सकती है। अन्त-मार्ग में जो केवल मित्राण्ड के रूप में या अमेरिका की क्रांति ने उनके राजनीति के रूप में प्रत्यक्ष दिखाया दिया। प्राचीन विश्व की सरकारों की जड़ें इसकी गहराई तक बंटी हुई थीं और अस्तित्व के ऊपर अत्याचार एवं प्राचीन विचार इस प्रकार के ताबजोद हुए थे कि एशिया मजरीका और यूरोप में मनुष्य की राजनीतिक स्थिति में सुधार-आवश्यकता नहीं हो सकती थी। समूची विश्व में स्वतन्त्रता की भावना की अदृष्ट गंगा जल को छोड़ी बना बना और हर की शक्त ने मनुष्य को सोचने के विपुल कर दिया था।

जिन्हा रूप की प्रवृत्ति इसकी अग्रिम है कि हमें केवल प्रकाश होने की स्वतन्त्रता चाहिए। सरकार के अपनी विपत्ति प्रकट करने के लिए मूर्ख को किसी बात अथवा प्रचार की आवश्यकता नहीं पड़ती। अमेरिका की सरकारों विश्व में प्रकट हुईं उसी तरह निरंकुश सरकारों की बजाया गया

होते। कुम्भबस्थित होने तथा संसार भर में फैले हुए बालिष्ठ के बावजूद भी हमेशा सगमय एक सती लक बिना युद्ध के रहा और जिस देश को भी सरकार का स्वल्प बदल दिया गया, उसी क्षण महीन सरकार के साथ-साथ वहाँ शान्ति के अनर्तवीर्य सिद्धांत तथा राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था एवं उन्नति का उद्भव हुआ। अन्य राष्ट्रों में भी ऐसे परिवर्तनों के ऐसे ही परिणाम होते।

युद्ध प्राचीन पद्धति की सरकारों का सिद्धांत है और एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र के प्रति धनुष का जो भाव रखता है वह युद्ध प्रथा को बनाए रखने के लिए सरकारों की नीति माय है। एक सरकार अन्य सरकार पर बिनासवाद प्रत्यक्ष और राष्ट्र की भावना को उत्तेजित तथा उसे भयंकर समता के रूप में परिचित कर देने वाली महत्वाकांक्षा का आरोप करती है। मनुष्य मनुष्य का समु मही है और यदि है तो सरकार की गूढत पद्धति के माध्यम से ही। इसलिए राजाओं की महत्वाकांक्षाओं के बदले इस प्रकार की सरकारों के सिद्धांतों के बिच्छु स्वर उठना चाहिए और एक व्यक्ति का सुधार करने के बड़े पद्धति का सुधार करने में राष्ट्र की बुद्धि का उपयोग करना चाहिए।

प्राचीन सरकारों के सिद्धांत तथा स्वरूप जो आज भी प्रचलित हैं, अपने स्थापना-काल के विश्व की स्थिति के अनुकूल थे या नहीं यह बात दूसरी है। वे जिसने पुरातन होते आयेगे वर्तमान वस्तु-स्थितियों के लिए वे उठी याथा में अनुपयुक्त होते आयेगे। समय तथा परिस्थितियों एवं मनों में हुए परिवर्तन का जो प्रगतिशील प्रभाव हमारी रीतियों और भावों पर पड़ा है, उसीने सरकारों की प्राचीन पद्धतियों में परिवर्तन अनिवार्य कर दिया है। विश्व की पूर्वकालीन स्थिति की अपेक्षा आज के युग में हुए बालिष्ठ तथा फिर यदि के लिए, जिनके द्वारा राष्ट्र की सर्वाधिक उन्नति होती है विल प्रकार की सरकार-पद्धति और बुद्धि की आवश्यकता है।

मनुष्य प्राति की प्रकृतिवस्था को देखते हुए यह समझ सेना कठिन नहीं है कि आनुवंशिक सरकारें अपने पठन विन्दु पर पहुँच रही हैं और यूरोप में राष्ट्रीय प्रभुता एवं प्रतिनिधित्व पर स्थापित सरकार के विस्तृत आधार पर व्यक्तियाँ होने ला रही हैं। इसलिए उन्हें विश्व के सुपुर्द कर देने की अपेक्षा उनकी अनिवार्यता को अनुभव करके बुद्धि और समझौते के आधार पर उनकी स्थापना करना अधिक बुद्धिमानी होगी।

काय किए होती तो इस समय तक उन देशों की क्या ओसाहूत अधिक मज्दो होती। मुन-नर-मुन बीठते रहे, जिन्हु पनकी खमीय क्या क्यों-की-र्यों मरी रही।

यदि हम एक ऐसे व्यक्ति की कल्पना करें जो संसार के विषय में कुछ नहीं जानता है और जो केवल बूझने के लिए संसार में छोड़ दिया गया है, तो बने संसार का अधिवाय भाग क्या प्रतीत होगा क्योंकि वहाँ के लोग आधुनिक दृष्टियों की कठिनाइयों और अपाधों से संतर्पित करते हुए प्रतीत होंगे। वह यह नहीं समझ सकेगा कि पीड़ित व्यक्तियों के वे समुदाय—प्राचीन देशों में विनया अधिवाय है—ये ही हैं जिन्हें अब तक अपनी व्यवस्था करने का अवसर ही नहीं प्राप्त हो सका है और इस बात को तो वह सोच ही नहीं सकेगा कि इसका कारण क्या है वहाँ की सरकारें हैं।

प्राचीन विश्व के अधिक खमीय जाओ को छोड़कर यदि हम उन भागों की बातें को मुबार की उन्नत स्थिति में हैं तो हमें सरकार के लोभी हाथ का भी समूह औद्योगिक क्षेत्र में बढ़ते हुए और देश की सम्पत्ति का अपहरण करते हुए मिलने। अधिवायों का उपयोग निम्नतर 'रिजर्व' (Reserve) व्यवस्था कर-निर्धारण के लिए महीन बहाने प्रस्तुत करने में ही रहा है। ऐसी सरकार देश की सम्पत्ति का लोभ नगमे रहती है और अपहरण करते ही अपना नाम से लेती है।

पूर्विक जर्मनी आरम्भ हो चुकी है, क्या यह बाधा करना स्वाभाविक है कि अधिवाय में और भी कमिनी होती। विनयव्यय एवं निम्नतर बढ़ते हुए व्यय विनये द्वारा प्राचीन सरकारों का कार्य-अवसाय होता है वे बहुव्यय कुछ विनये प्राचीन सरकार नाम लेती है अपना विनये उत्पन्न करती है, बाकी-भौतिक बाधति और बाधित्य के कार्य में उन सरकारों द्वारा प्रस्तुत की गयी व्ययना और देश में सरकारों द्वारा विनये जानेवाले अपहरण और अपाधार विश्व की सम्पत्ति को लूनाय कर चुके हैं। काक-ही-लान विनय का पूर्व भी बचान हो क्या है। ऐसी स्थिति में और ऐसे बहाहरणों के बहस्वित रहते हुए अधिवायों की आका बरसी हो चाहिए। वे वर्तमान समय में आर्थी-व्यय वहाँ के विश्व बन गयी है।

यदि सरकार की ऐसी दृष्टियों का आरम्भ हो सकेगा कि विनया व्यय

और मनुष्य अपनी श्रुति का उपाय सोचने लगा। यदि सरकारों के सिद्धान्तों और व्यवहारों के प्रति कान्ति न हुई होती तो केवल इंग्लैण्ड के सम्बन्ध विच्छेद के रूप में, अमेरिका की स्वतंत्रता का महत्व बहुत कम होता। अमेरिका ने कान्ति की न केवल अपने लिए बल्कि समस्त विश्व के लिए और उसने अपने हितों की परिधि के बाहर भी देखा। जर्मनी के विपाही भी, जिन्हें अमेरिका के विरुद्ध सड़ने के लिए किराये पर बुलाया गया था, अपनी हार का आनन्द मनाएँगे और इंग्लैण्ड अपनी सरकार की कुटुम्ब पर धिक्कार करते हुए अपनी असफलता पर भी प्रसन्न होगा।

बिना प्रकार राजनैतिक विश्व में अमेरिका ही एक ऐसा स्थान था, जहाँ सार्वभौमिक सुधार के सिद्धान्त स्थापित हो सकते थे उसी प्रकार प्राकृतिक विश्व में भी वह सर्वोत्तम था। इसके सिद्धान्तों को उन्नत करने के लिए ही नहीं बल्कि उन्हें महान परिपक्वता प्रदान करने के लिए भी परिस्थितियों का समूह वहाँ एकत्रित हुआ था।

किसी दशक के नेत्रों के सम्मुख यह महाद्वीप जो हृदय प्रस्तुत करता है उसमें कुछ ऐसी शक्ति है जो महान विचारों को उत्पन्न और प्रोत्साहित करती है। प्रकृति इसके सम्मुख अपने विराट् रूप में प्रस्तुत होती है। वहाँ के प्रथम निवासी यूरोप के विभिन्न राष्ट्रों को छोड़कर आने वाले व्यक्ति थे। उनके धर्म भिन्न-भिन्न थे और प्राचीन विश्व के सरकारी उत्पीड़न के कारण, वहाँ से भाग कर वे एक नये विश्व में पहुँच नहीं बल्कि भाई के रूप में मिले। निर्जन प्रदेश की प्रथम बस्ती-सम्प्रदायी अनिवार्य आवश्यकताओं ने उनके मध्य वह सामाजिकता उत्पन्न कर दी जिसे सरकारों के झगड़ों एवं पक्षधर्मों से बिर धीव्रित देशों ने अब तक उपेक्षित रखा था। ऐसी स्थिति में मनुष्य पही होता है जो उसे होना चाहिए। वह अपनी जाति की प्राकृतिक शक्त के रूप में नहीं बल्कि शक्त के रूप में देखाता है। कृत्रिम जगत के लिए यह एक उदाहरण है, जो यह प्रकट करता है कि ज्ञान की प्राप्ति के लिए मनुष्य को प्रकृति की गोश में सौटना होगा।

सुधार की प्रत्येक लड़ाई में अमेरिका ने जो तीव्र प्रगति की है उसके आधार पर यह निष्कर्ष करना बिबेनपूर्ण होगा कि यदि एशिया अफ्रीका और यूरोप की सरकारें अमेरिका के सिद्धान्त न समान किसी सिद्धान्त के अनुसार

काय किए होती, तो इन समय तक उन देशों की क्या विशेषाधिकार अधिक बज्जी होती। दुप-बार-दुप बीजते रहे, किन्तु उनकी दायीय क्या नहीं-की-सी बनी रही।

यदि हम एक ऐसे व्यक्ति की कल्पना करें जो संसार के विषय में कुछ नहीं जानता है और जो केवल धूमने के लिए संसार में छोड़ दिया गया है, तो उसे संसार का व्यक्तिगत भाव नया प्रतीत होता क्योंकि वहाँ के लोभ आर्थिक बस्तियों की कठिनाइयों और अपायों से संदर्भ करते हुए प्रतीत होते। वह यह नहीं समझ सकेगा कि चोरीत व्यक्तिवों के ये समुदाय—प्राचीन देशों में विनया अधिकृत है—ये ही है, किन्तु अब तक अपनी व्यवस्था करने का अवसर ही नहीं प्राप्त हो सका है और इस बात को जो यह भाव ही नहीं सकेगा कि इसका कारण उन देशों की सरकारें हैं।

प्राचीन विश्व के अधिक दायीय भावों को छोड़कर यदि हम उन भावों को देखें जो मुबार की वसत स्थिति में हैं तो हमें सरकार के लोभी भाव का भी अनुमान औद्योगिक समय में करने हूँ और देश की सम्पत्ति का अपहरण करते हुए मिलेंगे। बाबियायों का उपयोग निरन्तर 'क्रेपण्ड' (Krepand) कपड़ा कार-निर्धारण के लिए नहीं बल्कि प्रस्तुत करने में हो रहा है। ऐसी सरकार देश की सम्पत्ति पर आँक पड़ाये रहती है और अपहरण करते ही अपना भाव ले लेती है।

पूर्विक व्यक्तिवों का समय हो चुकी है, अतः यह भाव्य काया स्वाभाविक है कि व्यक्तिव में और भी शक्ति होती। विस्मयजनक एवं निरन्तर बढ़ते हुए व्यय इनके द्वारा प्राचीन सरकारों का कार्य-अवसाय होता है। वे बहुदूरक कुछ दिनों प्राचीन सरकारों का भाव लेती हैं अथवा किन्हीं उत्तेजित करती हैं, कार्य-भौतिक संस्था और बाह्यिक के मार्ग में उन सरकारों द्वारा प्रस्तुत की गयी व्यय और देश में सरकारों द्वारा दिये जानेवाले अपहरण और कप्याकार विवर की सम्पत्ति को कालांतर पर पहुँचे हैं। कार्य-ही-काय विश्व का हीन भी बनता हो गया है। ऐसी स्थिति में और ऐसी कप्याकारों के उपस्थित रहते हुए, व्यक्तिवों की भाग्य बरती ही चाहिए। वे वर्तमान समय में कार्य-भौतिक कार्य के विषय का नहीं है।

यदि सरकार की ऐसी चालियों का कारण हो सकता है, किन्तु व्यय

और मनुष्य अपनी युक्ति का उपाय सोचने लगा। यदि सरकारों के विद्वानों और व्यवहारों के प्रति क्रांति न हुई होती तो केवल इंग्लैण्ड के सम्पन्न विधेय के रूप में, अमेरिका की स्वतन्त्रता का महत्व बहुत कम होता। अमेरिका ने क्रांति की न केवल अपने लिए बल्कि समस्त विश्व के लिए, और उसने अपने हितों की परिधि के बाहर भी देता। जर्मनी ने विषाही भी बिना अमेरिका के विरुद्ध बढ़ने के लिए किराये पर बुलावा मचाया, अपनी हार का मान्य मनाएँ और इंग्लैण्ड अपनी सरकार की दुष्टता पर शिरावट काटे हुए अपनी असफलता पर भी प्रसन्न होगा।

जिस प्रकार राजनैतिक विद्वानों में अमेरिका ही एक ऐसा स्थान था जहाँ सार्वभौमिक सुधार के सिद्धान्त स्थापित हो सकते थे उसी प्रकार प्राकृतिक विज्ञान में भी वह सर्वोत्तम था। इसके विद्वानों को उत्पन्न करने के लिए ही नहीं बल्कि उन्हें महान परिपक्वता प्रदान करने के लिए भी परिस्थितियों का समूह यहाँ एकत्रित हुआ था।

किसी दशक के लोगों के सम्मुख वह महाद्वीप जो स्वयं प्रस्तुत करता है, उसमें कुछ ऐसी शक्ति है जो महान विचारों को उत्पन्न और प्रोत्साहित करती है। प्रकृति उसके सम्मुख अपने विराट् रूप में प्रस्तुत होती है। यहाँ के श्रम निवासी यूरोप के विभिन्न राष्ट्रों को छोड़कर आने वाले व्यक्ति थे। उनके बर्ष मित्र-मित्र थे और प्राचीन विश्व के सरकारी उत्पीड़न के कारण यहाँ वे भाग्य कर के एक नये विश्व में लगे नहीं बल्कि भाई के रूप में मिले। विभिन्न प्रदेशों की प्रथम बस्ती-सम्प्रदायी अनिवासी आबस्यकताओं ने उनके मध्य वह सामाजिकता उत्पन्न कर दी जिसे सरकारों के मजदूर एवं पक्षियों से विरुद्धित देशों ने अब तक उपेक्षित रखा था। ऐसी स्थिति में मनुष्य पड़ी होता है, जो उसे होना चाहिए। वह अपनी जाति को प्राकृतिक समूह के रूप में नहीं, बल्कि समूह के रूप में देखता है। कुत्रिप जगत् के लिए यह एक उदाहरण है, जो यह प्रकट करता है कि ज्ञान की प्राप्ति के लिए मनुष्य को प्रकृति की ओर से सीटना होगा।

सुधार की प्रत्येक दिशा में अमेरिका ने जो तीव्र प्रगति की है उसके आधार पर यह निर्णय करना विशेषार्थ होगा कि यदि एतिया अफ्रीका और यूरोप की सरकारें अमेरिका के सिद्धान्त के सामान्य किसी सिद्धान्त के अनुसार

अन्तिमों की सफलता को सर्वाधिक अथ उस समय होता है जब उनके बाजारभूत विद्यार्थों की स्थापना के पूर्व ही तथा उनके परिणामस्वरूप प्राप्त होने वाले सामान्य के दिग्दर्शकों के द्वारा ही उन्हें आरम्भ करने का प्रयत्न दिया जाता है। 'सरकार' के सामान्य और राष्ट्रीय धर्म में राष्ट्र की परिस्थितियों से सम्बन्धित सब कुछ समाविष्ट कर लिया गया है। यद्यपि 'सरकार' अपनी धूर्तों और दुष्टताओं का उत्तरदायित्व अपने सर नहीं लेती, किन्तु अन्तिमों और सम्पत्तियों का खेज सुरक्षित के रूप में भी नहीं। अन्तिम-जन्म लोगों को अन्तिम जीवन के साथ अपने कार्यों का फल बित्त करके वह उद्योग के उच्चको उत्तिष्ठा जीवन लेती है, और यद्यपि के सामान्य प्रति में के एक पुराने का खेज स्वयं के लेती है किन्तु वह सामाजिक प्राप्ति के भाग प्राप्त करता है।

इसलिए, अन्तिमों के इन दिनों में यह समझ लेना हितकर है कि सरकार के कार्यों के परिणामस्वरूप क्या प्राप्त होता है और सरकार के अन्तिमों के बिना क्या प्राप्त होता है। इसके लिए अच्छा यह होना कि इन समाज सम्पत्तियों तथा उनके परिणामों को सरकार के पित्र मानकर सब पर विचार करें। इन प्रकार की सोच आरम्भ करने के इन कार्यों के उचित कारण निर्दिष्ट करने तथा सामान्य नृतिओं का विलोपन करने में समर्थ हो सकेंगे।

समाज और सम्यता

मानव जाति का शासन करनेवाली व्यवस्था का अधिकार सरकार का कार्य नहीं है। इसका मूल समाज के नियामों एवं यद्यपि भी प्राकृतिक रचना में है। इस व्यवस्था का अस्तित्व सरकार से पहले का है और यदि सरकार का औपचारिक स्वरूप उद्यत दिया जाय तो भी वह बना रहेगा।

अन्तिम और अन्तिम तथा मुख्य समाज के सभी कार्यों के बीच परस्पर सम्बन्ध और कारणात्मक द्विध का एक ऐसा सम्बन्ध-सूत्र है जो उन्हें एक साथ बने रहता है। यद्यपि, इसका उत्पत्तिक, व्यापारी तथा अन्य सभी चीजों के अन्तिम एक दूसरे के एक सम्पूर्ण समाज के अन्तर्गत के अन्तिम करती है।

अपेक्षाकृत कम हो और जिनके द्वारा सार्वजनिक हित की अधिक वृद्धि हो तो उनकी प्रगति को रोकने के लिए किये गये सारे प्रयत्न, व्यर्थ सिद्ध होंगे। समय के समान बुद्धि भी स्वयं अपना काम कर लेगी, और हित के सम्मुख पूर्ण चारणा की हार होगी। यदि सार्वजनिक शांति संस्कृति और राष्ट्रिय मनुष्य के भाव्य में है तो सरकारों की प्रगति में अंतिम के द्वारा ही उनकी प्रगति सम्भव है। सभी राजतन्त्रीय सरकारें सैनिक-सरकारें हैं। युद्ध करना उनका व्यापार है। सुटना तथा राजस्व प्राप्त करना उनका उद्देश्य है। जब तक ऐसी सरकारों का अस्तित्व रहेगा तब तक शांति एक दिन के लिए भी पूर्ण सुरक्षित नहीं है।

मानवीय दुर्गति के शोचपूर्ण चित्र तथा अल्पव्ययीन विनाश के आर्थिक विनाश के अतिरिक्त राजतन्त्रीय सरकारों का इतिहास और क्या है? युद्ध और मानव-हत्याओं से भरा कर के सरकारें कुछ समय के लिए विधाय सेने लगीं और उनके विनाश को साक्षि कहना जाने लगा। निश्चित रूप से ईश्वर का अविनाश मनुष्य को ऐसी स्थिति में रखने का नहीं कर और यदि यही राजतन्त्र है तो इसे मनुष्यों के पाशों में से एक मानना उचित ही रहा।

विश्व में पहले जितनी व्यथितियाँ हुईं उनमें कोई ऐसी बात नहीं थी जो मानव-समुदाय को अपनी ओर आकृष्ट कर सके। उनके द्वारा बहुत व्यथितों और कामों में परिवर्तन हुए, सिद्धांतों में नहीं। युग के कई सामान्य कार्यों के समान उनके उद्भव और विनाश हुए। हम इस समय जो क्रान्तियाँ देखते हैं, उन्हें प्रतिक्रिया कहना अनुपपन्न न होगा।

कभी समय या जगह कि विनाश और व्यापार ने मनुष्य के अधिकार छीन लिए जिन्हें वह फिर से प्राप्त कर रहा है। मनुष्य के सभी कामों का सर्वप्रथम उत्पन्न और पतन परस्पर विरुद्ध दिशाओं में होता रहता है। इस दिग्दर्श में भी बढ़ी हो रहा है। समसार के बल पर सरकारें जिस क्षेत्र के साथ पूर्व से पश्चिम की ओर जाती थी उसकी अपेक्षा अधिक क्षेत्र के साथ, नैतिक सिद्धांतों सार्वजनिक शांति-व्यवस्था तथा मनुष्यों के अधिकार एवं वैयक्त अधिकारों पर आधारित सरकार पश्चिम से पूर्व की ओर जा रही है। अपनी प्रगति द्वारा यह सरकार शिथिल व्यक्तियों को नहीं बरत रही का अपनी ओर आकृष्ट करती है और मानव-जाति के सभी युग की ओर संवेद्य कर रही है।

अमेरिका में कुछ आरम्भ होने के दो वर्ष पूर्व से तथा अमेरिका के कई राज्यों में तो इससे भी पहले के सरकार का कोई व्यवस्थित स्वल्प नहीं था। प्राचीन सरकारें जमात कर ही नहीं और देश अपनी रक्षा में अपना स्वल्प था कि वह नवीन सरकार की स्थापना की ओर ध्यान नहीं दे पाया था। फिर भी इस कामावधि में यूरोप के विहीन भी देश के समान अमेरिका में व्यवस्था और अनुस्यूता नहीं रही।

असुख में अपने को परिस्थितियों के अनुकूल बना देने की क्षमता होती है। जमान में विविध प्रकार की योजनाएँ और साधन एक ही अपेक्षा अधिक होते हैं और इसलिए हमें व्यक्ति की अपेक्षा अपूर्वतः प्रकृतिक शक्तों की अधिक होती है। जिस अलौकिक सरकार को जमात कर दिया जाता है, उसी अलौकिक कार्य करना आरम्भ कर देता है। एक सामान्य संगठन उत्पन्न होता है और सामान्य हितों के कारण सार्वजनिक सुरक्षा नहीं रहनी है।

यह कहना कि औपचारिक 'शासन' का अनुस्यूत करना समाज को बंध करना है ज्ञान से पराधीन है। वास्तविकता यह है कि औपचारिक 'सरकार' का अनुस्यूत करने पर समाज अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्र होता है। समाज व्यवस्था का वह समुल्लेख अर्थ जो समाज में सरकार को और दिया था 'सरकार' के बंध होने पर पुनः समाज के पास बँट जाता है और उसके सामर्थ्य के कार्य करने लगता है।

असुख अपनी प्राकृतिक शक्ति और वास्तविकता के कारण सामाजिक और अन्य जीवन के सम्यक्त होते हैं। अतः उनके जीवन में व्यवहार में निष्ठान्तों का प्राचुर्य रहता है जो सरकार-विषयक सभी परिवर्तनों में जिन्हें वे सुविचारमय या आवश्यक समझते हैं उनका बंध-व्यवस्था करता है। जीवन में असुख स्वाभाविक है। सामाजिक प्राप्ति है कि इसे समाज के अन्तर्गत रहना निश्चित आवश्यक है।

औपचारिक 'सरकार' सम्यक जीवन का पराधीन है। मानव-बुद्धि ठाढ़ बाँटकर सर्वोत्तम सरकार भी नहीं प्रस्थापित की जाय वह वास्तविकता की अपेक्षा मान और विचार की वस्तु अधिक होती है। समाज और सम्यक्त के महान् एवं मौलिक सिद्धान्त पर, सार्वभौमिक रूप में स्वीकृत सामान्य व्यवहार पर तथा हित के विरुद्ध जमात पर, जो सभी सीतों में है होता हुआ सम्यक समुच्चों

सामान्य हित धनके कामों का नियमन करता है वे ही उन्ने कायून है। सामान्य व्यवहार जिस कानूनों को निर्दिष्ट करते हैं वे सरकार के कानूनों की श्रेणी अधिक प्रभावशाली होते हैं। संक्षेप में समाज स्वयं अपने लिए प्रायः वह सभी कुछ कर लेता है जिसका शेष सरकार को निम्नता है।

सरकार की कितनी मात्रा और कैसी प्रकृति मनुष्य के लिए उपरिष्ठ है यह समझने के लिए आवश्यक है कि हम मनुष्य के चरित्र पर विचार करें। प्रकृति ने मनुष्य को सामाजिक जीवन के लिए रचा है इसलिये उसने उसे सामाजिक जीवन के अनुकूल बनाया भी है। सभी दशाओं में प्रकृति ने मनुष्य की आवश्यकताओं को उसकी व्यक्तिगत दक्षिण से अधिष्ठित रखा है। कोई भी व्यक्ति समाज के सहयोग के बिना अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में समर्थ नहीं है और प्रत्येक व्यक्ति की वे आवश्यकताएँ सभी को समाज में खाने के लिए विवश कर देती हैं शीघ्र उसी प्राकृतिक संघ से जिस प्रकार पुस्तकार्थ्य-अविविध केन्द्र की ओर संयुक्त होती है।

प्रकृति ने न केवल आवश्यकताओं के वैविध्य द्वारा मनुष्य को समाज में खाने के लिए विवश किया वरन् उसने मनुष्य के भीतर तैसी सामाजिक स्नेह प्रकृति निहित कर रखी है जो यद्यपि मनुष्य के अस्तित्व के लिए नहीं किन्तु उसके आनन्द के लिए आवश्यक है। मानव-जीवन में ऐसा कोई समय नहीं है जब कि समाज के प्रति मनुष्य का स्नेह समाप्त हो जाय। इस सामाजिक स्नेह का अस्तित्व मानव-अस्तित्व से साथ साथ रहता है।

यदि हम ध्यानपूर्वक मनुष्य की रचना उसकी आवश्यकताओं के वैविध्य, पारस्परिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विभिन्न मनसों की विभिन्न प्रकार की युक्ति और समाज निर्माण तथा उसके परिणामस्वरूप होने वाले हितों की सुरक्षा-सम्बन्धी मनुष्य की प्रकृति पर विचार करें तो हम सुगमतापूर्वक यह ज्ञान सक्रो कि जिसे हम सरकार कहते हैं उसका अधिनायक बनाकर रख सकते हैं।

जिन स्थितियों में समाज और सम्पत्ता गुणियापूर्वक कार्य करने में समर्थ नहीं है, केवल उन्ही स्थितियों में सरकार की आवश्यकता है। इन बातों को धिष्ठ करने के लिए पर्याप्त प्रमाण दिये जा सकते हैं कि सरकार से जो कुछ उपयोगी वस्तु प्राप्य हो सकती है वह बिना सरकार के समाज की सामान्य सहमति के द्वारा प्राप्त की गयी है।

यही वा मरम् 'सरकार' स्वयं उनका कारण थी। समाज को संरक्षित करने के स्थान पर उसने उसे विनाशित कर दिया। उसने समाज को उसके प्राकृतिक सम्बन्धों से वंचित कर दिया और अस्तित्वों तथा सम्बन्धताओं को नष्ट दिया जो सम्बन्ध न हुआ होता।

जिन लोगों ने सभी प्रकार के मनुष्य व्यापार अथवा उन सभी कामों के लिए एकत्र होते हैं जिनसे सरकार का कोई सम्बन्ध नहीं है वा जिन लोगों में है केवल सामाजिक सिद्धांतों के आधार पर कार्य करते हैं, उनमें विविध पक्ष सम्बन्ध स्वाभाविक रूप से संरक्षित हो जाते हैं। तुलनात्मक दृष्टि से देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि व्यवस्था के साधन अथवा विनिर्मित होना तो दूर रहा सरकारें प्रायः उनके विनाश का कारण होती हैं। उन् १७८८ ई के विप्लव के कारण केवल एक पक्षपाती के अवरोध से, जिन्हें सरकार ने स्वयं प्रोत्साहन दिया था। किन्तु इसी प्रकार के विप्लव में अन्य कारण भी हैं।

क्यों को विभिन्न साधनों का आना बहना कर कितना ही परिवर्तित रूप क्यों न दे दिया जाय किन्तु वे अपने अधिकार और विपक्ष के परिवर्तनों को लेकर अनिवार्यता प्रकट हो ही जाते हैं। उनके द्वारा अनुमान के अधिवास अर्थात् वसतिगृह और अवरोध का विचार बन जाते हैं, अतः वे निरन्तर विरोध की स्थिति में रहते हैं, और व्यक्तिगतता के आग के साधनों के वंचित रहते हैं, इस लिए वे हीन ही अन्धविश्वास में प्रवृत्त हो जाते हैं। निरर्थक दये का प्रत्यक्ष कारण जाई हुआ भी हो किन्तु सामाजिक कारण कुछ का अभाव ही होता है। इससे प्रकट होता है कि सरकार की पद्धति में कोई ऐसी भुक्ति है जो उस मूल की प्रतिष्ठा होती है और जिसके द्वारा समाज व्यवस्थाओं के बचा रहता है।

उस ठेके के अंतर्गत होता है। अमेरिका का उदाहरण हमें उस विचारों की पुष्टि करता है। यदि विश्व में ऐसा कोई देश है, जहाँ सामान्य मनुष्य के अनुकार व्यवस्था की सबसे कम आधा की जा सकती है, तो वह अमेरिका है। विभिन्न राष्ट्रों के आकर लोग यहाँ जाते हैं वे सरकार की विभिन्न प्रवृत्ति और स्वभावों के सम्बन्ध हैं उनकी भाषाएँ और उनकी उपासना-पद्धतियाँ भिन्न-भिन्न हैं। अतः विभिन्न प्रकार के इन लोगों का एक होना सामाजिक जीवन होना। किन्तु मनुष्य के अधिकारों तथा सामाजिक सिद्धांतों के आधार पर 'सरकार-निर्माण' की आवश्यकता किन्ना द्वारा सभी परिवर्तनों दूर हो गयी और

के सम्पूर्ण समुदाय को शक्ति प्रदान करता है। व्यक्ति की और पूरे समाज की सुरक्षा एवं सन्तति निर्भर है। सर्वाधिक व्यवस्थित सरकार के कार्यों द्वारा भी जो कुछ सुरक्षा एवं सन्तति प्राप्त होती है वह अपेक्षाकृत आयत्न होती है।

सम्यक्ता जितनी पूर्ण होगी सरकार की आवश्यकता उतनी ही कम होगी, क्योंकि वही माया में वह अपने कार्यों का नियमन करके शासन करेगा? किन्तु सरकारों का कार्य इसके विपरीत होता है। उनका व्यव उस माया में बढ़ता है जिस माया में उसे कम होना चाहिए। सम्यक् जीवन के लिए केवल छोटे से सामान्य कानूनों की आवश्यकता है और उनकी इतनी सार्वजनिक उपयोगिता होती है कि चाहे उन्हें सरकार द्वारा कार्यान्वित किया जाय या न किया जाय उसका प्रभाव प्रायः वही रहेगा। यदि हम इस बात पर विचार करें कि वे कौन-कौन से सिद्धान्त हैं जो मनुष्यों को सर्वप्रथम समाज में आने के लिए विवश करते हैं और वे कौन-कौन सी प्रवृत्तियाँ हैं जो बाह्य में उनके पारस्परिक सम्बन्धों का नियमन करती हैं तो इसके पहले कि हम सरकार' तक पहुँचें हमें यह ज्ञात हो जाना कि समाज के विभिन्न भाग आपस की प्राकृतिक क्रिया द्वारा प्रायः सम्पूर्ण कार्य निष्पादित कर लेते हैं।

मनुष्य उन सभी विषयों में उल्लेख नहीं अधिक संगति-प्रिय प्राणी है जिसमें कि वह अपने को समझता है जबकि सरकार उल्लेख जितना विरक्त करने की अपेक्षा रक्त सकती है। समाज के बड़े-बड़े कानून प्रकृति के नियम हैं। व्यक्तियों के बीच घसका राहों के बीच होने वाले वाणिज्य के कानून पारस्परिक हित के नियम हैं। उनका पालन इसलिये नहीं होता कि सम्बन्धित पक्षों की सरकारों ने उन्हें मानने के लिए कानून बनाये हैं परन्तु इसलिये कि वैसा करने से उनके हितों का सम्पादन होता है।

किन्तु सरकार की क्रिया द्वारा प्रायः समाज की यह प्राकृतिक प्रवृत्ति व्यर्थस्थित जबकि मरु कर दी जाती है। जब सरकार सामाजिक सिद्धान्तों पर आधारित न होकर अपनी स्वतंत्र सत्ता स्वीकार करके पक्षपात और व्यापार के द्वारा कार्य करने लगती है तो वह उन दुराचारों का कारण बन सकती है जिन्हें उसे दौकना चाहिए।

यदि हम ईर्ष्या में समय-समय पर होने वाले दंगों एवं विनाशकारी पर विचार करें तो हमें यह ज्ञात होना कि उनका कारण सरकार' का अभाव

रहीरत करके यह देखा चाहिए कि इन सरकारों के विद्रोह और व्यवहार किस प्रकार के हैं।

सरकार की प्राचीन और नवीन पद्धतियाँ

प्राचीन सरकारों को प्रारम्भ करने वाले आचार्यगण विद्रोहों तथा उक्त स्थिति में जहाँ तक समाज संरक्षित और वाणिज्य मालम-वाप्ति को ले जाने में कर्म हैं, मित्रता अंतर है उसका सम्यक नहीं नहीं हो सकता। प्राचीन पद्धति को सरकार स्वयं अपनी उन्नति के लिए सत्ता प्रकट करती है और नयी पद्धति को सरकार को समाज के कार्यात्मिक हित के लिए अधिकार छोड़ जाता है। अक्सर प्रकार की सरकार कुछ भी जवाब को अनुमति रख कर अपना बोधन करती है और दूसरे प्रकार की सरकार राष्ट्र की सम्मान करने के वास्तविक शासन-संरक्षण धर्म-सम्मान को प्रोत्साहन देती है। पृथ्वी राष्ट्रीय पूर्वधार लोगों को वन प्रदान करती है और दूसरी राष्ट्रीय वाणिज्य के शासन के रूप में राष्ट्रीय समाज को प्रवर्तित प्रदान करती है। एक राज्य (Republic) की भाषा है राष्ट्र की सम्यक्ता को मायती है और दूसरी करों की सम्पत्ति आवश्यक माध्य द्वारा अपनी उत्तमता सिद्ध करती है।

वर्क ने 'पुराने और नए सिद्धों के विषय में' कहा की है। यदि इन धर्म के नामों और वेदों के ले करना अनिवार्य कर दें तो मैं उनके आत्म में आश्चर्य नहीं अनुवा। वर्क के लिए नहीं वरन् एबे-सेयन (Abbe Siccyen) के लिए है इस आशय को सिद्ध रहा है। इन दूसरे सम्मान के नाम राजप्रीव सरकार के विषय में वेद विचार पड़ते हैं, और पूर्ण प्राचीन और नवीन सरकारों की तुलना करते समय राजप्रीव सरकार की चर्चा स्वाभाविक रूप से बढ़ पड़ती है इस लिए मैं इनके समुच्च अपने विचारों को रखने में इस अक्षर का उपयोग कर रहा हूँ। समय-समय पर वह का उल्लेख करता रहूँगा।

यह सिद्ध किया जा सकता है कि आज जिसे सरकार की नवीन पद्धति कहते हैं वह मनुष्य के भौतिक एवं स्वाभाविक अधिकारों पर आधारित होने के लिये निश्चयन-जनी पद्धतियों से प्राचीन है। हिन्दू, पूर्ण आस्थाधार और धर्म ने वर की धर्मात्मिकों तक इन अधिकारों के प्रयोग को रोक रखा था इसलिए प्राचीन करने की अपेक्षा नये नवीन गहना ही मेरे की हृष्टि से अधिक अधिक होता।

अमेरिका के सभी भाग हारिक एकरता के मूख में बँध गये हैं। वहाँ न तो नियंत्रण कीड़त है और न धनियों को अनायास अधिकार प्राप्त है। उनके घर मोटे हैं क्योंकि उनकी सरकार ग्यायधीन है और जोकि उन्हें दीन बनाने की कोई चीज नहीं है इस लिए वहाँ उपद्रव अथवा अव्यवस्था के कारण उत्पन्न होने का प्रश्न ही नहीं उठता।

बर्क के समान सत्यवैज्ञानिक व्यक्ति ऐसे जनों पर किस प्रकार शासन होना चाहिए इसकी कोई योजना दृढ़ निकासे होता। उसकी यह मान्यता होती कि कुछ को बाल-कसाद द्वारा बच्चों को बल प्रयोग द्वारा और सबको किसी आदिष्ट योजना द्वारा शासित करना चाहिए। यह वह कहता कि ज्ञानमत्ता पर सारने के लिए अपूर्व बुद्धि को किराय पर लिया जाना चाहिए और सामारण लोगों को मुख्य करने के लिए तबक-मदक का प्रदर्शन करना चाहिए। अपने जन्मेपलों के आधिपत्य में खोया हुआ वह व्यक्ति व्यवस्था-सम्बन्धी नाना प्रकार के निरव्यवस्थित करने करता हुआ अन्त में प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होने वाले सरस और सुखमय मार्ग की उपेक्षा कर बैठता।

अमेरिका की अति के महान सार्यों में से एक भाग यह है कि उसने सिद्धांतों का जन्मेपण किया और सरकारों के उस का पक्कापोड़ कर दिया। अब तक जितनी अतिवर्ति हुई थी वे राष्ट्र के बिरतुन चरातम पर नहीं चरन् केवल राज दरबार की परिधि के भीतर ही हुई। इन अतिवर्तियों के समय पर के अस्थिर सदैव दरबारियों के वर्म के होते रहे हैं और उनकी सुधार-सम्बन्धी दृष्टि उन्हें को कुछ रही हो उन्होंने सावधानी के साथ उस पैरे के पाल को बचाये रखा।

सभी दशाओं में उन्होंने सरकार को रहस्यों द्वारा निहित एक ऐसी वस्तु के रूप में जिसे केवल वे ही समझ सकते थे प्रस्तुत करने की सावधानी रखी। उन्होंने इस राय की कि सरकार सामाजिक सिद्धांतों के अनुसार काम करने वाले राष्ट्रीय संघ के अतिरिक्त को कुछ नहीं है राष्ट्र की समझ से परे रखा यद्यपि इसे जान लेना राष्ट्र के लिए ही लाभप्रद था।

अब तक मैंने यह विचारने का प्रयत्न किया है कि मनुष्य की सामाजिक और सम्पत्ता की स्थिति अपने शासन और सुशा के लिए प्रायः सभी आवश्यक कार्यों को सम्पन्न करने में सक्षम है। इसके बावजूद हमें वर्तमान प्राचीन सरकारों का

की इस बात के पुकारना चाहिए क्योंकि यह मानविक समसमन की पद्धति है। अधिकतमपूर्ण रूप के यह पद्धति मानव-भारत के अनेक प्रकार की एक ही पर के लिए स्वीकार करती है। मुदाई और अन्धकार, अज्ञान और अज्ञान दोनों में सभी प्रकार के परिवर्तनों को बाह्य के 'कु' हो या 'कु' यह पद्धति एक ही प्रभाव पर रखती है। एक के बाद दूसरे रास्ता नहीं पर बैठने है विवेकशीलों के मन में नहीं। जगत् के मन में। उनके मानविक अथवा नैतिक परिवर्तनों पर विचार नहीं किया जाता है।

वर्तक राज्यधीन देशों में स्वयं सरकार इस प्रकार की मुख्य 'समसमन पद्धति' पर निर्भर होती है। तो वही के मनुष्यों की मुख्य मानविक स्थिति पर क्या हम आशय कर सकते हैं? इस प्रकार की सरकार बिना प्रकृति की नहीं होती। आज यह एक प्रकार की है, कम बलवत् करती है। अनेक उत्पत्तिकारियों की प्रकृति के अनुसार इसकी प्रकृति भी बरकती रहती है। यह अलोक भाषों और अलोकिक कदमों के माध्यम से काम करने वाली सरकार है। यह सिन्धुओं, कुबर्को और निर्बल बुद्धों अथवा सभी प्रकार के मनुष्यों द्वारा धारित होती है। सरकार की यह पद्धति प्रकृति के आशय के काम के विपरीत काम करती है। क्योंकि समय-समय पर यह अर्थों की ग्रीष्म के अन्तर और अथवा की अर्थव्यवस्था बुद्धि की ग्रीष्म बुद्धि एवं अनुभव के अन्तर रख देती है। अर्थव्यवस्था में आनुवंशिक अर्थव्यवस्था विपरीत होना चाहिए है। अर्थव्यवस्था अथवा अर्थव्यवस्था नहीं हो सकती।

यदि प्रकृति का यह निर्णय होता अथवा यह बीबी चोखता होती और मनुष्य उसे मानता कि अर्थव्यवस्था और बुद्धि का आनुवंशिक उत्पत्तिकार से अर्थव्यवस्था अर्थव्यवस्था है। तो आनुवंशिक अर्थव्यवस्था के विषय को भूल नष्टा जाता है। अर्थव्यवस्था विपरीत हो जाता। किन्तु अब हम यह देखते हैं कि प्रकृति इस प्रकार कार्य करती है। मानो यह आनुवंशिक पद्धति की अस्वीकार करती हुई अर्थव्यवस्था करती है। अब हम यह देखते हैं कि सभी देशों में उत्पत्तिकारियों के मानविक और मानव-बुद्धि के आभाव के अन्तर है। अब हम देखते हैं कि एक रास्ता अर्थव्यवस्था है, दूसरा मूल्य तीव्रता मानव और बीबी एक साथ ही अर्थव्यवस्था अर्थव्यवस्था और मानव बीबी है। तो आनुवंशिक अर्थव्यवस्था अर्थव्यवस्था अर्थव्यवस्था हो जाता है।

इन दो पद्धतियों का प्रथम सामान्य अन्तर यह है कि प्राचीन सरकार अंशतः या पूर्णतः आनुवंशिक होती है और नवीन सरकार विच्छिन्न प्रतिनिधित्वात्मक होती है तथा यह सभी आनुवंशिक सरकारों को निम्नांकित कारणों से अस्वीकार करती है।

(१) आनुवंशिक सरकार मानव-जाति पर लायी गयी सरकार है।

(२) और आनुवंशिक सरकार उन सभी कामों के लिए अनुपयुक्त है जिनके लिए सरकार की आवश्यकता पड़ती है।

जहाँ तक पहले कारण का सम्बन्ध है यह सिद्ध नहीं किया जा सकता कि अमुक अधिकार के बात पर आनुवंशिक सरकार स्थापित हुई। उसे स्थापित करने का अधिकार मानव-शक्ति की परिधि के भीतर भी नहीं है। अस्तित्व अधिकार का जहाँ तक प्रश्न है मनुष्य को अपनी संस्थान के ऊपर कोई अधिकार नहीं है और इसलिए किसी एक व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के समूह को आनुवंशिक सरकार की स्थापना करने का अधिकार न था और नहीं सकता है। मरने के बाद यदि मनुष्य के स्वाम पर स्वयं हम सोच पुन उत्पन्न होने वाले हों तो भी हमें इस समय उन अधिकारों को स्वयं से छीनने का कोई अधिकार नहीं है जो दूसरे जन्म में हमें प्राप्त होंगे। फिर किन्तु आचार पर, हम क्यों के उन अधिकारों को छीन सकते हैं ?

अब दूसरी बात पर विचार कीजिए अर्थात् इस बात पर विचार कीजिए कि आनुवंशिक सरकार उन सभी कामों के लिए अनुपयुक्त है जिनके लिए सरकार की आवश्यकता पड़ती है। पहले हम यह देखें कि सरकार वास्तव में है क्या ? फिर इसको तुलना उन परिस्थितियों के साथ करें जिनके अधीन आनुवंशिक सरकार रहती है। सरकार का सर्वसा प्रीति रहना चाहिए। उतका निर्माण इस प्रकार होना चाहिए कि वह उन सभी आकस्मिक घटनाओं को नियंत्रण कर सके जो मनुष्य का ध्यक्ष के रूप में अपने अधीन रखती है। चूंकि आनुवंशिक उत्तराधिकार उन सभी आकस्मिक घटनाओं के अधीन है इसलिए वह सरकार की सभी पद्धतियों में सर्वाधिक अनिश्चित और अप्रभु है।

‘मनुष्य के अधिकारों’ को कुछ लोगों ने समस्तान पद्धति के नाम से संबोधित किया है। किन्तु वास्तव में केवल आनुवंशिक राजतन्त्रीय पद्धति

एबे-सेएस (Abbe Sicyes) के लिए मुझे यह तर्क प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं है। उन्होंने आनुवंशिक सरकार के विषय में अपना मत देकर मुझे इस कष्ट से पहले ही बचा लिया है। वे कहते हैं—यदि यह पूछा जाय कि आनुवंशिक अधिकार के बारे में मेरा क्या मत है तो निस्संकोच मैं यह उत्तर दूँगा कि किसी अधिकार जबका पद को विरासत का स्वरूप देना अच्छे सिद्धान्त के रूप में वास्तविक प्रतिनिधित्व के नियमों की बराबरी नहीं कर सकता। इस अर्थ में सरकार को विरासत जिस मात्रा में सिद्धान्त की शक्तिमा है उसी मात्रा में वह समाज के ऊपर अत्याचार भी है। किन्तु यदि निर्वाचन द्वारा स्थापित सभी राजतन्त्रीय सरकारों और अधिनायकतन्त्रीय सरकारों के इतिहास पर हम थोड़ा विचार करें तो क्या एक भी ऐसा उदाहरण है जहाँ निर्वाचन-पद्धति आनुवंशिक उत्तराधिकार-पद्धति की अपेक्षा अधिक बुरी नहीं रही है?

इस पर विचार करना कि दो में से कौन अपेक्षाकृत अधिक त्रुटिपूर्ण पद्धति है दोनों को त्रुटिपूर्ण मान लेना है, और इस विषय में हम सब सहमत हैं। एबे-सेएस (Abbe Sicyes) ने उन दोनों में से जिस पद्धति को श्रेष्ठता प्रदान की है वह वास्तव में उसकी श्रेष्ठता नहीं बरन् निम्ना है। किन्तु इस विषय पर इस प्रकार का तर्क असाध्य है क्योंकि यह तक अन्तर्दृष्टि पर अभियोक्त के रूप में परिणत हो जाता है। मानो, सरकार के विषय में देश ने मनुष्यों को उन दो बुराईयों जिनमें से श्रेष्ठ बुराई को एबे (Abbe) ने सिद्धान्त की कालिमा और समाज के ऊपर अत्याचार माना है, में से एक को चुनने के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग ही नहीं छोड़ा है।

राजतन्त्रीय सरकार ने आज तक विश्व में जितने बुराचार किये हैं उन पर यदि विचार न किया जाय तो भी उसको आनुवंशिक सम्पत्ति बना देना अतैनिक सरकार (Civil Government) के रूप में उसकी ध्येयता का सर्वाधिक प्रमादरासी प्रमाण है। जिस कार्य के लिए योग्यताओं और बुद्धि की आवश्यकता है, क्या हमें उसे पतृक सम्पत्ति मानना चाहिये? जिस कार्य के लिए योग्यताएँ और बुद्धि आवश्यक नहीं हैं, वह चाहे जो कुछ हो अनावश्यक और ध्येय है।

आनुवंशिक उत्तराधिकार राजतन्त्र का उपहास है। इस आनुवंशिक

ग्यों का। इनके सरकार के सामान्य विधीय एवं स्वयं का बीच होता है। जब इन प्रजातन्त्रों में जनसंख्या की वृद्धि हुई तथा साम्राज्य का विस्तार हुआ तो प्रजातन्त्र का सरल स्वयं व्यवहारिक और तबूत ब्रिड हुआ। इस समय लोगों को प्रतिनिधित्व-प्रणति का ज्ञान नहीं था। परिणाम यह हुआ कि वे प्रजा-तन्त्रीय सरकारें या तो करने उद्यमान थे बिना कर राजतन्त्रीय सरकारें बन गयीं अथवा उस समय प्रचलित अन्य सरकारों से बन गयीं।

यदि इस समय लोगों को प्रतिनिधित्व-प्रणति का ज्ञान होता जैसा कि इस समय हमें उसका ज्ञान है, तो इस बात पर विचार करने का कोई कारण नहीं है कि जिन्हें इन राजतन्त्रीय और कुलीनतन्त्रीय सरकारें पड़ते हैं वे सत्तिल में आ पायीं। जब साम्राज्य का इतना अधिक विस्तार हो गया और जनसंख्या इतनी अधिक हो गयी कि सरल प्रजातन्त्रीय सरकार प्रबन्ध करने में असमर्थ छिड़ गई तो उस समय समाज के विविध भागों को एक करने की प्रणति के अभाव तथा मजदूरों और किसानों की विविध एवं ऐशान्तिक स्थिति ने इन अजातिभेद सरकार-प्रणतियों को उत्पन्न होने का अवसर प्रदान किया।

जनश्रियों के विषय कूड़ा-करकट में सरकार का नियम बना दिया गया है जो ठीक करना आवश्यक है। इसलिए वे अब आगे कुछ अन्य प्रकार की सरकारों को नहीं करते।

राजदरबारियों और उनकी सरकारों की राजनीति उस सरकार की विधा करने की रही है जो उनकी दृष्टि में जनतन्त्रीय सरकार है। किन्तु जनतन्त्रीय सरकार बना की जगह गया है यह समझने का उन्होंने प्रयत्न नहीं किया। बाह्य इन इस पर विचार करें।

जिसे 'जनतन्त्र' (Republic) कहा जाता है वह सरकार का प्रकार विशेष नहीं है। जनतन्त्र सम्पूर्ण-उच्च अविभाज्य मनु या लक्ष्य का वैधित्व है जिसके लिए सरकार का निर्माण होना चाहिए और जिस पर उसे कार्य करना है। 'जनतन्त्र' अंग्रेजी राज्य रिपब्लिक (Republic) का अर्थ है। अंग्रेजी में 'रिपब्लिक' (जनतन्त्र) का अर्थ है 'मौक-कार्य' या 'मौक-हित' जगह यदि इसका गार्हिक अनुवाद किया जाय तो इसका अर्थ होता 'मौक-वस्तु'।

इस राज्य का पूरा भूखण्ड है, क्योंकि इससे यह पता चलता है कि सरकार के हुए और कार्य किन्तु प्रकार से होने चाहिए। इस अर्थ में यह राज्य (अर्थात्, 'जन-

नहीं करती; बरन् उन्हें प्रकाश में ला देती है। मनुष्य में बुद्धि की ऐसी सुल राशि है जो यदि उसे काम करने के लिए उत्तमिष्ठ म हिमा पया तो उही विविध दशा में मनुष्य के साथ मृग्यु के धर्म में बिलीन हो आबयो। सभाय के हित के लिए उसकी सभी शक्तियों को कार्य में निबोधित करना चाहिए। अतः सरकार की रचना इस प्रकार की हो बिससे शान्त एवं नियमित क्रिया शाय के सभी योग्यताएँ प्रकाश में आने का कामि के अवसर पर अवश्यमेव प्रकट हुमा करती है।

मानुष्यिक सरकार की नि सरब दशा में उपयुक्त योग्यताओं का प्रकटन नहीं हो सकता केवल इसलिए नहीं कि यह उन्हें प्रकाश में आने से रोकती है बरन् इसलिये भी कि यह शक्तिहीन बनाने की दिशा में कार्य करती है। किसी राष्ट्र का मस्तिष्क जब मानुष्यिक अधिकारों के सभाय सरकार विपयक किसी राजनैतिक व्यवस्था को स्वीकार कर लेता है तो वह सभी अन्य विषयों और कार्यों में अपनी शक्तियों का अधिकोश लो र्थता है।

मानुष्यिक उत्तराधिकार के अनुसार अज्ञान और शान दोनों के प्रति एक ही प्रकार की आशाकारिता आवश्यक है। जब मानव मस्तिष्क एक प्रकारका अविवेकपूर्ण सम्मान प्रकट कर सकता है तो वह मस्तिष्क की प्रतिष्ठा से नीचे सिपक जाता है। फिर केवल तुच्छ बातों में ही बड़ा होने योग्य रह जाता है। वह स्वयं अपने साथ निश्वासपात करता है और उन चेतनाओं का पता पोट लेता है जो वास्तविकता का पता लगाने की प्रेरणा देती है।

यद्यपि प्राचीन सरकारें मनुष्य की स्थिति का दखनीय विन प्रस्तुत करती हैं, किन्तु एक ऐसी प्राचीन सरकार है जो अन्य सभी से विन है। येर अविप्राय है अनीनिय के प्रजातन्त्र से। इतिहास ने जो कुछ प्रस्तुत किया है उसमें सर्वाधिक प्रचलनीय और कम निम्दनीय तत्त्व ऐसी महान बलापारण प्रजा तन्त्र में दृष्टिगोचर होते हैं।

'बर्क' की सरकार के मौलिक सिद्धांतों का इन्का अल्प ज्ञान है कि वे प्रजातन्त्र (Democracy) और प्रतिनिधित्व को एक-ता समझते हैं। प्रतिनिधित्व प्राचीन प्रजातन्त्रों को अज्ञात था। उन दिनों जनसमुदाय एकजिठ होता था और (व्याकरण के प्रथम पुरुष के रूप में) नियम बनाता था।

प्राचीन पुन का सरल प्रजातन्त्र सामैजिक समा के अतिरिक्त और कुछ

थीं बा। इनके सरकार के सामान्य सिद्धांत एवं स्वल्प का बोध होता है। जब इन प्रजातन्त्रों में जनतन्त्रता की बुझि हुई तथा सामान्य का विस्तार हुआ तो प्रजातन्त्र का सरल स्वल्प अध्यावहारिक और स्थूल तिष्ठ हुआ। उस समय लोगों को प्रतिनिधित्व-प्रणति का ज्ञान नहीं था। परिणाम यह हुआ कि वे प्रजातन्त्रीय सरकारों का तो माने उस स्थान से फिर कर राजतन्त्रीय सरकारें बन गयीं बरबात सब प्रवृत्ति अल्प सरकारों में खप गयीं।

यदि उस समय लोगों को प्रतिनिधित्व-प्रणति का ज्ञान होता बीता कि इस सब होने इतका ज्ञान है तो इस बात का विरोध करने का कोई कारण नहीं है कि बिना इस राजतन्त्रीय और कुलीनतन्त्रीय सरकारों काते है, वे नित्य में जा पातीं। जब सामान्य का इतना अधिक विस्तार हो गया और जनतन्त्रा तन्त्री अधिक हो गयी कि जल प्रजातन्त्रीय सरकार प्रभाव करने में बलवत् तिष्ठ हुई तो उस समय समाज के विविध भागों की एक करने की प्रवृत्ति के प्रभाव तथा नगरियों और बरजानों की विविध एवं वैकान्ठिक स्थिति ने उन सामाजिक सरकार-प्रणतियों को उत्पन्न होने का अवसर प्रदाय किया।

प्रतिवर्ष के जिस बूझा-बरकट में सरकार का विषय बाल दिया गया है, उसे साफ करना आवश्यक है। इसलिये मैं अब जाने कुछ अन्य प्रकार की सरकारों की चर्चा करूँगा।

राजतन्त्रियों और उनकी सरकारों की राजनीति इस सरकार की विन्ता करने की रही है जो जनतन्त्री इति है जनतन्त्रीय सरकार है। किन्तु जनतन्त्रीय सरकार क्या भी बरबात क्या है, वह बरबातने का कहूँगे प्रयत्न नहीं किया। बावद, हम इस पर विचार करें।

‘जिसे जनतन्त्र’ (Republic) कहा जाता है वह सरकार का प्रकार विशेष नहीं है। जनतन्त्र सम्पूर्णतः उस अनिष्टाय वस्तु या लक्ष्य का परिचिन्त है जिसके लिए सरकार का निर्माण होता चाहिए और जिस पर उसे कार्य करना है। ‘जनतन्त्र’ अर्थात् राज्य रिपब्लिक (Republic) का अर्थ है। अर्थात् ‘रिपब्लिक’ (जनतन्त्र) का अर्थ है ‘लोक-कार्य’ या ‘लोक-हित’ बरबात यदि इसका सामाजिक अनुवाद किया जाय तो इसका अर्थ होता ‘लोक-वस्तु’।

इस अर्थ का पूरा अन्तर है, क्योंकि इससे यह पता चलता है कि सरकार के इस और वार्त्त किन प्रकार के होने चाहिये। इस अर्थ में यह अर्थ (अर्थात्, ‘जन

तंत्र') राजतंत्र से प्रकृतिगत विपरीत है। राजतंत्र का अर्थ है एक व्यक्ति की निरंकुश शक्ति, जिसका उपयोग वह लोक-हित के लिए नहीं, बल्कि 'निज-हित' के लिए करता है।

प्रत्येक सरकार—जो 'जनतंत्र' के सिद्धांतों पर काम करती या दूसरे शब्दों में जो 'लोक-हित' को अपना एक मात्र ध्येय नहीं बनाती—जल्दी सरकार नहीं है। लोक-हित के लिए (व्यक्तिगत और सामूहिक हितों के लिए) स्थापित और संवर्धित सरकार के अतिरिक्त जनतंत्रीय सरकार और क्या है? सरकार के स्वरूप विरोध से इसका सम्बन्धित होना आवश्यक नहीं है। किन्तु इसका सर्वाधिक प्राकृतिक सम्बन्ध प्रतिनिधि-पद्धति की सरकार से है क्योंकि यह सरकार उठ सक्य की प्राप्ति के लिए सर्वोत्तम समझी जाती है जिसके लिए राष्ट्र इसका भार वहन करता है।

विभिन्न प्रकार की सरकारों ने जनतंत्र की पद्धति को अपनाने का प्रयत्न किया है। पौर्निक अपनी सरकार को जो निर्वाचन पर आधारित राजतंत्र के साथ-साथ आनुवंशिक कुलीन तंत्र है जनतंत्रीय सरकार कहता है। हाउस भी अपनी सरकार को जनतंत्रीय सरकार कहता है जो मुख्यतः आनुवंशिक कुलीनतंत्रीय सरकार है।

किन्तु अमेरिका की सरकार, जो पूरा स्पष्ट प्रतिनिधि-पद्धति पर आधारित है पूर्ण और कार्य में वास्तविक जनतंत्रीय सरकार है। राष्ट्र के वास्तविक कार्य के अतिरिक्त अमेरिका की सरकार का अन्य कोई कार्य नहीं है और इसलिए इसे जनतंत्रीय सरकार कहना उचित है। अमेरिका वालों ने इस बात का पूरा ध्यान रखा है कि सरकार का यही और एक मात्र गृह उद्देश्य रहेगा। इसलिए उन्होंने सरकार विषयक आनुवंशिक उत्तराधिकार की प्रथा को अस्वीकार करके केवल प्रतिनिधि पद्धति पर सरकार की स्थापना की।

जिन्होंने यह कहा है कि अधिक लोकजनवादी देशों के लिए सरकार का जनतंत्रीय स्वरूप ठीक नहीं है। उनकी पहली मूल तो यह है कि उन्होंने सरकार के कार्य को उसका स्वरूप समझ लिया। राज्य विस्तार पाहे जो हो और जनसंख्या बाहे द्वितीय हो 'लोक-हित' का अर्थ तो एक ही रहेगा। दूसरी मूल यह है कि यदि सरकार के स्वरूप से उनका कुछ अभिप्राय या तो वह सरल प्रजातंत्रीय स्वरूप से या। प्राचीन काल में प्रतिनिधित्व विहीन प्रजातंत्रीय-पद्धति

को सरकारें थीं। इसीलिए बात यह नहीं है कि जनतन्त्र अधिक विस्तृत रूप में स्थापित नहीं हो सका। वास्तव में बात यह है कि सरल प्रजातन्त्रीय स्वरूप में जनतन्त्र अधिक विस्तृत रूप के लिए अनुपयुक्त है। फिर वह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठता है कि यदि कोई राष्ट्र अनेकानुसृत अधिक विस्तृत हा वाय तथा राष्ट्रीय जनताओं में अधिक वृद्धि हो वाय तो उस राष्ट्र के 'लोक श्रेष्ठ' या सार्वजनिक कार्य करने के लिए किस प्रकार की सरकार सर्वोत्तम है।

ऐसी स्थिति में राजतन्त्र उपयुक्त न होगा क्योंकि सरल प्रजातन्त्रीय सरकार के विरुद्ध में जो एक है वे राजतन्त्र के विरुद्ध में भी ठीक है।

कोई एक व्यक्ति किसी राज्य की बाड़े उठका सेवक न हो तो सरकार की वैधानिक स्वायत्ता के लिए विवादों की पद्धति निर्धारित कर सकता है। अपनी दालियों के आधार पर कार्य करनेवाले व्यक्ति की क्रिया के प्रति-रिक्त वह भीरु ब्रह्म नहीं है। विन्तु राष्ट्र की विविध एवं बहुसंस्क पर निर्भरता तथा वृद्धि व्यापार एवं वाणिज्य व्यवस्था के विषय में उन विवादों को नियमित करने के लिए अन्य प्रकार के ज्ञान की आवश्यकता है जो केवल ज्ञान के विभिन्न भागों के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।

यह ज्ञान क्या है? व्यावहारिक ज्ञान-राशि जो किसी एक व्यक्ति की शक्ति नहीं हो सकती है और इसीलिए जनताओं की वृद्धि हो जाने पर, सरकार के प्रजातन्त्रीय स्वरूप के समान राजतन्त्रीय रूप भी ज्ञान की अनुपलब्धता के कारण कम लाभदायक है। सरल प्रजातन्त्रीय सरकार सेवक न हो जाने पर कमजोर हो जाती है और राजतन्त्रीय सरकार अज्ञान और अयोग्यता का शिकार हो जाती है। सभी बड़े-बड़े राजतन्त्र एक बात की अपेक्षा किए करते हैं। इसलिए सरकार के सरल प्रजातन्त्रीय स्वरूप का स्थान राजतन्त्रीय स्वरूप नहीं हो सकता क्योंकि वह भी उन्हींके समान अनुविभाजनक है।

राजतन्त्रीय सरकार अनुपयुक्त होने पर तो और भी अनुपयुक्त होगी। सरकार का यह स्वरूप ज्ञान का सर्वाधिक अधिकार करता है। प्रजातन्त्रीय विवादों की माननेवाला ज्ञान अतिरिक्त विचार के अन्तर्गत वृद्धि तथा परिणाम की इन सभी विभिन्न गुणधर्मों के द्वारा धारित होने की तैयार नहीं हो सकता जो मानव-वृद्धि के अभाव स्वरूप इस वास्तविक प्रकाश की विधिगता है।

सरकार के प्रजातन्त्रीय स्वरूप में राजतन्त्र के सभी दुर्गुण और दुर्घटना

है; अन्तर केवल इतना है कि इसमें संख्या के अनुसार योग्यताओं की सम्मिश्रता अपेक्षाकृत अधिक रहती है। फिर भी उनके उचित प्रयोग और उपयोग का कोई निश्चय नहीं है।

अस्तु, प्रारम्भिक सरस प्रजातन्त्र ही वह आधार है जिस पर बहुत परिमाण की सरकार निर्मित हो सकती है। प्रारम्भिक सरस प्रजातन्त्रीय सरकार साम्राज्य के अपेक्षाकृत अधिक विस्तार होने पर निश्चिन्ता के कारण नहीं बल्कि अपने स्वल्प के कारण अनुपयुक्त ठहरती है और राजतन्त्रीय तथा कुलीन तन्त्रीय सरकारें उस स्थिति में अपनी ज्ञान विषयक अयोग्यता के कारण बहुत युक्त हैं। अस्तु प्रजातन्त्र पर आधारित होकर तथा राजतन्त्र एवं कुलीन तन्त्र की भ्रष्ट पद्धतियों को अस्वीकार करके प्रतिनिधि पद्धति पर स्थापित सरकार एक साथ ही सरस प्रजातन्त्र की स्वरूप विषयक अपूर्वताओं तथा राजतन्त्रीय एवं कुलीनतन्त्रीय सरकारों की ज्ञान सम्बन्धी कदापिताओं को दूर करने में प्रवृत्ति समर्थ है।

प्रारम्भिक सरस प्रजातन्त्र में समाज ज्ञान किसी माध्यम के बिना अपना वास्तव स्वयं करता था। प्रजातन्त्र से प्रतिनिधित्व का भाग देना देने पर सरकार की एक ऐसी पद्धति का जन्म हुआ है जो सभी विभिन्न द्वितीय और साम्राज्य तथा असह्यता की किसी भी सीमा-विस्तार को समझित करने तथा समेटने में समर्थ है।

इसी पद्धति पर अमेरिका की सरकार आधारित है। वहाँ की सरकार प्रजातन्त्र के साथ प्रतिनिधि-पद्धति का भाग है। इस पद्धति ने सरकार के स्वरूप को इस प्रकार के माप से स्थिर किया है कि वह सभी दृष्टियों में तिष्ठान्त के सीमा विस्तार के समानांतर चलता है। एवेन्स में जो छोटे आकार का था अमेरिका में वही बहुत पैमाने पर हुआ। पहला प्रयोग विश्व का आदर्श था और दूसरा वर्तमान युग का आदर्श होना आ रहा है। यह सरकार के सभी स्वरूपों में सर्वाधिक बोधव्य एवं व्यवहार-योग्य है तथा आधुनिक पद्धति पर आधारित सरकार की अज्ञानता और असुरक्षा एवं प्रारम्भिक सरस प्रजातन्त्र की अनुविधाओं से युक्त है।

प्रतिनिधित्व प्रणाली द्वारा सीमा ही जिस प्रकार की सरकार का निर्माण होता है उसके अतिरिक्त अन्य किसी ऐसी सरकार पद्धति को छोड़ निकालना

सहज है जो इतने विस्तृत सू-आय और हितों की अपनी गृह परिसर में
 कार्य कर सके। प्रांत की सरकार इस विधायक पद्धति का केवल मनुष्य है।
 प्रतिनिधित्व प्रणाली पर स्थापित प्रजातन्त्र (सर्वोच्च जनतन्त्र) सभी सम्भव
 स्थितियों में अपने को समनुकूल बना लेता है। छोटे देशों में भी यह सरल
 प्रणाली के अन्तर्गत है। प्रतिनिधित्व प्रणाली द्वारा प्रत्येक स्वयं अपने प्रजातन्त्र
 को पटल बना सकता था।

इस विषय सरकार कहते हैं अथवा हमें जैसे सरकार कहना चाहिए, यह
 एक सामान्य केन्द्र के अतिरिक्त और कुछ नहीं है, जहाँ समाज के सभी भाग
 एक में मिलते हैं। यह कार्य प्रतिनिधित्व-प्रणाली के अतिरिक्त अन्य किसी
 ऐसी प्रणाली द्वारा सम्पन्न नहीं हो सकता जो समाज के विभिन्न हितों के
 लिए अधिक उपयोगी हो।

यह पद्धति सम्पूर्ण समाज और उसके अंशों के हितों के लिए आवश्यक
 हान को एक केन्द्र में लाती है। यह सरकार को निरन्तर प्रीतिता की स्थिति
 में रखती है। इसका छात्रन सम्बन्धी या अथवा छात्र नहीं होता। यह प्रणाली
 हान और हानि के पालन को स्वीकार नहीं करती। यह जनतन्त्रीय पद्धति
 ऐसा कि प्रत्येक सरकार को होना चाहिए एक व्यक्ति के कारण होने वाले
 सभी आर्थिक परिवर्तनों के प्रकट है। इसी नाते यह राजतन्त्र से अलग है।

राष्ट्र की बाह्य मनुष्य की बाह्य नहीं है। राष्ट्र एक वृत्त है जिसमें एक
 केन्द्र होता है, जहाँ सभी अर्थव्यवस्था मिलते हैं। राष्ट्र का यह केन्द्र प्रतिनिधित्व
 द्वारा निर्मित होता है। जिसे हम राजतन्त्र कहते हैं। जहाँ हर प्रतिनिधित्व
 का समन्वय कर दिया जाय तो इस प्रकार की सरकार केवल यह केन्द्र प्रकट
 सरकार होती। प्रतिनिधित्व स्वतः राष्ट्र द्वारा ही बना राजतन्त्र है।
 इसलिए यह दूसरे को सम्पूर्णता बनाकर अपना अन्त-रक्षण नहीं कर सकता।

'बर्क' ने अपने संवैधानीय भाषणों एवं प्रकाशित अंशों में जो वादीय
 व्यवस्थाएँ कर लीं, छात्रों का प्रयोग किया है जिसका कोई अर्थ नहीं है। 'सरकार'
 के विषय में वे कहते हैं कि जनतन्त्र की आधार और राजतन्त्र की घोषणा
 मानने की अवेक्षा राजतन्त्र की आधार और जनतन्त्र की घोषणा मानना अधिक
 सम्भव है। यदि 'बर्क' का अविचार यह है कि बुद्धि के द्वारा निर्णय का
 सुधार करना बुद्धि के द्वारा बुद्धि का सुधार करने की अवेक्षा अधिक ठीक

है, तो मुझे उमसे केवल इसके अनिश्चित और कुछ नहीं कहना है कि क्यों व
सुसंवा को पूर्णतः अस्वीकार कर दिया जाए।

किन्तु बर्फ जिसे राजतन्त्र कहते हैं वह है क्या? क्या वे समझते हैं
प्रतिनिधित्व को सभी सोच समझ सकते हैं और यह भी समझते हैं कि इसमें
विभिन्न प्रकार के ज्ञान और योग्यताओं का आवश्यक रूप से समावेश होना
चाहिए। किन्तु राजतन्त्र में उन गुणों की कौन सी सुरक्षा है? जबकि वा
एक अच्छा राजा होता है तो राजतन्त्र में कुछ कहाँ रहती है वह सरकार के बा
में क्या जानता है। फिर राजा कौन है? राजतन्त्र कहाँ है? यदि राजा का काम
राज प्रतिनिधि द्वारा निष्पादित होता है तो राजतन्त्र उपहास विद्य होता है।

राज प्रतिनिधि द्वारा सासन जनसंघीय सासन का एक हास्तास्पर्श प्रका
है। स्वयं राजतन्त्र इससे अधिक क्या है? राजसंघीय सरकार के उन्ने निमित्त
स्वरूप है जिसने स्वरूपों की कल्पना की जा सकती है। इसमें स्थिरता का कोई
संशय नहीं है जो कि सरकार में होना चाहिए। प्रत्येक नये राजा का बड़ी
पर बैठना एक क्रांति है और प्रत्येक राज प्रतिनिधि का सासन प्रतिपत्ति है।
सम्पूर्ण रूप से राजतन्त्र राजदरबार के मुठों और पक्षियों का बर्फ स्वयं जिसने
जदाहरण है अनिश्चित रूप है।

राजतन्त्र को सरकार के लिए संगठन बनाने के निमित्त राजबंदी पर बैठने
वाले प्रत्येक उत्तराधिकारी को अच्छा नहीं बरन अन्य से ही बचस्क होना
चाहिए और वह बचस्क भी कैसा सालोमन (Salomon) के समान। किन्तु
हास्तास्पर्श बात है कि जब तक अनिश्चित उत्तराधिकारी बचस्क नहीं हो जाते।
तब तक राष्ट्र प्रतीका करे और सासन में व्यवधान उपस्थित हो।

यह दूसरी बात है कि मेरी समझ कम है अच्छा मैं किसी के हा
अनुचित रूप से प्रभावित नहीं किया जा सकता या मुझे किसी प्रकार का
या अधिक समझ है किन्तु इतना निश्चित है कि जिसे तुम राजतन्त्र का
है उसको मैं पूर्णतः एवं पूर्णतः मानता हूँ। मैं उसकी तुलना एक ऐसे म
से करता हूँ जो पदों की जाड़ में रसी हुई है और जिसके बारे में बाहर स
कोड़ी बर्बाद हो रही है किन्तु यदि किसी प्रकार से वह बरदा हट जाय
सोम उसे देखें तो हँसने लगे।

सरकार की प्रतिनिधि-प्रति में इस प्रकार की कोई बात सम्भव नहीं।

एव के उभावही इस सरकार में भी घरीर बीरमस्तिक की सावत प्रामाणिक
 कीत रही है। यह नदति विपद के विपदाय समय पर कुम्हार एवं बीरवपुर्ण
 इन के बरतरित होती है। उनके हुए अपवा शेष सभी जानते रहते हैं। बात
 शेष अपवा रहस्य के द्वारा इसका परिचायन नहीं होता। इसका कार्य इस
 शेष की आवा में बड़ी बरतएक ऐसी आवा में होता है जिसे प्रत्येक हृदय समक
 कहता है।

एवउत की दूर्धता को व देलता विवेक की अपेक्षा करना अपवा बुद्धि
 को गति करना है। प्रकृति अपने सभी कार्यों में व्यवस्था रखती है। किन्तु
 यह एक ऐसी व्यवस्था-प्रकृति है जो प्रकृति के विपरीत कार्य करती है। यह
 कठिनों की प्रकृति को एवउत पसन्द देती है। इसके अनुसार प्रीति एवं बुद्ध
 कुम्हरी अन्ति बन्नों के द्वारा साक्षित हो सकते हैं बीर दूर्धता बुद्धि पर सातम
 कर बरती है। कुम्हरी और अतिमिनि-प्रकृति तबैव प्रकृति के स्थिर निबनों तथा
 व्यवस्था के अनुसार रहती है।

वस्तुतः स्वयं अमेरिका की संघीय सरकार को मीजिए। तबमें कोरेण्ड
 के दिनी भी बरतन की अपेक्षा प्रेसीडेंट को व्यक्ति के रूप में अधिक अधिकार
 प्राप्त है। प्रेसीडेंट एवं के वन व्यवस्था का व्यक्ति तब पर के लिए निर्वाचित नहीं
 हो सकता। प्रेसीडेंट एवं की व्यवस्था तक पहुँचते-पहुँचते समुच्च की विवेक प्रकृति
 होत हो जाती है। देश के समुच्चों का उनकी सभी वस्तुओं से परिचित होने
 का एक व्यक्ति को पर्याप्त अवसर प्राप्त हो जाता है, और देश को भी उसे वह
 पावने का पूरे समय निबता है।

किन्तु राजसंघीय-व्यवस्था में एक राजा के दरबार पर वस्तुपरिकारी
 के वन में पाई को हो, उनके राज और सरकार के धीमे-दर पर नियुक्त कर दिया
 जाता है। क्या हम इसे बुद्धिमानों का दर्ज कह सकते हैं? क्या यह किसी
 राज के बीरवपुर्ण परिण बीर व्यक्ति अपेक्षा के अनुकूल है। एक व्यक्ति को उद्-
 शिष्टा कहना नहीं तक उचित है? अन्य सभी विषयों में इन्दीय एवं की व्यवस्था
 एक एक व्यक्ति अवकाश माना जाता है। इस समय के पूर्व एक एकदू जून का
 भी प्रमाण उनके विषये नहीं होता जाता किन्तु यह कहते हुए आवश्यक होता
 है कि बरतएक एवं की आमु में भी उसे समुच्च का भार होता था कहा है।

बादे दिनी की हृदिकीय से देखा जाय इसका स्पष्ट है और सम-दे-क

मेरे लिए तो अवश्य स्पष्ट है कि राजतन्त्र केवल पानी का बूझबुझा है, अथवा घन पाने के लिए केवल सरबार की बात है। इस ससमूह पद्धति में अतिशय अधिक व्यय होता है वह अतन्त्रीय सरकार की विवेकपूर्ण पद्धति से सम्भव नहीं है। जहाँ तक केवल सरकार का प्रश्न है इस पर अधिक ध्यान नहीं करना पड़ता। अमेरिका की संघीय सरकार का जिसके विषय में कहा जा चुका है कि यह प्रतिनिधि पद्धति पर स्थापित है और इंग्लैण्ड की जैसा समयमय इस बड़े देश का शासन कर रही है, व्यवस्था तो ही हजार डॉलर या एक सौ ठीक हजार पाँच स्टनिंग है।

मैं समझता हूँ कि कोई भी मर्यादाबद्ध व्यक्ति यूरोप के किसी राजा के परिम की तुलना समापति वासिगटन के परिम से नहीं कर सकता। फिर भी फ्रांस और इंग्लैण्ड में भी अमेरिका की संघीय सरकार के समूहों व्यय का आठ गुना केवल एक व्यक्ति के लिए व्यय होता है। इसके लिए ठीक कारण बताना असम्भव है। अमेरिका की सामान्य जनता विशेषतः परीक्ष जनता फ्रांस तथा इंग्लैण्ड की सामान्य जनता की अपेक्षा कर देने में अधिक सक्षम है। किन्तु प्रतिनिधि-पद्धति राष्ट्र भर में शासक का इस प्रकार विस्तार कर देती है कि जनता को समझ नहीं आ सकता। उस स्थिति में राजदरबार की बात काम नहीं कर सकती है। इस पद्धति में रहस्य को कोई स्थान नहीं है। प्रतिनिधियों के समान ही उन प्रतिनिधियों को चुनने वाले व्यक्ति भी कार्य प्रकृति से अवगत रहते हैं इसलिये यदि कोई बात है तो उसका पता सभी को मालूम होगा। राष्ट्र में कोई रहस्य नहीं रह सकता। दूसरी ओर राजतन्त्र के रहस्य व्यक्तिगत रहस्य के समान ही अवक दुर्गुण है।

प्रतिनिधि-पद्धति में प्रत्येक कार्य का उचित कारण सभी को स्पष्ट होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति का सरकार में अधिकार है और वह सरकार विषयक जानकारी को अपने काम का एक आवश्यक अंग मानता है। इसमें उसका स्वार्थ निहित है क्योंकि सरकार के नामों का प्रभाव उसकी सम्पत्ति पर पड़ता है। वह व्यय और साम की तुलना करता है और सब से बड़ी बात यह है कि वह उन लोगों से जिन्हें अन्य सरकारों में नेता कहा जाता है सम्मान प्रदान की प्रथा को स्वीकार नहीं करता।

मनुष्य की बुद्धि को अगुनी बना देने और उसमें वह विश्वास उत्पन्न करने

एक ही वार्षिक राजस्व (Revenue) प्राप्त किया जा सकता है कि सरकार एक विविध व्यवसायी वस्तु है। राजस्व के द्वारा इस व्यवसायी की पूर्ति होती है। राजस्व प्राप्त की जाती है।

एक स्वतन्त्र देश की सरकार यदि प्रथित रूप से कहा जाय तो व्यक्तियों में नहीं बल्कि व्यक्तियों में है। इन व्यक्तियों को कार्यभार करने में प्रथित व्यवसायी होता और वह उन्हें कार्यभार दिया जाता है तो वार्षिक सरकार (Civil Government) का सम्पूर्ण कार्य सम्पन्न हो जाता है इसके अतिरिक्त वह कुछ राजस्व की 'अप्रतिष्ठित व्यवसायी' है।

संविधान

यह स्पष्ट है कि जब हम 'संविधान' और 'सरकार' की बातें करते हैं तो हम उन्हें विचार और रूप में मानते हैं। संविधान सरकार का नहीं बल्कि सरकार का निर्माण करनेवाले लोगों का कार्य है और विचार संविधान के सरकार अधिकार-निर्देशक प्रणालि है।

उन्हें के ऊपर प्रमुख अधिकारों का कोई कुछ-कोई होना चाहिए। वे अधिकार वादी यदि कुछ होने चाहिए जबकि मान्य विचारों से। इन से सम्बन्ध-कोशों के अतिरिक्त अधिकार के साथ कोई कुछ-कोई नहीं है। यदि कुछ वही अधिकार प्रणालि (Tilast) है और वही मान्य विचारों से अधिकार व्यवस्था। समय इन से सरकार के अधिकारों की प्रकृति और उनके रूप को बतल नहीं सकता।

इस विचार पर विचार करते समय हम अमेरिका की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हैं जो विचार के आरम्भ में रखा हुआ और सरकार के रूप में की बातें प्रणालि के सम्बन्ध में सीधे सम्पादित हो जाती है जो हमारे समय में ही प्रकट हुए हैं। सरकार के रूप की जानकारी प्राप्त करने के लिए हम आधीनता के समय प्रवेश में बढने की कोई आवश्यकता नहीं है, और न ही अनुमान करने की ही आवश्यकता है। हम एक-एक प्रकट विचार पर बहते हैं, वही के सरकार आरम्भ होती विचारणीय प्रकृति है, मान्य हम कोय विचार के आरम्भ में रखा है। हमारे सम्पूर्ण इतिहास की नहीं, बल्कि किसी 'अप्रतिष्ठित

समझी थी तथा कार्यक्रम की सम-रेखा निर्धारित कर समझी थी। इसदिग्दृष्टिकोण ने केवल यह प्रस्ताव प्रस्तुत किया कि प्रत्येक काउन्टी से छः प्रतिनिधि इम्बियन बनाने के अधिकार के साथ पिता-पैरिडिया की सभा में सम्मिलित हों और इम्बियन सभा लेने पर इसे बनता के सम्मुख विचारार्थ रखें।

इस सभा ने वैज्ञानिक डेविलिग मिलके सभापति ने वर्गीकृत सोच-विचार के साथ इम्बियन बनाया, जिसे प्रस्तापित कर के विचारार्थ बनता के सम्मुख रखा गया और सभा की बैठक कुछ समय के लिए स्थगित कर दी गयी।

स्वयन-काय के सभापति होने पर सभा की बैठक पुनः कार्यक्रम हुई। उसके समय में बनता का सभापत्य बत जात हो चुका था अतः वह इम्बियन को स्वीकार कर दिया गया। वह पर दृष्टांतर कर के तथा इसे सुशोभित कर के बनता की ओर से सचकी घोषणा की गयी।

उपस्थित सभा ने सरकार बनानेवाले प्रतिनिधियों के निर्वाचन की विधि तथा सरकार की कार्य-प्रणाली निर्धारित की। इस कार्य की सम्पन्न करने के बाद वह सभा बंद हो गयी और उसके सदस्य अपने-अपने घर और पैरों में लौट गये।

इस इम्बियन में नही अधिकारों की घोषणा की गयी इसके बजाय सरकार का स्वयं और अधिकार निश्चित किये गये। व्यापार तथा कूरियों के अधिकार, निर्वाचन-प्रणालि, निर्वाचकों की संख्या और प्रतिनिधियों की संख्या के अनुपात, सभा का कार्य-काल राष्ट्रीय सभा के समय की दरप्रदर (Levy) एवं लेखन-प्रणालि तथा आर्थिक अधिकारियों की नियुक्ति-प्रणालि आदि का विस्तृत वह इम्बियन में किया गया।

इस इम्बियन की कोई बाध इसके आधार पर निमित्त होने वाली सरकार के विरुद्ध हाथ न हो परिणतित की जा सकती थी और न उत्पन्नित ही। यह इम्बियन यह सरकार के लिए कानून था। किन्तु अनुभव के साथ न बनना सुनिश्चानी गयी है। इसदिग्दृष्टि कि प्रतिनिधियों की राय संश्लेषित न हो बल्कि और इसदिग्दृष्टि की कि सरकार और प्रेष की प्रतिनिधियों का साथ कार्य करना रहे, इम्बियन ने यह ठस किया कि प्रत्येक राज्य सभों के साथ एक परिषद् निर्धारित हो, जो इम्बियन पर सुपरिविचार करे और आवश्यकतानुसार उचित परिवर्तन, परिवर्तन एवं संशोधन करे।

यहाँ हम एक नियमित पद्धति का दर्शन करते हैं। हम एक ऐसी सरकार का दर्शन करते हैं जिसका निर्माण संविधान के आधार पर हुआ है तथा देश के व्यक्तियों ने अपने मूस रूप में जिसकी स्थापना की। इस स्थिति पर हम यह भी देखते हैं कि संविधान सरकार का नियन्त्रण करनेवाला कानून है। हम कह सकते हैं कि यह संविधान प्रदेशों की राजनैतिक बाह्यता या। कदाचित् ही कोई ऐसा घर या जिसमें इसकी एक प्रति न रही हो। सरकार के प्रत्येक सदस्य के पास इसकी एक प्रति थी। अब कभी किसी विवेक के सिद्धान्त अपना किसी अधिकार के सीमा-विस्तार पर विवाद आरम्भ हुआ या, तो समा के सदस्य गुरम अपनी ओर से संविधान की प्रति निवास कर उस अध्याय को पढ़ने लगते थे जिसका सम्बन्ध विवादग्रस्त विषय से होता था।

इस प्रकार राज्यों में से एक राज्य की सरकार का उदाहरण देने के उपरान्त मैं उन सभी कार्यवाहियों का उल्लेख करूँगा जिनके द्वारा 'संयुक्त राज्य' के संघीय संविधान ने अपना स्वल्प प्राप्त किया।

सन् १७७४ ई० के सितम्बर और सन् १७७५ ई० के मई महीनों को अपनी दो बैठकों में विभिन्न प्रदेशों की भाव में जिन्हें राज्य कहा गया विमान सभाओं से भेजे गये 'प्रतिनिधियों की सभा' के अतिरिक्त 'कांग्रेस' और कुछ नहीं थी, और सामान्य स्वीकृति तथा लोक-संस्था के रूप में काम करने की आवश्यकता से उत्पन्न होने वाले अधिकारों के अतिरिक्त इसके अन्य कोई अधिकार नहीं थे। 'कांग्रेस' ने अमेरिका के घरेलू कामों से सम्बन्धित प्रत्येक विषय में विभिन्न प्रादेशिक सभाओं के सम्मुख केवल अपने मत प्रस्तुत किये और उन प्रादेशिक सभाओं ने अपने विवेक के अनुसार उन्हें स्वीकार अपना अस्वीकार किया।

'कांग्रेस' की ओर से कुछ भी ऐसा नहीं किया गया जो अनिवार्य है। फिर भी इस स्थिति में यूरोप की किसी भी सरकार की अपेक्षा इसे लोगों की मर्याद और स्नेह-पूर्ण आजाकारिता अधिक प्राप्त थी। कांग्रेस की 'राष्ट्रीय सभा' के समान ही, यह उदाहरण इस तथ्य को प्रकट करता है कि सरकार की शक्ति स्वयं इसके भीतर निहित नहीं है, बल्कि राष्ट्र के उस अनुराग और सोचाबिरुधि में है जिसका अनुभव लोगों को सरकार का भार बहन करने में होता है। जब सरकार में इस शक्ति का अभाव होता है तो उसमें शक्ति की

निर्दिष्ट होती है और यह कदापि फाँट की शायीन सरकार के समान कुछ समय तक कुछ व्यक्तियों को कष्ट नहीं पहुँचा सकती है। किन्तु अपने गठन के मार्ग का निर्माण यह स्वयं करती है।

स्वतन्त्रता की घोषणा के उपरान्त जिस विज्ञान पर प्रतिनिधि-सरकार की स्थापना होती है, उसके अनुसार यह आवश्यक हो गया कि कांग्रेस के अधिकार की व्याख्या और स्थापना की जाय। अतः यह नहीं था कि उस समय कांग्रेस ने अपने विवेक के सहारे जिस अधिकार का उपयोग किया उसके अधिकार पहले अधिक हों या कम। यह केवल कार्यवाही की कुराई थी।

इस संघर्ष की पूर्ति के लिए संघटन-अधिनियम (Act of Confederation) को एक प्रकार का अनुरोध करीब अधिकार का अस्थापित हुआ और परमेश्वर कोष-विचार के उपरान्त सन् १७८१ ई. में इसे स्वीकार किया गया। किन्तु यह 'कांग्रेस' का नाम नहीं था, क्योंकि यह बात प्रतिनिधि-सदस्य पर स्थापित सरकार के विज्ञानों के विपरीत थी कि कोई संस्था अपने अधिकार स्वयं ठान करे। 'कांग्रेस' ने तब प्रथम सभी राज्यों को उन अधिकारों के समक्ष कराया जिन्हें 'राज' की शीर्षता से इसलिए आवश्यक ज्ञेय कि उन अधिकारों के समक्ष 'राज' उन सभी कर्तव्यों और हेतुओं को कर के निम्नी करेगा। इससे की जाती है। राज्यों ने उन अधिकारों को 'कांग्रेस' में केन्द्रित करना स्वीकार कर लिया।

यह स्पष्ट कर देना अनुचित न होगा कि अनुरोध दोनों दृष्टान्तों में अना-पक्ष और अना-पक्ष के बीच समझौते जैसी कोई बात नहीं है। यह समझौता एक सरकार के निर्माण के निमित्त किया गया लोगों का आरम्भ समझौता था।

राष्ट्र की जनता से समझौता करने में सरकार का एक पक्ष है। इसे मानने का कार्य हुआ कि हम यह मानते हैं कि सरकार उस समय अस्तित्व में आती जिस समय अस्तित्व में आने का उसे कोई अधिकार नहीं था। जनता और उन लोगों में जो राज्य-कार्य करते हैं, समझौते की केवल एक बात है और यह यह है कि जब तक जनता यह चाहती है कि वे राज्य-कार्य सम्पन्न करें तब तक यह कोई गारिबन्ध नहीं रहे।

सरकार व्यापार नहीं है जिसे अपने हित के लिए स्थापित करने का अधिकार एक व्यक्ति करता। अनुष्ठी की विधी शीघ्र की है। राज्य समुत्सव रूप से यह पर

सोचों के अधिकारों की पाती (Trust) है, जिन्होंने इसे धीपा है और जो किसी भी समय इसे वापस ले सकते हैं। सरकार के निजी अधिकार कोई नहीं है वह केवल कर्तव्य करती है।

इस प्रकार संविधान की प्रारंभिक रचना के दो उदाहरण देने के बाद, मैं इस बात को स्पष्ट करूँगा कि उन दोनों में, उनकी प्रथम स्थापना के बाद से किस प्रकार के परिवर्तन हुए।

अनुभव ने बताया कि प्रादेशिक सरकारों में प्रादेशिक संविधानों द्वारा सृष्टि अधिकार आवश्यकता से अधिक हैं और 'संपदन अधिनियम' द्वारा 'संघीय सरकार' को दिये गये अधिकार अत्यधिक कम हैं। दोष सिद्धांत में नहीं करना अधिकार के विवरण में था।

'संघीय सरकार' के नवीन रूप-विधान की आवश्यकता और भीषण को लेकर समाचार-पत्रों एवं पुस्तिकाओं में बहुत कुछ लिखा गया। पारस्परिक भावपूर्ण व्यवहार प्रेस के माध्यम से की गयी सार्वजनिक चर्चा के कुछ परभाव बर्बादिया की सरकार ने वाणिज्य-विषयक कुछ अनुविधानों का अनुभव करके 'अष्टाद्वीपीय सम्मेलन' बुलाने का प्रस्ताव किया, जिसके परिणामस्वरूप सन् १७८६ ई० में पाँच या छः प्रादेशिक समाजों के प्रतिनिधि मैरीलैण्ड (Maryland) के अनापोली (Annapolis) नामक स्थान में मिले।

प्रतिनिधियों के इस सम्मेलन ने यह घोष कर कि सुधार-कार्य को करने का हमें पर्याप्त अधिकार नहीं है केवल अपना यह सामान्य मत स्पष्ट कर दिया कि कार्य उचित है और उसे सम्पन्न करने के लिए अनुपामी वर्ष में सभी राज्यों की एक सभा होनी चाहिए।

सन् १७८७ ई० की मई का महीना या जब फिल्लाडेल्फिया में उस सभा की बैठक हुई और सेनापति वाशिंगटन उसके अध्यक्ष निर्वाचित हुए। उस समय तक सेनापति वाशिंगटन का सम्बन्ध किसी 'प्रादेशिक सरकार' व्यवस्था की ओर से नहीं था। कुछ की समाप्ति के बाद वे एक साधारण नागरिक के समान रहने लग गये थे। उस सभा ने सभी विषयों पर सम्मिलतापूर्वक विचार किया, विभिन्न प्रकार के विवादों और परीक्षाओं के उपरान्त 'संघीय संविधान' के कई अंशों के विषय में सभी सन्तुष्ट परस्पर सहमत हुए। अब दूसरा प्रश्न यह था कि इस संविधान को अधिकार देने और उसे कार्यान्वित करने का उद्देश्य क्या हो।

इस कार्य के लिए समा के उन सदस्यों के राजपरवारियों के कुछ के दान, वही हालांकि के किसी को बुलाया और न धर्मनी के वरद उन्होंने इसे सम्पूर्ण राज्य की बुद्धि और अनिच्छा के अग्र प्रोत्साहन दिया।

उन्होंने सर्वप्रथम यह आरोप दिया कि संविधान प्रकाशित किया था। दूसरी बात उन्होंने यह तय की कि प्रत्येक राज्य उस प्रस्तावित संविधान पर विचार करने और इसे सुधारने अथवा अस्वीकार करने के लिए स्वयं कम से एक सभा निर्धारित की और ज्योंही किसी भी राज्यों के स्वीकृति प्राप्त हो पाय, वही सत्ता के राज्य नवीन संघीय सरकार के लिए अपने सदस्यों की आनुपातिक संख्या चुनने का पथक्रम करें। इस कार्य के सम्पन्न हो जाने पर अर्थात् संघीय सरकार सम्पन्न हो पाय।

अनुसार सभी राज्यों ने अपनी-अपनी सभा निर्धारित की। इनमें से कुछ ने अत्यधिक बहुमत के द्वारा और दो का तीस ने सर्वसम्मति से संविधान को स्वीकार किया। अन्यो में असमत् विचार हुआ और मतभेद रहा।

मैसाचूसेट्स (Massachusetts) की सभा में विद्वत्की ब्रैम्ह बोस्टन (Boston) में हुई थी। अथवा तीसरी सदस्यों में बहुमत केवल अन्धों का ही सत्ता के अधिक नहीं रहा। किन्तु निर्धारित प्रतिनिधि-प्रवृत्ति पर आधारीत सरकार की हैती प्रवृत्ति है कि बहुमत की आन्तिमसंक स्वीकार करके आठ कार्य किया जाता है।

विचारोत्पत्ति यह यह समा समात हुई और मत लिये जा चुके थे विरोधी सदस्यों ने प्रतिकार कहा—“यद्यपि हम लोगों ने इस संविधान के विपक्ष में उन्हें अनुमति दिये और मत दिये क्योंकि उनके कुछ अंश हम लोगों को अधिक नहीं थे किन्तु यदि सत्ता के प्रस्तावित संविधान के एक में निर्णय दिया गया: हम लोग इसका व्यावहारिक अर्थार्जन नहीं कर सकते हैं यदि यह सत्ता के एक में मत दिये होते।”

ज्योंही की राज्यों ने अपनी सहमति व्यक्त की, (दो राज्यों के भी अपनी सभाओं के निर्वाचन के वरन्नाह इसी मार्ग का अनुसरण किया) वही अथवा अर्थात् ‘संघीय सरकार’ के स्थापन पर नवीन सरकार की स्थापना हुई, और मैसाचूसेट्स बाकिरटन उसके समर्थन हुए। इसी स्थापन पर ही यह बड़े दिया गयी यह सत्ता कि इन महासभा का अधिक और वैधार्थ्य, इन सभी लोगों को, जिन्हें राजा कहा जाता है, अधिकृत करने में सफल है।

वे राजा मानव-जाति के पसीने एवं परिश्रम के आधार पर इतना अधिक वेतन पाते हैं जिसके लिए न उनमें कोई योग्यता है और न उन्होंने कोई ऐसी सेवा ही की है; दूसरी ओर, सेवापति बाणिज्य अपनी शक्ति भर प्रत्येक प्रकार की सेवा कर रहे हैं और प्रत्येक आर्थिक पुरस्कार को अस्वीकार कर रहे हैं। प्रयाग सेवापति के रूप में उन्होंने कोई वेतन स्वीकार नहीं किया और 'संयुक्त राज्य' के प्रेसीडेंट के रूप में वे कोई वेतन स्वीकार नहीं करते हैं।

नवीन संघीय संविधान के निश्चित हो जाने के बाद पेंसिलवेनिया की सरकार ने यह सोच कर कि इसके संविधान के कुछ अंश बदल दिये जाने चाहिए, एक सभा निर्वाचित की प्रस्तावित परिवर्तन प्रकाशित किये गये और सार्वजनिक सहमति के बाद उन्हें स्वीकार किया गया।

इन संविधानों के निर्माण अथवा परिवर्तन में असुविधाएँ या तो अत्यधिक कम हुईं अथवा बिलकुल नहीं हुईं। सामान्य कार्य-क्रम में कोई व्यवधान उपस्थित नहीं हुआ और लाभ अधिक हुआ। किसी राष्ट्र के अधिकांश लोग यसती को बने रहने देने की अपेक्षा उसे सुधार देना अधिक अच्छा समझते हैं और जब सार्वजनिक विषयों पर झुका बिबाद होता है तथा उस पर स्वतंत्र सार्वजनिक नियम होता है तो यदि वह निर्णय अत्यधिक सीमता में नहीं किया गया है वह कभी गलत नहीं होता।

सांविधानिक परिवर्तन की उपर्युक्त दोनों स्थितियों में सत्तासीन सरकारों ने किसी भी प्रकार का भाग नहीं लिया। सांविधानिक परिवर्तन अथवा रचना सम्बन्धी पद्धति या सिद्धांत विषयक बिबादों में सरकार को भाग लेने का कोई अधिकार है भी नहीं।

संविधान और उनके आधार पर निर्मित सरकारों की स्थापना सरकार के अधिकारों को क्रियान्वित करने वाले व्यक्तियों के हित के लिए नहीं होती है। उन सभी विषयों में काम करने और निर्णय करने का अधिकार उन्हें रहता है जो उसके लिए बेतन बैठे हैं न कि उन्हें जो वेतन पाते हैं।

संविधान सरकार में काम करने वालों का नहीं बल्कि एक राष्ट्र की सम्पत्ति है। अमेरिका में जनता के द्वारा ही संविधानों की स्थापना की घोषणा की गयी है। फ्रांस में 'जनता' के स्थान पर 'राष्ट्र' शब्द का प्रयोग होता है किन्तु दोनों स्थितियों में संविधान सरकार का पूर्वेवासी और सबदा उससे भिन्न है।

इंग्लैण्ड में, हम वही सुप्रसिद्धतम उदाहरण देखते हैं कि 'राज' को छोड़ कर ऐसे राजों का कुछ-कुछ अविधान है। अत्यन्त सभाय सभा अथवा संघ जिसकी स्थापना हो चुकी है, सर्वप्रथम कई मौखिक चिन्ताओं पर सहमत हुआ है और उसने उनके अनुसार अपने-अपने स्वरूप का निर्माण किया है। यही सभा अविधान है। उत्तरदाय्य उसने अपने कर्मचारियों की जिसके अधिकारों का इस्तेमाल उसके अविधान में किया गया है, नियुक्ति की और फिर सभा सभाय अथवा संघ का कार्य आरम्भ हुआ। जब सभाधिकारियों को चाहे जो नाम दिया जाय, संविधान के मौखिक चिन्ताओं में सुद्ध करने बदलने या परिवर्तन करने का उन्हें कोई अधिकार नहीं है। केवल वे ही लोग ऐसा कर सकते हैं जिन्होंने सब समझ, सभा अथवा संघ की रचना की है।

प्रतिनिधि पद्धति पर निर्मित सरकार

(Government by Representation)

और

पूर्व दृष्टान्त पर आधारित सरकार

(Government by Precedent)

राज की वास्तविक प्रवृत्ति को निर्धारित और नियंत्रित करने वाले अविधान के अभाव के कारण इंग्लैण्ड में कई कानून अधिवैधानिक एवं अल्पप्रचलित हैं और उनका प्रचलन अविधान सभा संकल्प है।

अंग्रेजी के राज राजनीतिक सम्प्रदाय स्थापित होने के समय से ऐसा प्रतीत होता है कि इंग्लैण्ड की सरकार का जिसे 'अविधान सरकार' कहना में अनेकारण्य कम प्रत्यक्ष करता है, प्रमाण वैधानिक कार्यों और कर-वृद्धि के साधनों में एक प्रकार प्रवृत्त प्रतीत है कि वास्तविक सरकार का और कोई काम नहीं है। अनेक कार्यों की प्रवृत्ति की जाती है, और वहाँ नियमित कानून वही कोई भीव न्याय-पिर ही है।

अब अनेक विषय को हम समझ 'पूर्व दृष्टान्त' (Precedent) के दम पर निर्मित करण चाहिए, चाहे वह अल्प ही वा कुछ अथवा वह अनुष्ठान ही वा प्रतिकूल

इस प्रकार का अम्यास इतना सामान्य हो गया है कि उसके कारण यह संदेह होने लगा है कि इसके मूल में अत्यधिक गहरी राजनीति काम कर रही है।

अमेरिका की स्थिति और विशेषकर फ्रांस की स्थिति के बाद से पूर्ववर्ती परिस्थितियों और समय द्वारा प्राप्त इस 'पूर्व दृष्टांत सम्बन्धी सिद्धांत' का उद्देश्य इंग्लैण्ड में पूर्वनिर्दिष्ट व्यवहार हो गया है। सामान्यतया वे 'पूर्व दृष्टांत' जिन सिद्धांतों और मर्थों पर आधारित हैं ठीक उनके विपरीत सिद्धांतों और मर्थों पर उन्हें आधारित होना चाहिए था, और जितने अधिक बामांशर से उन दृष्टांतों को लिया जायगा उनके विषय में उतना ही अधिक संदेह होगा।

किन्तु उन दृष्टांतों और प्राचीन राजाओं के प्रति धर्मविरुद्धासपूर्व सम्मान का योग करके—जैसा कि महन्त खज या अबघेय' (Relics) का प्रदर्शन करते हैं और उन्हें पवित्र कहते हैं—मनुष्यों को छुसा जाता है। सरकारें इस समय इस प्रकार कार्य कर रही हैं कि मानो वे मनुष्य में एक भी विचार प्राप्त करने से डरती हैं। वे मनुष्य की क्षक्तियों को मज्ज कराने और क्षमति के हर्षों से उसका ध्यान हटाने के निमित्त कुपचाप पूर्व दृष्टांतों की कल की ओर उसे विधे जा रही हैं।

वे सरकारें इस बात को समझती हैं कि मनुष्य जितना वे चाहती हैं उसकी अपेक्षा अधिक—क्षमता के साथ ज्ञान तक पहुँच रहा है और उनकी पूर्व दृष्टांत वाली नीति उनके डरों का मापदण्ड है। प्राचीन समय की धार्मिक महन्ती के समान इस राजनैतिक महन्ती का भी एक समय था और अब यह अपने विनाश की ओर इतनी तेज से जा रही है। जीर्ण 'अबघेय' और प्राचीन दृष्टान्त महन्त और सम्राट सभी साथ-साथ मज्ज होये।

पूर्व दृष्टांत पर स्थापित सरकार सर्वाधिक अथवा शासन-गतिधियों में से एक है। कई स्थितियों में पूर्व दृष्टान्त को नेतागनी के रूप में कार्य करना चाहिए, न कि उदाहरण के रूप में और उनकी अपेक्षा करनी चाहिए, न कि उनका अनुकरण। किन्तु इसके स्वाम पर होता यह है कि उन दृष्टान्तों की राशि को संविधान और कानून के लिए स्वीकार कर लिया जाता है।

पूर्व दृष्टांत का यह सिद्धांत या तो मनुष्य को अज्ञान की स्थिति में रखने की नीति है अथवा वह इस तथ्य की व्यावहारिक स्वीकृति है कि जिस भाषा में सरकार की उन्नति अधिक होती जाती है, उतनी अनुपात में उसकी बुद्धि का

नर होता जाता है और वह केवल पूर्ण दृष्टान्तों के आधार पर नष्ट बचती है। यह प्रकार संयुक्त देवासी आदि का सहाय लेकर चलते हैं।

यह बात समय में नहीं जाती कि जिन्हें पूर्वपूर्वक उनके पुत्रों की अपेक्षा अधिक बुद्धिमत्ता बढ़ जाता है। वे ही व्यक्ति युद्धों की बुद्धि की धारणा प्राप्त करते हैं। प्राचीनता को विजित करने के लिए वे असंतुष्ट किया जाता है। अपने अधिकारों के अनुसार प्राचीनता के विषय में कभी कहा जाता है कि वह मन्दार और मन्दागता का पुत्र या और कभी कहा जाता है कि विरह को उनके प्रकाश मिलता है।

यदि पूरा दृष्टान्त के दृष्टान्त का अनुसरण करना है तो सरकार का कार्य नहीं बही रहना चाहिए। जिसको कुछ काम नहीं करना है उन्हें अधिक देन देने की क्या आवश्यकता है? यदि वह कुछ पूर्ण दृष्टान्त के आधार पर ही होता है तो विधान की आवश्यकता समाप्त हो गयी और दम्भकोय के समान 'दृष्टान्त' अनेक विषय को निरिच्छ कर देना। अतः या ही सरकार बली बुद्धिमत्ता की निर्भरता को प्राप्त हो चुकी है और इसे पुनर्जीव करने की आवश्यकता है। अपना इसकी बुद्धि का उपयोग करने के लिये अन्तर भीत चुके हैं।

इस समय हम देखते हैं कि यूरोप में विदेशी, ईसाई में एक दिशा में देख रहा है और सरकार दूसरी दिशा में देख रही है, एक आगे की ओर और दूसरा पीछे की ओर। यदि सरकार को पूर्ण दृष्टान्तों के आधार पर चलना है तो कि राष्ट्र प्रगति पर चल रहा है तो एक-एक दिन वह दोनों का अन्तिम विच्छेद होकर रहेगा। जिसकी शीघ्रता एवं सम्यक्ता के साथ वे दोनों इस विषय को एक कर दें उनके लिए यह कहना है। सम्भव होगा।

इंग्लैण्ड में इति, कश्मीरी आदि। अलग-अलग और अलग-अलग की शक्ति एक-एक को पूर्ण दृष्टान्तों का अनुसरण करनेवाली बुद्धि के निरन्तर है। यह शक्ति का प्रत्यक्ष है अन्तिमों का अनेक लक्ष्यों का—जिसमें सरकार का कोई योग्य प्रत्यक्ष नहीं है—तबत और अन्तिम

कीजका सबसे समय समझा इसके अनुसरण करने करते समय किसी व्यक्ति के समक्ष के लिए में कुछ ही गयी तात्पर्य। यह कारण है कि वह नहीं करता करता या कि वह उसे काम करने देनी। तो वांछित अन्तिमों के समक्ष सम्यक्ताय सम्यक्ताय इस अन्तिम शक्ति के साथ ही वह प्रत्यक्ष कर रहे हैं। वे कि वह शक्ति वस्तु में वह कभी के प्रत्यक्ष हो रही है। वे सम्यक्ताय इस कड़ी प्रत्यक्ष का बीच की गली कभी को दे लगे हैं।

यह स्पष्ट हो जाने के बाद कि संविधान सरकार से मिल है अब हम संविधान के मार्गों पर विचार करें।

मार्गों के विषय में सम्पूर्ण की अपेक्षा मठ-मैभिम्य अधिक होता है। सरकार के संचालन के निमित्त एक राष्ट्र को संविधान की आवश्यकता है। यह एक ऐसी सरस बात है जिसे सभी व्यक्ति जो प्रत्यक्ष रूप से राजदरबारी नहीं हैं स्वीकार करेंगे। किन्तु उस संविधान के विभिन्न मार्गों के विषय में नाना प्रकार के मत और प्रदन उठते हैं।

किन्तु यदि इस विषय की चर्चा को ऐसे क्रम से रखा जाय कि उसे अती-भाति समझा जा सके तो हमारी कठिनाई कम हो जायगी।

पहली बात यह है कि एक राष्ट्र को संविधान बनाने का अधिकार है।

दूसरी बात यह है कि राष्ट्र अपने इस अधिकार का प्रयोग पहली बार व्यापपूर्ण ढंग से करता है या नहीं। इतना सरय है कि राष्ट्र के पास जो त्याद बुद्धि है उसीके अनुसार वह अपने अधिकार का प्रयोग करता है, और ऐसा ही निरन्तर करते रहने से धूलें दूर की जा सकेंगी।

जब राष्ट्र में इस अधिकार को स्थापित किया जाता है तब यह डर नहीं है कि वह अपनी दक्षि के लिए इसका प्रयोग करेगा। राष्ट्र यह कभी नहीं चाहेगा कि वह शसती करे।

यद्यपि अमेरिका के सभी संविधान एक ही सामान्य सिद्धांत पर आधारित हैं किन्तु जहाँ तक उनके विभिन्न मार्गों का अथवा सरकार को दिये गये अधिकारों के वितरण का प्रश्न है कोई दो राज्यों ने संविधानों में निरान्त अभिन्नता नहीं है। कुछ अधिक और कुछ कम अटिस हैं।

संविधान बनाते समय सर्वप्रथम यह विचार करना आवश्यक है कि किन सत्त्यों की प्राप्ति के लिए सरकार की आवश्यकता पड़ती है। उत्पराध, यह सोचना चाहिए कि उन सत्त्यों की प्राप्ति के सर्वोत्तम और सब से कम व्यय वाले साधन कौन-से हैं।

राष्ट्रीय संस्था के अतिरिक्त सरकार और कुछ नहीं है और इस संस्था का सक्ष है सावजनिक हित—व्यक्तिगत और सामूहिक हित। प्रत्येक व्यक्ति की इच्छा रहती है कि वह अपना काम करे तथा अपने परिषम और सम्पत्ति का मोह कुछ दान्ति एवं सुरक्षापूर्वक कम-से-कम व्यय पर कर सके। यदि

सरकार के व्यक्ति की इस दृष्टि की पूर्ति हो जाती है तो उन सभी लोगों की प्रति हो जाती है, जिनके लिए सरकार की स्थापना होनी चाहिए।

होम विमर्श-विमर्श नामों में बैठकर सरकार विधान में विचार करने की प्रवृत्ति बन जाती है—ये है विधान-विधान कार्यपालिका-विधान और न्याय-विधान।

किन्तु यदि ठीक संयोजन देखा जाए तो वास्तव में बर्तनिक सरकार (Civil Government) की शक्ति को केवल दो विभागों में बांट सकते हैं विधायिका-शक्ति बचवा कानून बनाने की शक्ति और दूसरी कार्यपालिका शक्ति बचवा उन कानूनों को कार्यान्वित करने वाली शक्ति। इसलिए बर्तनिक सरकार का प्रत्येक कार्य इन दो में से किसी एक प्रकार में रखा जा सकता है।

यहाँ तक कानूनों को कार्यान्वित करने का प्रश्न है, जिसे हम न्यायिक शक्ति (Judicial Power) कहते हैं, वास्तव में यही प्रत्येक देश की कार्यपालिका-शक्ति है। वह वह शक्ति है जिससे प्रत्येक व्यक्ति न्याय की प्रतीक्षा करता है और जिसके कारण कानून का वास्तव होता है। हमें यह है, अमेरिका तथा अन्य में भी वह शक्ति मजिस्ट्रेट से आरम्भ होकर कमरा: यही उच्च न्यायालयों के माध्यम से कार्य करती है।

ये सरकारी शक्तें वह कहें कि ये वह समझते कि एग्ज़िक्यूटिव को कार्यपालिका-शक्ति (Executive Power) कहने का तात्पर्य क्या है। वास्तव में कार्यपालिका-शक्ति केवल एक शक्ति है जिसके अन्तर्गत सरकार के कार्य निष्पादित होते हैं।

अपने विधानों के अधिनियम और राज की उस अधिकारिता के—यों उनके प्रति होती है—हारा ही कानूनों को बन प्राप्त करना चाहिए। यदि इसके अतिरिक्त कोई अन्य किसी प्रकार के अधिकार प्राप्त करना चाहे तो इसका अर्थ होता कि सरकार की पद्धति में नहीं अनुरूपता है। जिन कानूनों को कार्यान्वित करना पड़ता होगा, वे सामान्य रूप से अच्छी नहीं हो सकते।

यहाँ तक विधायिका शक्ति (Legislative power) के प्रत्यक्ष की बात है विमर्श-विमर्श दोनों में विमर्श-विमर्श पद्धतियाँ प्रचलित हैं। अमेरिका में इसे दो वर्गों में विभक्त किया गया है। अंग्रेज में केवल एक वर्ग है। किन्तु दोनों वर्गों में निर्धारित प्रतिनिधियों द्वारा ही एक वर्गों का निर्माण होता है।

जात यह है कि स्वेच्छापूर्वक माने गये अधिकार के धिक्कारीय व्यवहार के कारण मानव-जाति को सरकार के सर्वोत्तम सिद्धांतों और पद्धतियों को जोर निकासने के लिए आवश्यक परीक्षण करने के अवसर इतने कम प्राप्त हो सके हैं कि सरकार विषयक जानकारी अभी आरम्भ हो रही है और बहुत-सी बातों को तय करने के लिए अभी अनुभव की आवश्यकता है।

दो सदनों के विरोध में निर्णयित तर्क प्रस्तुत किये जाते हैं।

(१) विधान-मण्डल के केवल एक भाग का मतदान द्वारा किसी विषय का निर्णय करना असंभव है क्योंकि सम्पूर्ण विधान-मण्डल की दृष्टि से वह विषय उस समय केवल विचाराधीन रहता है और बाद में उसकी नवीन व्याख्याएँ हो सकती हैं।

(२) विधान-मण्डल के प्रत्येक सदन में स्वतंत्र रूप से मतदान द्वारा निर्णय करने में इस बात की संभावना रहती है, और अभ्यास में प्रायः यही होता भी है कि अल्पमत बहुमत पर घातक कर बैठे। कभी-कभी तो यह असंघर्ष अधिक हो जाती है।

(३) दोनों सदनों का स्वेच्छापूर्वक एक दूसरे पर अंकुश रसना अथवा उसका नियन्त्रण रसना असंभव है क्योंकि उचित निर्वाचन के सिद्धांत के आधार पर यह सिद्ध नहीं किया जा सकता कि उन दोनों में से कौन दूसरे की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान अथवा अच्छा है। वे एक दूसरे की घुरे कार्यों में ही नहीं अपने कार्यों में भी रोक सकते हैं। इसीलिए हम जिन्हें अधिकार का उचित उपयोग करने की बुद्धि नहीं प्रदान कर सकते अथवा जिनके प्रति हमें यह विश्वास नहीं है कि वे अधिकारों का उचित प्रयोग करेंगे उन्हें अधिकार देने से जो संकट उत्पन्न होता है हमें उसके प्रति सतर्क रहना चाहिए।

एक सदन के विरोध में यह तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि वह किसी विषय में अत्यधिक तीव्रता कर सकता है। किन्तु इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि जब उस देश का संविधान उन अधिकारों की व्याख्या तथा उन सिद्धांतों की स्थापना कर देता है जिनके आधार पर विधान-मण्डल को कार्य करना है तो इस दिशा में अपेक्षाकृत अधिक प्रभावशाली निग्रह वर्तमान है। एक सदाहरण सीजिए इंग्लैण्ड में जार्ज प्रथम के राज्य काल के आरम्भ में समाजों की कार्य-अवधि को बढ़ाने के विषय में इंग्लैण्ड की संसद में एक क्रांत्रीय स्वीकार किया। यदि उसी प्रकार का कोई विषयक अमेरिका के विधान-मण्डल में

अनुसंधान का काम तो पहले विज्ञान में अधिकाधिक निष्पन्न प्रस्तुत है। संविधान में यह उल्लिखित है— काम यही तक जा सकते हैं, इसके बाये नहीं।

किन्तु एक सदन के विरोध में बिना दिये उन्हें और साव-ही-साव को सदन के द्वारा बलवत् होनेवाली व्यवस्थितियों अथवा कुछ मुर्बतियों का निवारण करने के निमित्त सिम्बलित व्यवस्थितियों को प्रस्तावित किया गया है —

(१) प्रतिनिधित्व केवल एक हो।

(२) इस प्रतिनिधित्व को बिदेसी द्वारा दो या तीन भागों में बाँट दिया जाए।

(३) अत्यधिक प्रस्तावित विधेयक पर कल्पित उन सभी भागों में कर्षा हो, सिद्धि के लिये एक दूसरे को मजबूत करें किन्तु मतदान न हो। अनुपस्थित सभी प्रतिनिधि एकत्र होकर सामान्य कर्षा करें और मतदान द्वारा किसी निर्णय पर पहुँचें।

इस प्रस्तावित सुधार के साथ एक अन्य मुख्य इच्छाएँ प्रस्तावित किया गया है कि प्रतिनिधित्व निरन्तर नवीन होता रहे और यह यह है कि एक वर्ष के बाद एक तिहाई प्रतिनिधियों का कार्य-काल समाप्त कर दिया जाए और नये निर्वाचन द्वारा नये प्रतिनिधियों का चुनाव हो।

दूसरे वर्ष के बाद प्रतिनिधियों के दूसरे तृतीयका का कार्य-काल समाप्त कर दिया जाए और उनके स्थान की पूर्ति पूर्ववत् हो। अत्यधिक तीसरे वर्ष सामान्य निर्वाचन हो।

किन्तु संविधान के विभिन्न भाग बाहे कि वह कब में व्यवस्थित क्रिये कार्य पड़ता है स्वतन्त्रता की विज्ञता बढा करने के लिए एक सामान्य विज्ञांत है; यह यह है कि यह प्रकार की सामुदायिक सरकारें वास्तव-वास्तव के लिए पड़ता है और प्रतिनिधित्व पर आधारित सरकार स्वतन्त्रता है।

अमेरिका में केवल राज्यपाल का यह ही एक ऐसा पर है जो किसी भी विदेसी के लिए बाँट है; और इंग्लैण्ड में यही एक पर है कि पर एक विदेसी निरुक्त किया जाता है। इंग्लैण्ड में एक विदेसी संसद का संरक्षण नहीं हो सता किन्तु यह सता हो सकता है। यदि विदेसियों का वर्जन करने के लिए कोई कारण है तो उनका वर्जन केवल उन वर्षों के विषय में होना चाहिए जहाँ सर्वाधिक कारणों की जा सकती है और जहाँ अनुपस्थित और स्वार्थ के अत्यधिक प्रोत्साहन द्वारा सर्वाधिक विवाह प्राप्त किया जाता है।

सरकार के एक विभाग के विधि के लिए सर्वाधिक जनावाक्य व्यवस्था की जाती है और दूसरे भाग के लिए कोई व्यवस्था नहीं है। परिणाम यह है कि एक के पास प्रशासन का शासन प्रस्तुत हो जाता है और दूसरा जटिल होने की स्थिति में रक दिया जाता है। वैसे व्यवस्था कनेक्ट में है यदि वैसे ही व्यवस्था ईश्वर में हो तब तो वही भी व्यय होता है। उनके बीचों में भी एक वर्ष पर प्रशासन के अनुसार का व्यवहार किया जा सकता है।

अमेरिकी संविधान में दूसरा सुधार-आर्य है व्यक्ति-निष्ठा-धर्म को सुनिश्चित करना। राज्य-निष्ठा-धर्म (Oath of allegiance) केवल राष्ट्र के प्रति होती चाहिए। एक व्यक्ति को राष्ट्र के अतीक-धर्म में मानना अनुचित है। राष्ट्र का कुछ सर्वोपरि है। अतः किसी व्यक्ति के नाम पर अपना अतीक-धर्म पढ़ति से राज्य-निष्ठा-धर्म लेकर उसे पूरा नहीं मानना चाहिए। यहाँ में अतिरिक्त नागरिक धर्म राष्ट्र, कानून और राजा के नाम पर भी जाती है। यह धर्म अनुचित है। यदि धर्म के नाम पर व्यवस्था है तो, क्या कि कनेक्ट में होता है। केवल राष्ट्र के प्रति धर्म बहल करने की प्रथा होती चाहिए।

कानून अच्छे हो सकते हैं और नहीं भी हो सकते हैं। किन्तु इस धर्म के अन्तर्गत पर, राष्ट्र के कुछ को बढ़ाने में सहायक होने के अतिरिक्त कानून का और कोई धर्म नहीं हो सकता और इसलिए राष्ट्र धर्म में कानून का धर्म निहित है। उपर्युक्त धर्म का धर्म अंतर्गत इसलिए अनुचित है कि सभी सरकार की व्यक्ति-निष्ठा धर्मों की प्रथा समाप्त कर देनी चाहिए। ऐसी धर्मों एक और ती जगहों के अन्तर्गत हैं और दूसरी और बावला है। धर्म के समय अपनी सृष्टि का पता देखने के लिए नृतिधर्मों के नाम का समीक्षा नहीं होना चाहिए। किन्तु यदि उसका नाम वैसे कि कहा जा चुका है राष्ट्र के अतीक स्वतन्त्र दिया जाता है तो यह इस अन्तर्गत पर आवश्यकता है अतिरिक्त है।

किन्तु सरकार की प्रथा स्थापना के अन्तर्गत पर धर्म-अनुष्ठान के लिए चाहे की जगह-आवेग की बात, किन्तु बात में यह प्रथा समाप्त होती चाहिए। यदि सरकार को धर्म का धर्म चाहिए तो यह इस बात पर प्रभाव है कि यह सरकार अन्तर्गत धर्म नहीं है, और न उसे अन्तर्गत चाहिए। सरकार की

किन्तु राष्ट्र, संविधान बनाने के महान कार्य में अपसर हो रहे हैं, वरन् सरकार के उस विभाग की जिस कार्यपालिका-विभाग (Executive) कहा जाता है प्रकृति एवं कार्य पर अपेक्षाकृत अधिक यथार्थता के साथ विचार करेंगे। विधान-विभाग और न्यायिक-विभाग क्या है, इसे प्रत्येक व्यक्ति जानता है किन्तु इन दोनों से भिन्न ईंग्लैण्ड में जिसे कार्यपालिका-विभाग (Executive) कहा जाता है वह या तो राजनैतिक आधिपत्य है अथवा मतात बस्तुओं का दोलनमास है। केवल एक ऐसे प्रजासत्ताकीय विभाग की आवश्यकता है जिसके पास राष्ट्र के विभिन्न भागों से अथवा विदेशों से सूचनाएँ या प्रतिवेदन राष्ट्रीय प्रतिनिधियों के सम्मुख प्रस्तुत करने के लिए भेजे जायें। किन्तु इस विभाग का कार्यपालिका-विभाग कहना संगत नहीं, और हम इसे विधान-मण्डल की अपेक्षा सर्वदा कम महत्व का मानेंगे। कानून बनाने का अधिकार किसी देश का सब से बड़ा अधिकार है इसलिए विधान-मण्डल के अतिरिक्त सभी कुछ प्रजासत्ताकीय विभाग हैं।

संविधान के विभिन्न भागों के संघटन और सिद्धांतों की व्यवस्था के बाद उन व्यक्तियों की व्यवस्था का महत्व है, जिन्हें राष्ट्र सांविधानिक अधिकारों के निष्पादन का कार्य सौंपा है।

एक राष्ट्र यदि किसी व्यक्ति को किसी विभाग में नियुक्त करता है अथवा कोई विभाग उसे सौंपता है, तो राष्ट्र को उस व्यक्ति के समय और उसकी सेवाओं को उसीके व्यय पर स्वीकार करने का अधिकार नहीं है, और यह बात भी तर्कसम्मत नहीं है कि सरकार के किसी भाग की सहायता के लिए व्यवस्था की जाय और अन्य के लिए न की जाय।

माना कि सरकार के किसी विभाग के सौंपे जाने का सम्मान स्वयं ही पर्याप्त पुरस्कार है, किन्तु यही बात प्रत्येक व्यक्ति के विषय में होनी चाहिए। यदि किसी देश के विधान-मण्डल के सदस्यों को अपने व्यय पर राष्ट्र की सेवा करनी है, तो जिसे कार्यपालिका-विभाग कहते हैं, चाहे वह राजतन्त्रीय हो अथवा अन्य प्रकार का उसे भी उसी रूप में राष्ट्र की सेवा करनी चाहिए। एक को वेतन देना और दूसरे से अवैतनिक सेवा स्वीकार करना असंभव है।

अमेरिका में सरकार के प्रत्येक विभाग को समुचित वेतन दिया जाता है किन्तु किसी को अनावश्यक वेतन नहीं दिया जाता है। दूसरी ओर, ईंग्लैण्ड में

सरकार के एक विभाग के निर्वाह के लिए अर्थात्कि जगदल्लय व्यवस्था की जाती है और दूसरे भाग के लिए कोई व्यवस्था नहीं है। परिणाम यह है कि एक के पास अहाबार का साधन प्रस्तुत हो जाता है और दूसरा यह होने की स्थिति में रह दिया जाता है। जैसी व्यवस्था अमेरिका में है। यदि वही ही व्यवस्था ईश्वर में हो जाय तो वहाँ भी व्यवस्था होना है। इसके पीछे से भी हम सब पर अहाबार के बहुतायत का उपचार किया जा सकता है।

अमेरिकी अधिकांश में वृत्त सुधार-कार्य है अर्थात्कि-निष्ठा-वचन की कृतिव्यवस्था। राज्य-निष्ठा-वचन (Oath of allegiance) केवल राष्ट्र के प्रति होती चाहिए। एक व्यक्ति को राष्ट्र के प्रतीक-रूप में मानना अनुचित है। राष्ट्र का कुछ सर्वोपरि है। अतः किसी व्यक्ति के साथ पर अपना प्रतीक-व्यवस्था करने से राज्य-निष्ठा-वचन लेकर उसे कुछ नहीं बनाना चाहिए। फल में अर्थात्कि राज्य-वचन राष्ट्र का मूल और राष्ट्र के नाम पर ही जाती है। यह व्यवस्था अनुचित है। यदि व्यवस्था लेना आवश्यक है तो, जैसा कि अमेरिका में होता है, केवल राष्ट्र के प्रति व्यवस्था प्रस्तुत करने की प्रथा होती चाहिए।

कानून अच्छे ही सकते हैं और नहीं भी हो सकते हैं। किन्तु इस व्यवस्था के अन्तर्गत पर राष्ट्र के कुछ की प्रकृति में संशय होने के अतिरिक्त कानून का और कोई अर्थ नहीं हो सकता और इसलिए राष्ट्र व्यवस्था में कानून का अर्थ विहित है। अर्थात्कि व्यवस्था का ही अर्थ इसलिए अनुचित है कि वही सरकार की अर्थात्कि-निष्ठा व्यवस्था की प्रथा बनाता कर देनी चाहिए। ऐसी व्यवस्था एक और तो व्यवस्था के अन्तर्गत है और दूसरी और जाती है। व्यवस्था के अन्तर्गत अपनी धर्म का पालन करने के लिए अर्थात्कि के अन्तर्गत नहीं होना चाहिए। किन्तु यदि वही नाम जैसा कि वही का कुछ है, राष्ट्र के प्रतीक स्वरूप दिया जाता है तो यह इस अन्तर्गत पर व्यवस्था से अधिक है।

किन्तु सरकार की व्यवस्था स्थापना के अन्तर्गत पर व्यवस्था के लिए वही जो अन्तर्गत की बात किन्तु वही में यह व्यवस्था होती चाहिए। यदि सरकार की व्यवस्था का अर्थ चाहिए तो यह इस बात का अन्तर्गत है कि यह सरकार अन्तर्गत की नहीं है, और न ही अन्तर्गत चाहिए। सरकार की

जो होता चाहिए, यदि उसे नहीं बना दीजिए, तो वह अपना भार स्वयं सभास लेगी।

विषय के इस पक्ष की चर्चा को समाप्त करते हुए मैं यह कहूँगा कि नये संविधान ने पुनर्विचार, परिवर्तन और संशोधन की जो व्यवस्था स्वीकार की है, वह संविधानिक स्वतंत्रता की निरन्तर सुरक्षा और प्रगति के लिए किये गये सर्वाधिक सुधारों में से एक है।

भावी पीढ़ियों को सृष्टि के अन्त पर्यन्त नियंत्रित रखने तथा उनके अधिकारों से उन्हें संरक्षा के लिए संबंधित करने की मांग्यता को जो 'बर्क' के राजनीतिक मत का आधार सिद्धांत है इस समय इतना मुख्यास्पद माना जाता है कि उसे विवाद का विषय बनाना उचित नहीं है।

सरकार-विषयक जानकारी अभी शुरुआत हो रही है। अब तक व्यक्ति का प्रयोग मात्र होने के कारण सरकार ने अधिकारों की सफल जीत का निवेदन किया और वह पूर्णतः सम्मति के रूप में रही है। अब तक स्वतंत्रता का प्राप्ति ही उसका निश्चय करने वाला था जब तक सरकार के सिद्धान्तों की उन्नति वास्तव में कम हुई होगी।

अमेरिका और फ्रांस के संविधानों ने था तो पुनर्विचार के लिए एक समय निश्चित कर दिया है अथवा सुधार विषयक प्रगति का निर्णय कर दिया है।

सिद्धान्तों का मतों और व्यवहारों से सम्बन्ध स्थापित करने की कोई ऐसी व्यवस्था करना कदाचित् असम्भव है जिसमें बड़ी वर्षों के बाद परिस्थितियों की प्रगति कुछ अंशों में व्यक्तिगत न उत्पन्न कर दे अथवा उसे असंभव न सिद्ध कर दे। इसलिए सुधारों को हतोत्साहित करने या कमिष्ठियों को उत्तेजना प्रदान करने वाली असुविधाओं को राखित होने से रोकने के लिए सबसे अच्छा मार्ग यही है कि जैसे ही कोई असुविधा दिखायी पड़े जैसे ही उसका नियमन कर दिया जाए।

समुच्च के अधिकार सभी पीढ़ियों के समान के अधिकार हैं उन पर किसी का एकाधिकार नहीं हो सकता। जो अनुमरणीय है वह योग्यता के बल पर अनुमरणीय बना रहेगा और इसीमें उसकी सुरक्षा निहित है न कि कृपा कर्तृ में। अब एक व्यक्ति अपने उत्तराधिकारियों के लिए अपनी सम्पत्ति

मेना है तो उसे स्वीकार करने के लिए कोई सम्भव नहीं लगाया। फिर संविधानों के विषय में हम अन्तर्गत व्यवहार क्यों करें ?

वर्तमान समय की स्थिति के अनुकूल संविधान की जो सर्वोत्तम योजना सम्भव है कुछ क्यों के बाद उनकी उत्तमता बहुत कुछ कम हो सकती है। सरकार के विषय में अनुभव को निश्चय नहीं माना जा सकता है। वर्तमान भारतीय प्रकृति की सरकारों की अधिपत्या ज्योंही सपास होयी, सभी सप्ताह राष्ट्रीय की पारस्परिक वैयक्तिक स्थिति बरत साम्यी।

अनुभव को ऐसी समीक्षा प्रिया नहीं ही जायगी कि वह अपनी जाति के अन्य जातियों को अनुसंधान, केवल इसलिए कि सर्वोत्तम अनुभव एक ऐसे देश में प्राप्त किया है, जहाँ अनुभवों को निश्चय निश्चय क्यों के सम्पूर्ण रखा जाता है। चूंकि संविधान का सम्पूर्ण वैयक्तिक और वैयक्तिक परिस्थितियों के रूपा इसलिए वैयक्तिक अन्तर्गत प्रत्येक किसी भी परिवर्तन के अनुकूल व्यवस्था करना संविधान का महत्वपूर्ण अंग है।

हम ईर्ष्या और घात की पारस्परिक राष्ट्रीय प्रकृति में परिवर्तन देख रहे हैं जो कि यदि अतीत के कुछ क्यों कर विचार करें तो स्वयं एक जाति है। कम जाति का या विवाह कर सकता वा कि अतीत की राष्ट्रीय जाति का ईर्ष्या में सार्वजनिक सम्बंध होना अन्तर्गत दोनों राष्ट्र परस्पर वैयक्तिक के अनुभव होये।

इसके अन्तर्गत होता है कि अनुभव को यदि सरकारों द्वारा ज्ञात नहीं किया जाय तो वह अतीतः अनुभव का निश्चय है और अन्तर्गत प्रकृति अपने वास्तविक रूप में नहीं है। ईर्ष्या और घात की निश्चय जाति को अन्तर्गत दोनों देशों की सरकारों ने अतीतः किया और कर-निर्धारण के लिए उपयोगी बनाया वह एक समय हुई है और जाति के जाति को स्वीकार कर रही है।

राज्य-कार्यों की जाने अन्तर्गत समय में जाने अन्तर्गत है और अन्तर्गत अन्तर्गत अन्तर्गत का वह अन्तर्गत एक समय अपनी विवादास्पदता है। अन्तर्गत अन्तर्गत अन्तर्गत अन्तर्गत है, और अन्तर्गत इसके अन्तर्गत अन्तर्गत अन्तर्गत है किन्तु अन्तर्गत अन्तर्गत है।

अनुभव की अन्तर्गत अन्तर्गत के अन्तर्गत ही सरकार को भी अन्तर्गत अन्तर्गत का निश्चय होना चाहिए। किन्तु अन्तर्गत के एक कर जाति-जाति में अन्तर्गत अन्तर्गत

और पुष्ट मनुष्यों का एकाधिपत्य रहा है। उनके कुप्रबन्ध का प्रमाण इसके अधिक क्या हो सकता है कि प्रत्येक राष्ट्र जिस तथा करों के भार से कराह रहा है और सारा विश्व बड़ी तीव्र गति से झगड़ों में डाल दिया गया है।

सरकारें अभी-अभी इस निकृष्ट स्थिति से बाहर निकल रही हैं इसलिए सरकार-विषयक मुद्धार किस सीमा तक जा सकता है यह निर्दिष्ट करने का अभी अवसर नहीं है।

सरकार के मूल तत्वों की विवेचना

मनुष्य के लिए 'सरकार' की चर्चा सर्वाधिक मनोरंजक है। मनुष्य चाहे चनी हो या निर्धन उसकी सुरक्षा और अधिकांश बंधों में उसकी उत्पत्ति का सम्बन्ध सरकार से है। इसलिए सरकार-विषयक सिद्धान्तों से अवगत होना तथा यह जान लेना कि उन सिद्धान्तों का प्रयोग किस प्रकार होना चाहिए, मनुष्य का स्वार्थ और कर्तव्य है।

पीढ़ियों ने प्रत्येक कला और विज्ञान का अध्ययन किया, उसकी उत्पत्ति की तथा अपने प्रगतिशील परिधम द्वारा उसे पूर्णता की स्थिति तक पहुँचा दिया। किन्तु 'सरकार' विषयक विज्ञान अपनी प्रारम्भिक दिशा में ही पड़ा रहा। अमेरिकी क्रांति के आरम्भ तक सरकार' के सिद्धान्तों में कोई सुधार नहीं हुआ और उनके प्रयोग में भी कदाचित् ही कोई सुधार हुआ था। अंत को छोड़कर यूरोप के अन्य देशों में अज्ञानता के सुदूर सुनों में स्थापित सरकार के स्वरूप और पद्धतियाँ आज दिन भी प्रचलित हैं। उनकी पुरातनता ने सिद्धान्तों का स्वाम ने लिया है। उनके मूल विषय में अथवा उनके अस्तित्व के अधिकारों का अनुसंधान करना निषिद्ध है। यदि कोई यह पूछे कि यह कैसे हुआ तो उत्तर अत्यन्त सरल होगा कि वे सरकारें उससे सिद्धान्त पर स्थापित हैं और वास्तविकता का पता लगाने के प्रत्येक प्रयत्न को रोकने में अपनी पूरी शक्ति का प्रयोग करती हैं।

मानव-जाति पर प्रभाव डालने, उसे छूटने तथा दास बनाने के लिए सरकार विषयक विज्ञान को जिस रहस्यावरण से ढँका गया है उसके बावजूद भी

नगर-विषयक सम्बन्धी सम्पन्न बोधपत्र एवं सम्पन्न राष्ट्रपुर्ण है। यदि बंधनार्थ संचित दिग्गु के कारण किया जाय तो बलवत्तम योग्यता भी बाटे में न पड़ेगी। अतः कता मन्त्र विज्ञान का कोई नूतन सिद्धान्त होता है जहाँ से उक्त सम्पन्न कारण किया जाता है तथा जिसके द्वारा सम्पन्न विषयक अर्थ में बहायता प्राप्त होती है। सरकार सम्पन्नी विज्ञान की वर्षा करते वक्त भी इसी पद्धति का अवलम्बन करना चाहिए।

इसलिए भूतनीयता प्रयोजन सम्पन्नतत्तात्मक या उचित बाह्य साधन-कारियों के विभिन्न उपकरणों की वर्षा करके विषय की कारण में ही बलवत्तम व बलवत्तम, अच्छा यह होता कि इस सरकार के उन स्वयं की वर्षा करें, जिन्हें इस नूतन नैर कह सकते हैं या जिसके सम्पन्न सभी वस्तुओं का बोध हो जाता।

सरकार के नूतन नैर कैसे हो—

(१) निर्वाचन और प्रतिनिधित्व पर आधारित सरकार।

(२) आनुवंशिक वस्तुविचार पर आधारित सरकार।

सरकार के सभी स्वयं और पद्धतियों का संभावित उत्पन्न हो दोनों के सम्पन्न हो जाता है क्योंकि या तो के निर्वाचन की पद्धति पर स्थापित होती वस्तु आनुवंशिक वस्तुविचार पर। जहाँ तक विभिन्न सरकार, वही सरकार हमारे में भी और जो हमारे में इस समय है का प्रत्यक्ष है, उत्पन्न वस्तुविचार में कोई उत्पन्न नहीं पड़ता है, क्योंकि वह हम वस्तु के भावों पर अवलम्बन विचार करते हैं तो के या तो प्रतिनिधि है मन्त्र आनुवंशिक।

इसलिए सर्वप्रथम हमें इन दोनों प्राथमिक विचारों की प्रतीति की जांच करनी चाहिए। यदि के दोनों प्राथमिक दृष्टि के सम्पन्न बिन्दु होते हैं तो हम अपने के बिन्दु वस्तु करें यह केवल अपनी-अपनी वस्तु की बात होगी। यदि एक स्पष्ट दृष्टि की अच्छा अधिक अच्छा है तो यह उत्पन्न द्वारा विलम्ब का मार्ग-दर्शन करता है। दिग्गु यदि हमें से एक उत्पन्न वस्तु है कि उसे भीष्ट करने का अधिकार नहीं है तो निर्वाचन स्वयं हो जाता है। क्योंकि जहाँ तो के एक को चुनाव आवश्यक है, जहाँ एक का निर्वाचन करने का दृष्टि का स्वीकार हो जाता है।

जो अन्तिम इस समय निम्न में तीन पद्धति है, उनका सम्पन्न इस सम्पन्न-

स्थिति में हुआ; और वर्तमान युद्ध मनुष्य के अधिकारों पर आधारित प्रतिनिधि-पद्धति तथा अपहरण पर आधारित आनुवंशिक-पद्धति के मध्य होने वाला संघर्ष है। जिसे राजतन्त्र और कुलीनतन्त्र कहते हैं, वे आनुवंशिक पद्धति के पोख तत्व या मदाण हैं और यदि यह पद्धति समाप्त हो जाय तो वे अपने आप समाप्त हो जायेंगे।

यदि राजतन्त्र और कुलीनतन्त्र आदि शब्द न प्रयुक्त हों बल्कि इनके स्थान में किन्हीं अन्य शब्दों का प्रयोग किया जाय, तो भी सरकार की आनुवंशिक पद्धति में यदि वह आरम्भ रहे कोई परिवर्तन नहीं होया। किसी भी नाम के अन्तर्गत यह पद्धति वैसी ही रहेगी जैसी है।

वर्तमान युग की प्रांतियाँ प्रतिनिधि-पद्धति पर आधारित होने के कारण आनुवंशिक-पद्धति के विरुद्ध अपना परिषदों वैधियुक्त निश्चित रूप से प्रकट करती हैं। अन्य कोई नेद सम्पूर्ण सिद्धांत को स्याविष्ट नहीं कर पाता है।

वस्तु विषय का सामान्य आरम्भ कर देने के पश्चात् अब मैं सर्व प्रथम आनुवंशिक-पद्धति का परीक्षण करूँगा क्योंकि समय के विचार से यह पद्धति अपेक्षाकृत अधिक प्राचीन है। प्रतिनिधि-पद्धति वर्तमान युग का आविष्कार है। इसलिए कि मेरे मत के बारे में किसी प्रकार की शंका उत्पन्न न हो सके मैं इसी स्वतः पर स्पष्ट कह देना चाहता हूँ कि रीसागणित में एक भी ऐसा सिद्धांत नहीं है जिसमें गणित सम्बन्धी सत्य इस सत्य से अधिक हो कि आनुवंशिक सरकार की अस्तित्व में रहने का कोई अधिकार नहीं है। इसलिए जब हम एक व्यक्ति से आनुवंशिक अधिकारों का प्रयोग छीन लेते हैं तो हम उससे ज्ञा नहीं लेते हैं जिसे धारण करने का न तो उसे अधिकार था न वह किसी बान्धव या प्रजा के द्वारा उसे प्राप्त हो सकता था और न उसका प्राप्त हो सकना कभी सम्भव ही है।

आनुवंशिक-पद्धति के विषय में अब तक जिसने उसके प्रयुक्त किये गये हैं वे मुख्यतः उसकी मूर्खता तथा अच्छी सरकारों के कार्यों के लिए उसकी अपेक्षा पर आधारित रहे हैं। हमारे विवेक और कल्पना के सम्मुरा इससे बढ़ कर मूर्खता और क्या प्रस्तुत हो सकती है कि एक राष्ट्र की सरकार—जैसा कि प्राप्त होता है—एक ऐसे वास्तव के हाथों में पड़े जो निश्चित रूप से अनुमानी और प्रायः मूर्ख से कुछ ही अच्छा होता है। राष्ट्र के प्रत्येक प्रतिभासम्पन्न, परिश्रम और मोड़ व्यक्ति का यह अपमान है।

यित उस हथ आनुवंशिक-प्रवृत्ति पर तर्क आरम्भ करते हैं, उही तब वह व्याख्यात्मक हो पाती है। मस्तिष्क में उसके विषय में केवल एक विचार उठने दीजिए, बहुतों विचार उसका अनुसरण करेंगे। तुल्यता धार्मिक वा मानसिक दुर्बलता, बचपन, बढिछोछता नैतिक चरित्र का अभाव संश्लेष में सभी सम्भीर बचपन हस्तक्षेपकारक शेष एक साथ इस प्रवृत्ति को व्याख्यात्मक विद्ध करते हैं। इस प्रवृत्ति के व्यापार को पाठकों की कल्पना पर छोड़ कर, मैं प्रसन्न के अनेका कुछ अधिक महत्वपूर्ण बंध की चर्चा कर रहा हूँ। और वह यह है कि क्या इस प्रकार की प्रवृत्ति को बने रहने का अधिकार है।

इस बात की संतोषजनक आवश्यकता के लिए कि किसी वस्तु को बने रहने का अधिकार है, हमें यह मान लेना आवश्यक है कि उसे उत्पन्न होने का अधिकार था या नहीं। यदि उसे पैदा होने का अधिकार नहीं था तो स्पष्ट है कि उसे बने रहने का अधिकार भी नहीं है। आनुवंशिक प्रवृत्ति किस अधिकार के आरम्भ हुई? कोई व्यक्ति इस प्रश्न पर केवल विचार करना आरम्भ कर दे, और उसे पता चलेगा कि वह कोई भी संतोषजनक उत्तर नहीं पा सकता।

किसी व्यक्ति अथवा बंध का अपने को तथा अपनी संतानों को सर्वप्रथम एक पक्ष का दावक बनाने तथा अपनी वरम्वरा स्थापित करने का अधिकार, एक ही अधिकार रहा जो रोबेस्पियर (Robespierre) की छाँट में था। यदि रोबेस्पियर को कोई अधिकार नहीं था तो अपर्युक्त किसी व्यक्ति वा बंध को भी कोई अधिकार नहीं था, और यदि किसी व्यक्ति वा बंध को कोई अधिकार था तो रोबेस्पियर को अधिकार क्यों नहीं था? किसी बंध में अधिकारमय श्रेष्ठता को—विश्व के आधार पर अक्षरमयतः तर्कारों आरम्भ हो सकती थी—हुँक निरालम्ब अक्षय्य है। यही एक अधिकार का प्रसन्न है, कैपेट (Capet) रोबेस्पियर बंध (Matai) आदि सभी एक वरम्वरा पर है। यह अधिकार केवल एक वा नहीं है।

यह विचार कि अक्षरमयतः सरकार किसी एक बंध के ऐकान्तिक अधिकार के रूप में उत्पन्न नहीं हो सकती थी स्वयंभूता की रक्षा में एक कदम है। इसी विचारहीन बात यह है कि क्या एक बार उत्पन्न हो कर समय के प्रभाव से यह अधिकार का फल से बचती है।

इसे स्वीकार करना दुर्भाग्य की स्वीकार करना हीना क्योंकि यह वा तो

स्थिति में हुआ; और वतमान युद्ध मनुष्य के अधिकारों पर आधारित प्रतिनिधि पद्धति तथा अपहरण पर आधारित आनुवंशिक-पद्धति के मध्य होने वाला संघर्ष है। जिसे राजतन्त्र और कुसीनतन्त्र कहते हैं वे आनुवंशिक पद्धति के पीछे ठर जा सकाए हैं, और यदि वह पद्धति समाप्त हो जाय तो वे अपने आप समाप्त हो जायेंगे।

यदि राजतन्त्र और कुसीनतन्त्र आदि शब्द न प्रयुक्त हों बल्कि इनके स्थान में बिम्बी अन्य धर्मों का प्रयोग किया जाय तो भी सरकार की आनुवंशिक पद्धति में, यदि वह आरम्भ रहे कोई परिवर्तन नहीं होगा। किसी भी नाम के अन्तर्गत यह पद्धति वैसी ही रहेगी, वैसी है।

वर्तमान युग की शक्तियाँ प्रतिनिधि-पद्धति पर आधारित होने के कारण आनुवंशिक-पद्धति के विरुद्ध अपना परिणाम वैशिष्ट्य निरूपित रूप से प्रकट करती हैं। अन्य कोई भेद सम्पूर्ण सिद्धांत को समाविष्ट नहीं कर पाता है।

अस्तु विषय का सामान्य आरम्भ कर देने के पश्चात् जब मैं सर्व प्रथम आनुवंशिक-पद्धति का परीक्षण करूँगा क्योंकि समय के विचार से यह पद्धति अपेक्षाकृत अधिक प्राचीन है। प्रतिनिधि-पद्धति वतमान युग का आविष्कार है। इसलिए कि मेरे मत के बारे में किसी प्रकार की शंका उत्पन्न न हो सके मैं इसी स्पष्ट पर स्पष्ट कह देना चाहता हूँ कि रेसापेक्षित में एक भी ऐसा सिद्धांत नहीं है जिसमें गणित सम्बन्धी सत्य इस सत्य से अधिक हो कि आनुवंशिक सरकार जो अस्तित्व में रहने का कोई अधिकार नहीं है। इसलिए जब हम एक व्यक्ति से आनुवंशिक अधिकारों का प्रयोग छीन लेते हैं तो हम उससे वह छीन लेते हैं जिसे धारण करने का न तो उसे अधिकार था न वह किसी बान्धन या प्रथा के द्वारा उसे प्राप्त हो सकता था और न उसका प्राप्त हो सकना कभी सम्भव ही है।

आनुवंशिक-पद्धति के विपक्ष में जब तक जितने तर्क प्रस्तुत किये गये हैं वे मुख्यतः उसकी मूर्खता तथा अच्छी सरकारों के कार्यों के लिए उसकी अयोग्यता पर आधारित रहे हैं। हमारे विवेक और कल्पना के समुद्रा इतने बड़े कर मूर्खता और क्या प्रस्तुत हो सकती है कि एक राष्ट्र की सरकार—जैसा कि प्रायः होता है—एक ऐसे बालक के हाथों में पड़े जो निरूपित रूप से अनुमतिहीन और प्रायः मूर्ख से कुछ ही अच्छा होता है। राष्ट्र के प्रत्येक प्रतिभासम्पन्न परिश्रमी और प्रौढ़ व्यक्ति का यह अपमान है।

मिठा है। यदि व्यवस्था में अधिक व्यक्तियों की संस्था अपेक्षाकृत अधिक हो तो इस दशा में भी यह सिद्धांत सतता ही ठीक होगा।

व्यवस्थाओं के अधिकार सत्ते ही विध्व है जिससे व्यवस्थाओं के। उनमें अन्तर केवल व्यवस्थायुक्त है। अधिकारों के विषय में उनमें कोई अन्तर नहीं है। बाव भी अवयवक है, व्यवस्था होने पर उन्हें विपक्ष के रूप में भी अधिकार प्राप्त होने लगे। बहुतों को बनावे रखना चाहिए। व्यवस्थाओं के अधिकार व्यवस्थाओं के प्रति संरक्षण में रहते हैं।

अवयव करने अधिकारों को धीरे नहीं सकता और संरक्षक उसका अधिकार भी नहीं सकता है। परिणामतः राष्ट्र के व्यवस्था व्यक्तियों को, जो इस समय कानून बनाने वाले हैं और जीवन की भाषा में उनकी अपेक्षा बोझे जाने हैं वो अभी अवयवक है तथा जिसकी कुछ ही दिनों के बाद स्थापना होना अनुबंधित सरकार अवयवक यदि स्पष्ट रूप से कहा जाय। शासकों के आनुवंशिक संरक्षण के स्थापना करने का अधिकार नहीं है और न हो सकता है। वह एक ऐसा अवयव है जो राष्ट्र के अवयवकों को कानून बनाने के समय उनके इन अधिकारों से वंचित रखता है, जिन्हें वे व्यवस्था होने पर विपक्ष के रूप में मानेंगे। बाव-ही-साव वह उन्हें एक ऐसी शासन-व्यवस्था के आधीन रख देने का अवयव है जिसे अपनी आत्मसम्पत्ति की स्थिति में वे न तो करनी स्वीकृति दे सकते हैं और न अवयवक कर सकते हैं।

यदि एक व्यक्ति को इस प्रकार के कानून बनाने के समय अवयवक है, कुछ नहीं पूर्व पैदा हुआ होता ताकि वह कानून बनाने के समय समझीत वर्ष की व्यवस्था का होता तो वह कानून का विरोध करने वाले अवयवक अवयवक मित्राण्ड एवं जीवित अवयवक करनी और उसके विपक्ष में मत देने का अवयवक अधिकार इस प्रकार से मान्य होता।

इसलिए यदि कोई कानून उसे अवयवक प्राप्त करने पर, उन्हीं अधिकारों का प्रयोग करने से रोक्ता है जिसका प्रयोग करने का उसे अधिकार उस समय अवयवक रहने पर होता तो निश्चय ही यह एक ऐसा कानून है, जो राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति के, जो कानून बनाने के समय अवयवक होगा—अधिकारों को धीरे-धीरे एवं समान्य कर देनेवाला है और परिणामस्वरूप इस प्रकार के कानून को बनाने का अधिकार नहीं हो सकता है।

समय को सिद्धांत के स्थान पर रखना हुआ, अथवा समय को सिद्धांत से श्रेष्ठ मानना हुआ। किन्तु वास्तविकता यह है कि सिद्धांत के प्रति समय का उत्तर ही सम्बन्ध और प्रभाव है जितना समय के प्रति सिद्धांत का। आज से सहस्रों वर्ष पूर्व जो गसती आरम्भ हुई वह इस समय के लिए भी ऐसी घत्ती है मानो सहस्रों वर्षों का प्रमाण प्राप्त किये हुए है।

सिद्धांतों के लिए समय निरन्तर गयीन बना रहता है। सिद्धांतों पर समय का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है वह सिद्धांतों की प्रकृति एवं गुणों में रती भर भी परिवर्तन नहीं कर पाता है। किन्तु सहस्रों वर्षों से हमें क्या प्रयोजन है? हमारा जीवन-काल उसका एक अल्प अंश है और जिस समय जीवन आरम्भ करते हैं, यदि उस समय किसी गसती का अस्तित्व ऐसा सी है, तो हमारे लिए वह गसती सती समय आरम्भ होती है और उसका विरोध करने का हमें यही अधिकार है जो तब होता यदि उस गसती का पूर्व अस्तित्व न रहा होता।

आनुवंशिक सरकार किसी एक वंश में प्राकृतिक अधिकार स्वयं आरम्भ नहीं हो सकती थी और न तो आरम्भ होने के बाद ही समय द्वारा परम्परागत अधिकार प्राप्त कर सकती थी। इसलिए अब हमें यह देखना है कि क्या कानून के द्वारा इस प्रकार की सरकार के निर्माण एवं स्थापना का, जैसा कि ईमरैड में हुआ है, अधिकार राष्ट्र को है या नहीं? मेरा उत्तर है—'नहीं' और इस सदेव से बनाया गया कोई भी कानून या संविधान राष्ट्र के प्रत्येक तत्कालीन एवं सभी अनुयायी पीढ़ियों के अधिकारों के प्रति विरुद्ध है।

मे क्रमशः इन दोनों पर अपना विचार व्यक्त करूँगा। पहले इस प्रकार के कानून बनाते समय उपस्थित अवयवों के विषय में और तत्पश्चात् अनुयायी पीढ़ियों के बारे में।

एक राष्ट्र के अन्तर्गत सदा प्रसूत शिशु से लेकर आसन्न मृत्यु वृद्ध वयस्क सभी अवस्थाओं के व्यक्ति जा पाते हैं। इनमें से एक अंग अवयव होना और दूसरा वयस्क। साधारणतः अवयव संख्या में अधिक होते हैं जबकि इक्कीस वर्ष से कम अवस्था वाले व्यक्तियों की संख्या इक्कीस वर्ष से अधिक अवस्था वाले व्यक्तियों की संख्या से अधिक होती है।

यै जिस सिद्धांत की स्थापना करना चाहता है उसके लिए यह संस्थागत अन्तर आवश्यक नहीं है, किन्तु इससे उस सिद्धांत के अधिकार को बत अवश्य

पहली पीढ़ी के क्षेत्र व्यक्तियों की संस्था की अपेक्षा अधिक न हो जायें ।

एक उदाहरण लीजिए यदि क्षेत्र में इस समय या किसी कुछरे समय पीढ़ीय बाध बाधनी है, तो बाध साध पुरुष होंगे और बाध साध स्त्रीय । बाध साध पुरुषों में के प्र. साध व्यवस्था, अर्थात् एकत्रीय वर्ग की व्यवस्था के होंगे और प्र. साध व्यवस्था । छात्र का अधिकार उन प्र. साध व्यवस्थाओं को होता ।

किन्तु प्रत्येक विषय कुछ-न-कुछ परिवर्तन प्रस्तुत करेगा । इसीसे क्यों मैं उन व्यवस्थाओं में के प्रत्येक को उस समय तक जीवित रखेगा, व्यवस्था हो जायगा और जो पहले व्यवस्था के समर्थ में अधिकारी अपनी जीवन-नीति समाप्त कर चुकेंगे । उस समय जीवित रहने वाले एवं कलुनी अधिकार प्राप्त व्यक्तियों में बहुत बड़ बड़ों का होगा किन्तु इसीसे क्यों पुनः कोई कलुनी अधिकार नहीं था । वे अत्यन्त फिदा और प्रियता से सबके और अन्य इसीसे क्यों या इसके कुछ कम समयमें व्यवस्थाओं की कुछी पीढ़ी व्यवस्था प्राप्त करके उनका स्वागत प्राप्त करेंगे । अधिकार में कम इसी प्रकार व्यवस्था रहेगा ।

बड़ी स्थिति विस्तार रहेगी । सभी पीढ़ीय अधिकारों के विषय में समान है । इसीसे यह स्पष्ट है कि आधुनिक 'सरकार' की स्थापना करने का अधिकार किसी एक पीढ़ी को नहीं है, क्योंकि संघपरम्परा के आधार पर 'सरकार' की स्थापना करना अर्थात् यह आदेश देना कि अधिकार में विषय का शासन फिदा प्रकार होना और तीन करेगा एक प्रकार के व्यक्तियों को अथवा अपने अधिकार को बहुत मान लेना है ।

यहाँ तक अधिकार की बात है, प्रत्येक पुनः और प्रत्येक पीढ़ी को प्रत्येक स्थिति में करने लिए काम करने की बड़ी स्वतंत्रता है, और होनी चाहिए जो पूर्ववर्ती पीढ़ी और पुनः की भी । मृत्यु के उपरान्त शासन करने की कल्पना और विध्याविधान पर्याप्तिक उदाहरणार्थ एवं और अत्याचार है । मृत्यु मृत्यु की जगति नहीं है और न ही अग्रवर्ती पीढ़ीयों किसी एक पीढ़ी की जगति है ।

इसलिये की संसार का इतिहास एक प्रकार का एक उदाहरण प्रस्तुत करता है जो किसी को देना में प्राप्त होने वाले विज्ञान के आधार और विचार विचारक व्यवस्था के इतिहासिक उदाहरण एकत्र सादर रखने योग्य है । यद्यपि यह प्रकार है—

जब मैं अनुगामी पीढ़ियों के विचार से आनुवंशिक सरकार की चर्चा बारम्बार कर रहा हूँ और यह दिखाने का रहा हूँ कि इस विषय में ऐसा कि अबयस्कों के विषय में कहा जा चुका है राष्ट्र को आनुवंशिक सरकार की स्थापना का अधिकार नहीं है।

राष्ट्र—यद्यपि उसका अस्तित्व निरन्तर है—सतत मृतनता की स्थिति में रहता है। यह कभी भी स्थिर नहीं रहता। प्रत्येक दिन नये-नये जन्म होते हैं अबयस्क वयस्कता की ओर बढ़ते हैं और कुछ व्यक्ति रममंथ से संतर्पित होते रहते हैं। पीढ़ियों की इस सतत प्रवाहित धारा में किसी भी वंश की अभ्य की अपेक्षा अधिकारमय व्युत्पत्ति नहीं है। यदि हम किसी भी श्रेष्ठता की कल्पना करें भी तो किस समय जयबा बिन्द की किस शताब्दी में हम उस श्रेष्ठता की स्थापना करें? उसके लिए कौन-सा कारण निश्चित करें? किस प्रमाण पर उसे सिद्ध करें और किस कसौटी पर उसकी परख करें?

। यदि हम थोड़ा विचार करें तो हमें यह ज्ञात होगा कि हमारे पूर्वज हमारे समान ही केवल अपने जीवन भर के लिए अधिकारों के महान निपुण सौत्र के उपभोक्ता थे। उन्हें उसका ऐकान्तिक स्वामित्व नहीं प्राप्त था और न हमें ही प्राप्त है। सभी भुवों के सम्पूर्ण मानव-परिवार का इससे सम्बन्ध है। यदि हम अभ्यसा सोचते हैं तो हम या तो दास हैं या अस्वाधारी। यदि हम यह सोचते हैं कि हमें किसी पुत्र पीढ़ी को बाँधने का अधिकार था तो हम दास हैं और यदि हम यह सोचते हैं कि हमें अनुगामी पीढ़ियों को बाँधने का अधिकार है तो हम अस्वाधारी हैं।

‘पीढ़ी’ शब्द यहाँ किस अर्थ में प्रयुक्त हुआ है इसे स्पष्ट करने का प्रयास करना कदाचित् विषयान्तर न होगा।

सामान्य शब्द के रूप में इसका अर्थ पर्याप्त रूप से स्पष्ट है। पिता, पुत्र और पौत्र इत्यादि पुरुष-पुत्रक पीढ़ियाँ हैं। किन्तु जब हम उस पीढ़ी की चर्चा करते हैं जिससे उन व्यक्तियों का बोध होता है जिन्हें कानूनी अधिकार प्राप्त है तथा जो उसी प्रकार की अनुगामी पीढ़ियों से भिन्न है तो उस ‘पीढ़ी’ शब्द द्वारा उन सभी व्यक्तियों का बोध होता है, जो गणमा के समय दृष्टीगत वर्गों के बीच की अवधि तक अधिकार में रहेगी अर्थात् उस पीढ़ी का अधिकार तब तक बना रहेगा जब तक अबयस्कों जो उस समय तक वयस्क हो जायेंगे की संख्या

एसी पीढ़ी के इन व्यक्तियों की संख्या की अपेक्षा अधिक न हो पाये ।

एक उदाहरण भीमिह बहि कांठ में, इस समय या किसी दूसरे समय पीढ़ी काट करनी है, जो बायल साल पुराने होने और बायल साल जिया । बायल साल पुरानों में से छ. लाख बचस्क अपना इककीठ बने की बचस्का के होने और छ. लाख बचस्क । छातन का अधिकार उन छ. लाख बचस्कों को होना ।

हिन्दु शायद विगत कुछ-न-कुछ परिवर्तन प्रस्तुत करेगा । इसी वषों में इन बचस्कों में से प्रत्येक को एक समय तक भीमित रहेगा, बचस्क हो बायल और भी गहरे बचस्क से उनमें से अधिकतर अपनी जीवन-सीसा समाप्त कर चुकेंगे । इन समय भीमित रहने वाले पूर्व कानूनी अधिकार प्राप्त व्यक्तियों में समुदाय इन लोगों का होना सिद्ध है इसी वषों पूर्व कोई कानूनी अधिकार नहीं था । वे कमजोर निता और प्रथिता बन जायेंगे और अन्य इसी वषों या इसके कुछ कर समय में बचस्कों की कुछी पीढ़ी बचस्कता प्राप्त करके उनका स्थान बदल करेगी । अधिन में कम इसी प्रकार बनता रहेगा ।

एसी स्थिति बिच्छर रहेगी । सभी पीढ़ियाँ अधिकारों के विषय में बचान है । इसी वष यह स्पष्ट है कि अनुसूचित 'सरकार' की स्थापना करने का अधिकार किसी एक पीढ़ी को नहीं है, क्योंकि संसदपरम्परा के आधार पर 'सरकार' की स्थापना करना बचान यह मानेस हैना कि अधिन में विगत का छातन किछ प्रकार होना और कान करेना एक प्रकार से ज्यों की अपेक्षा करने अधिकार को बंद मान लेना है ।

यहाँ एक अधिकार की बात है । प्रत्येक युव और प्रत्येक पीढ़ी की प्रत्येक स्थिति में जाने लिए काम करने की बड़ी स्वतंत्रता है, और होनी चाहिए जो पूर्वापी पीढ़ी और युव को भी । युव के करीब छातन करने की कल्पना और निम्नविषय सर्वाधिक उदाहरण एवं कूर अत्याचार है । समुदाय समुदाय की समिति नहीं है और नहीं अनुपाती पीढ़ियाँ किसी एक पीढ़ी की सम्पत्ति है ।

इसनेर की संकर का इतिहास इस प्रकार का एक उदाहरण प्रस्तुत करता है जो किसी भी देश में प्राप्त होने वाले सिद्धांत के अभाव और विगत विगत समय के सर्वाधिक उदाहरण स्वरूप बाद रहने योग्य है । बचना एक प्रकार है—

सन् १९८८ ई० में इंग्लैण्ड की संसद ने बिलियम और मेरी नामक दम्पति को हार्लैण्ड से बुलाया और उन्हें इंग्लैण्ड की गद्दी पर बैठा दिया। इतना कर सीने के उपरान्त उस संसद ने बिलियम और मेरी की सन्तानों को देश के शासन का अधिकार देने के अभिप्राय से एक कानून बनाया जो इस प्रकार है—
 "हम आध्यात्मिक और सीकिक कुसीन और लोकसभा के सदस्य इंग्लैण्ड की जनता के नाम पर अखण्ड विमर्शता एवं विश्वास के साथ अपने को, अपने उत्तराधिकारियों को और सभी सन्तानों को सर्वदा के लिए, बिलियम और मेरी, उनके उत्तराधिकारियों तथा उनकी अनुगामी पीढ़ियों के आधीन रखते हैं।" जैसा कि एडमण्ड बक ने उद्धृत किया है, एक दूसरे अनुगामी कानून में उपर्युक्त संसद ने इंग्लैण्ड की सत्तासीम जनता के नाम पर, उस जनता को उसके उत्तराधिकारियों और उसकी सभी अनुगामी पीढ़ियों को समय के अन्त पर्यन्त बिलियम-मेरी, उनके उत्तराधिकारियों और उनकी सभी अनुगामी पीढ़ियों के साथ (कानून के बन्धन में) बाँधने का प्रयत्न किया।

इस प्रकार के विधान बनाने वालों की अज्ञानता पर हँस देना ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि उनके सिद्धांत विषयक अज्ञान की निन्दा करना आवश्यक है। सन् १७८६ ई० में फ्रांस की संविधान-सभा ने यही प्रणाली की जो इंग्लैण्ड की संसद ने की थी उसने उस वर्ष के सांविधानिक विधेयक के रूप में कैपेट (Capets) बंस में आनुवंशिक उत्तराधिकार को स्थापित करना स्वीकार दिया।

इसे सचदा स्वीकार करना होना कि प्रत्येक राष्ट्र को वर्तमान समय में अपने इच्छानुसार अपना शासन करने का अधिकार है। किन्तु आनुवंशिक सरकार अनुष्मों की दूसरी पीढ़ी का शासन करने के लिए है; और उसे विनका शासन करना है जिनका या तो अस्तित्व ही नहीं है अथवा वे अव्यक्त हैं। अतः उनके लिए इस सरकार की स्थापना करने के अधिकार का भी अस्तित्व नहीं है; और इस प्रकार के अधिकार को मान लेना सन्तानों के अधिकार के प्रति विस्वासपात है।

ये आनुवंशिक उत्तराधिकार पर स्थापित सरकार की चर्चा यहाँ समाप्त करके अब निर्वाचन और प्रतिनिधित्व द्वारा स्थापित सरकार की विषये संक्षेप में 'प्रतिनिधि सरकार' कह सकते हैं, चर्चा आरम्भ कर रहा हूँ।

अपवर्जनार्थक तर्क (Reasoning by exclusion) के अनुसार यदि

मानुस्यिक 'सरकार' को अस्तित्वानुसार प्राप्त नहीं है, और यह सिद्ध किया जा सकता है, तो 'प्रतिनिधि-सरकार' अपने आप बान्ध हो जाती है।

निर्वाचन और प्रतिनिधित्व के आधार पर विभिन्न सरकार पर विचार करते समय इस बात की जाँच करने में हम केवल अपना मनोविमोह नहीं करते कि इसका उत्पन्न कब कीते जवना किञ्च अधिकार है हुमा। इसका उद्भव-स्रोत विस्तर प्रत्यक्ष है। मनुष्य स्वयं इस अधिकार का मूल-स्रोत और स्रोत है। इसका सम्बन्ध मनुष्य के अस्तित्व विषयक अधिकार से है और मनुष्य ही इसका वास्तविक (Title deed) है।

'प्रतिनिधि-सरकार' का सत्य और एकमात्र सत्य आधार है—अधिकारों की समता। प्रतिनिधियों के चुनाव में अत्यन्त व्यक्ति की एक मत देने का अधिकार है। एक के अधिक मत देने का अधिकार किसी को नहीं है। मत देने या निर्वाचन करने और निर्वाचित होने के अधिकार के दूरीयों को संबंधित करने का अधिकार दोनों को ठीक वही प्रकार नहीं है। जिस प्रकार उन्हें मत देने का निर्वाचन करने और निर्वाचित होने के अधिकार से संबंधित करने का अधिकार दूरीयों को नहीं है। जिस किसी भी वक्ता के द्वारा ऐसे अधिकार का प्रयोग जवना प्रस्ताव हो वह अक्षरवादी की बात होगी—अधिकार की नहीं। दूसरे को उसके अधिकार से संबंधित करने वाला कोई है कीन ? दूसरा भी उसे उसके अधिकार से संबंधित कर सकता है।

जैसे हम 'पुण्यीय तंत्र' कहते हैं उसमें अधिकार-वैयर्थ्य का भाव अन्तर्निहित है किन्तु इस वैयर्थ्य की स्थापना करने वाले व्यक्ति कौन है ? क्या मंत्री अपने को स्वयं बल रखते ? नहीं। क्या वरीय अपने को बल रखते ? नहीं। फिर किञ्च अधिकार से किसी को संबंधित किया जा सकता है ? क्या किसी व्यक्ति जवना मनुष्यों के किसी वर्ग को संबंधित करने का अधिकार हो सकता है। निर्वाचन कर के उन्हें किसी अन्य की संबंधित करने का अधिकार नहीं हो सकता। न तो वरीय इस प्रकार का अधिकार अपनी की सदिया और न परी वरीय को। मनु, देना अधिकार मान लेना केवल स्वैच्छावादी अधिकार मान लेना नहीं है वरन् बाका बाक़ी का अधिकार भी मान लेना है।

अल्पमत अधिकार—प्रतिनिधियों के लिए मत देने का अधिकार विधियों के एक है—मनुष्य की विचार्य क्षमता है। जो व्यक्ति किसी अन्य की सम्पत्ति या

अधिकारों को छीनने में अपनी आर्थिक सम्पत्ति का उपयोग करता है अथवा उस आर्थिक सम्पत्ति के कारण प्राप्त सामर्थ्य के बल पर अन्य की सम्पत्ति या अधिकारों को छीनने की बात सोचता है यह अपनी सम्पत्ति का उपयोग अभ्यासों के समान करता है और यह उचित है कि उससे उसकी वह सम्पत्ति छीन ली जाय ।

समाज में कुछ व्यक्तियों के संघ द्वारा, अन्यो को उनके अधिकारों से वंचित करने के लिए वैषम्य की सृष्टि की जाती है । जब कभी संविधान के किसी अनुच्छेद अथवा किसी कानून में यह निश्चित किया जाता है कि मत देने या निर्वाचन करने और निर्वाचित होने का अधिकार केवल उन लोगों को होना जिनके पास एक निश्चित परिमाण में संपत्ति होनी तो जिनके पास उस परिमाण में सम्पत्ति नहीं है, उन्हें अधिकार-वंचित करने के लिए यह उन लोगों का संघटन है जिनके पास उस परिमाण में सम्पत्ति है । यह तो समाज के स्वतः निर्मित बंध के रूप में अपने लई अन्यो को वंचित करने का अधिकार मान लेता हुआ ।

यह मानी हुई बात है कि जो व्यक्ति अधिकार-साम्य का विरोध करते हैं, वे यह नहीं चाहते कि उन्हें अधिकार से वंचित किया जाय । इस स्थिति में 'कुसीन तन्त्र' (Aristocracy) उपहास की वस्तु ठहरती है । कुसीनों के विष्याभिमान को एक अन्य स्वाय-सुख विचार है प्रोत्साहन प्राप्त होता है और वह यह है कि 'अधिकार-साम्य' के विरोधी (अर्थात् कुसीन) सोचते हैं कि वे एक ऐसे सुरक्षित छेद में भाग ले रहे हैं जिसमें हानि का नहीं परन्तु लाभ का ही अवसर है । जिन अधिकारों का वे विरोध करते हैं यदि उनसे अधिक अधिकार उन्हें न प्राप्त हो सके तो कम-से-कम उतने अधिकार उन्हें मिलेंगे ही ।

इस प्रकार का विचार उन सहस्रों व्यक्तियों के लिए प्राण-मातृक सिद्ध हो चुका है, जिन्होंने समान अधिकार से सम्पुष्ट न होकर अधिक के लिए प्रयत्न किया और परिणाम यह हुआ कि उनके सभी अधिकार गढ़ हो गये तथा जिस अपमानजनक वैषम्य की स्थापना का उन्होंने प्रयत्न किया उसका उन्होंने स्वयं अनुभव किया ।

सम्पत्ति को मताधिकार की कसौटी बनाना सभी प्रकार से प्रयत्न,

बहिष्कृत, कच्ची-कच्ची बपहासास्पद और खरपा अनुचित है। यदि मताधिकार के लिए आवश्यक समिति का परिवार या मुख्य अधिक हुआ तो बहिष्कार बका मताधिकार के समित ही आयगी और सरकार तथा उद्योग समर्थन करने वाले लोगों का विरोध करने के लिए संघटित होगी। यदि यह संघटित न होगी है इस लिए यह ऐसी सरकार और उसके समर्थकों की अब कोई परम्परा कर सकती है।

इस रूप के विचारों हेतु, संघटित के अन्त परिवार को मताधिकार की कच्ची निर्धारित करना स्वतन्त्रता का अवयवपूर्ण अवयव है। क्योंकि इस प्रकार, स्वतन्त्रता आवश्यक करना और सुझावी बनू होगी। अब एक बहिष्कार छोटी आयुध एक छोटा या बड़ा—विशेष मुख्य मताधिकार के लिए निर्धारित बन के बहाल हो—बैठा करके अपने स्वामी को मताधिकार प्रदान कर सकती है, बका अपनी मरु से अपने स्वामी से उद्योग मताधिकार छीन सकती है। तो इस बहिष्कार के मुख्य का अस्तित्व विचारों काय आयु। अब हम यह सोचते हैं कि बोम्बे के बिना समिति की कई प्रकार से प्राप्त किया या बका है और बिना बका के उद्योग आयु या बका है तो संघटित को बहिष्कार की कच्ची निर्धारित करने के विचार को हर्ष सुचित समझना चाहिए।

मताधिकार है संघटित करना, एक संघटित किये जाने वाले व्यक्तियों के वैधिक परिवार के लिए बका है। समाज के किसी भाग को अन्य भागों के विचार में इस प्रकार की व्यवस्था करने का कोई अधिकार नहीं है। कोई भी बाह्य परिस्थिति इसका अधिष्ठान नही कर सकती। न तो समिति वैधिक परिवार का प्रमाण है और न कच्ची वैधिक परिवार के अभाव का प्रमाण है।

इनके विरुद्ध समिति, बाक: बैरिगानी का अनुमान-विश्व प्रमाण है और निश्चयता विरोध का अवयवप्रमाण प्रमाण है। इसीलिए, यदि अन्त या बहिष्कार परिवार में समिति को कच्ची निर्धारित करना है तो दिए साधन के बाव में अर्थन हुआ है, उसे भी कच्ची मानना चाहिए।

मताधिकार के अवयव (Exclusion) बैरिग एक स्थिति में व्याप-प्रकार है और यह यह है कि इसका प्रयोग उन लोगों के लिए एक अवयव किया जाना जो अन्य के इस बहिष्कार को छीन लेने का प्रमाण करें। अतिविचारों

को निर्वाचित करने के लिए मत देने का अधिकार वह मौलिक अधिकार है जिसके द्वारा अन्य सभी अधिकारों का रक्षण होता है।

इस अधिकार को छीन लेना मनुष्य को दासता की स्थिति में रस देता है; क्योंकि दासता का अर्थ है दूसरे की इच्छा के आधीन होना और यह, जिसे प्रतिनिधि के निर्वाचन में मताधिकार नहीं है, इसी स्थिति में है। इसलिए मनुष्यों के किसी वर्ग को मताधिकार से वंचित करने का प्रस्ताव सम्पत्ति-अपहरण के प्रस्ताव के समान ही अपराध-पूर्ण है।

अधिकार के साथ कृतव्य माबना का योग होना चाहिए। पारस्परिक क्रिया द्वारा अधिकार कर्तव्य हो जाते हैं। मैं जिस अधिकार का उपयोग करता हूँ वह अधिकार दूसरों के उसी अधिकार की रक्षा करने के रूप में मेरा कृतव्य हो जाता है, और मेरे अधिकार की रक्षा करना उसका अपना कर्तव्य हो जाता है। जो व्यक्ति कृतव्यों का उत्सर्पण करते हैं, म्भावतः उनका अधिकार खत्म हो जाना चाहिए।

यदि राजनीतिक दृष्टिकोण से देखा जाय तो 'सरकार की छवि और स्वाधी सुरक्षा, उसको संभालने में अभिरुचि रखने वाले व्यक्तियों की संख्या की आनुपातिक है। इसलिए समानाधिकार के द्वारा सम्पूर्ण समाज में उस अभिरुचि को उत्पन्न करना सही राजनीति है क्योंकि अपवर्जन (Exclusion) भय पैदा करता है। मनुष्यों को मताधिकार से अपवर्जित करना सम्भव है किन्तु अपवर्जन के विरुद्ध क्रान्ति करने के अधिकार से उन्हें असब रक्षना असंभव है और जब सभी अधिकार छीन लिये जाते हैं तो क्रान्ति करने के अधिकार को पूरा बना दिया जाता है।

जब मनुष्यों को यह विश्वास दिलाया जा सकता था कि उन्हें कोई अधिकार नहीं है, अधिकार केवल मनुष्य के बय विधेय के होते हैं या सरकार स्वयं अपने अधिकार से अस्तित्व में है, उस समय अधिकारपूर्वक उनका शासन करना कठिन नहीं था। मनुष्यों की अज्ञानता और अल्पविश्वासपूर्ण चिन्ता ने इस दिशा में पूर्ण सहयोग प्रदान किया।

किन्तु जब कि अज्ञानता दूर हो गयी है और उसीके साथ अल्पविश्वास भी मिट जाता है, जबकि मनुष्य यह सोचते हैं कि प्रकृति स्वेच्छा से बिना सम्पत्तियों को पैदा करती है उनके अतिरिक्त विश्व की सभी सम्पत्तियों के

कार्यमय काव्य है—इसका बीर निर्मासकता बराबि उन्हें अपनी उपयोगिता और उद्देश्य के उत्तम विषयक अपने अधिकार के कारण अपने महत्त्वों का बोध होता है। तो उसका पूर्णतः दास्य करना अब सम्भव नहीं है। आत्म का वश बन एक बार तब जाता है तो उसकी पुनरावृत्ति नहीं की जा सकती है, और यदि फिर दो बड़े करने का प्रयत्न किया गया तो वह प्रयत्न वा तो बल आत्म का उद्घाटन होता बनना उसके विनाश का निमित्त है।

यह निश्चित है कि सम्पत्ति अस्वाभाव्य होती। कथोप प्रतिपाद्यत स्वेच्छा, प्रयत्न-वशता कार्यमय अस्वाभाव्य बुद्धवशर तथा पुनःवशर अथवा इनके कारण निरन्तर सम्पत्तिवश विषयता की सृष्टि करते रहते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे भी व्यक्ति हैं, जो वन से पृथक् तो नहीं करते किन्तु वन-प्राप्ति के कारण या कठोर परिश्रम को गत वस्तु होकर न तो स्वीकार करते और न अपनी स्वतंत्रता और आनन्दवशता के अतिरिक्त वन के लिए व्याकुल होते हैं। दूसरे और ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने सभी प्रकार के साधनों द्वारा धन वर्जन करने की उत्पत्ति बाधाओं वाली है, जिसके जीवन का मुख्य अर्थ है वन की प्राप्ति और जो धन के उद्देश्य वन की उदात्तता करते हैं। सम्पत्ति को ईमानदारी के साथ अतिरिक्त करना चाहिए। अस्वाभाव्यपूर्ण रूप के उसका उपयोग नहीं होना चाहिए किन्तु अब ऐकान्तिक अधिकारी के लिए इसे कभीभी बना दिया जाता है तो इसका उपयोग निरन्तर अस्वाभाव्यक होता है।

ऐसी संस्थाओं में जो केवल कार्यमय है—जैसे बैंक या आतिथ्य-संघ इसके सदस्यों के अधिकार सम्पूर्णतः अपने द्वारा वत संस्था में अपनायी दली पूर्णतः वर आनन्दित होते हैं। इन संस्थाओं के दास्य में पूर्णतः अधिकारों के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार के अधिकारों का प्रतिनिधित्व नहीं होता। ये सभी के अतिरिक्त और कुछ नहीं जानती।

किन्तु प्रतिनिधि-वशति पर आनन्दित 'अतिरिक्त-वशति' की संस्था की स्थिति इससे भिन्न है। इस प्रकार की 'वशति' को प्रत्येक वस्तु और राष्ट्रीय उद्देश्य के उत्तम के रूप में प्रत्येक व्यक्ति की जाड़े उसके पास सम्पत्ति हो या न हो जानकारी जाती है। इसीलिए सिद्धान्तः प्रत्येक व्यक्ति और सभी प्रकार के अधिकारों का—सम्पत्ति को प्राप्त करने और इसे रखने का अधिकार दिन में के एक है, किन्तु अतिरिक्त आवश्यक नहीं है—प्रतिनिधित्व होना चाहिए।

मनुष्य-शरीर की रक्षा सम्पत्ति रक्षा की अपेक्षा विषमतर है। इसके अतिरिक्त अपनी शोषिका प्राप्ति के लिए किसी प्रकार का काम भ्रमण सेवा करने या अपने परिवार का पालन-पोषण करने की शक्ति प्रकृति सम्पत्ति है। उसके लिए वही सम्पत्ति है उसने उसे प्राप्त किया है और उसकी यह सम्पत्ति उसी प्रकार रक्षाणीय है जिस प्रकार उस शक्ति से रहित अन्य किसी व्यक्ति की बाह्य सम्पत्ति रक्षा की वस्तु हो सकती है।

मेरा यह विश्वास रहा है कि समाज के प्रत्येक भाग से महासम्भव सिकायत के प्रत्येक कारण और हिंसा की प्रत्येक प्रवृत्ति को दूर करना सम्पत्ति की यह वस्तु हो या अधिक सर्वाधिक सुरक्षा है और यह समानाधिकार के द्वारा ही सम्भव है। जब अधिकार को सुरक्षा प्राप्त होती, तो परिणाम स्वरूप सम्पत्ति भी सुरक्षित रहेगी। किन्तु जब सम्पत्ति को असमान भ्रमण ऐकान्तिक अधिकारों का निमित्त बना दिया जायगा तो सम्पत्ति रक्षने का अधिकार निर्बल पड़ जायगा तथा जोष एवं उपद्रव को उत्तेजना प्राप्त होगी। क्योंकि यह विश्वास करना अप्राकृतिक है कि जिस सम्पत्ति के प्रभाव से समाज के अधिकारों को शक्ति पहुँचती है उस समाज के अस्तित्व यह सम्पत्ति सुरक्षित रह सकती है।

प्रकृति समय-समय पर अरिस्टोटल (Aristotle) सुक्रेटस (Socrates) और प्लेटो (Plato) जैसे योग्य एवं विश्वविख्यात असाधारण व्यक्तियों को उत्पन्न किया करती है। ये महानुभाव वास्तव में महान या कुसान थे। किन्तु जब सरकार कुसीन व्यक्तियों (Nobles) की निर्माण-शाखा स्थापित करती है तो उसका यह काम बुद्धिमानों का निर्माण करने के कार्य जैसा ही पूर्णतापूर्ण है। सरकार के बनाये हुए सभी कुसीन नकसी है।

कुसीन की संज्ञा को यदि केवल बचाना मान लिया जाय तो कदाचित् इसका अर्थमान कुछ कम हो जाय। हम प्रदर्शनों को निस्सार समझकर धमा कर देते हैं, उसी प्रकार पर्वतियों के प्रदर्शन को धमा कर सकते हैं। किन्तु 'कुसीनों' का भूस प्रदर्शन से भरा है। उस भूम का उद्भव अपहरण के पेट से हुआ है। सभी देशों में प्रारम्भिक कुसीन सुन्दरे थे और बाद के बादगार।

सभी लोग इस बात को जानते हैं कि हंगरी (अन्य देशों में भी वही बात मिलेगी) में आज जो बड़ी-बड़ी रिवाजतें हैं वे सभी विजय (Conquest)

के समय वहाँ के राज्य निवासियों के छोटी सी पदी थी। इसी वही रियासतों को स्वयं के हाथ में लाने की सम्भावना नहीं थी। यदि वह कुछ था कि इन रियासतों को किंग प्रकार के शासक किया गया तो उसका एकमात्र उद्देश्य बरहण के द्वारा। इसका निश्चित है कि इन रियासतों को व्यापार, वाणिज्य वगैरह हरि बदला अन्य किसी साम्राज्य कार्य द्वारा नहीं प्राप्त किया गया था।

दिए उन्हें किंग प्राप्त किया गया? 'बुर्जुआ वर्ग'? आरम्भ करने उद्देश्य पर बना होती बाह्य। क्योंकि आरम्भ के पूर्व में जोर है। वे करने हुए के राजेश्वर (Robespierres) और जैकोबिन (Jacobins) हैं। आका शासन के बाद उन्होंने कालमिद बाधों और चर्चों के सम्बन्ध करने क्रांतिकारियों को विद्रोह, करने जनमानस का परिचालन करने का प्रयत्न किया। आन्दोलनों का भी प्रारम्भ आरम्भ है।

दिए प्रकार सम्पत्ति समावृत्ति के द्वारा किये जाने पर, अधिकारों की सम्भावना द्वारा सम्पत्तिक रूप से सुनिश्चित होती है, सभी प्रकार के प्राप्त होने पर उसकी सुरक्षा अधिकारों के स्थापित पर निर्भर होती है। किंग व्यक्ति ने अन्य की सम्पत्ति का आग्रह किया है, उसका उद्देश्य प्रभाव होता वह अन्य व्यक्ति से सम्पत्ति प्राप्त करने के अधिकार की दृष्टि को छीन लेता। यह वह विचार सम्पत्तिवादी हो जाता है, तो वह करने की सुनिश्चित सम्पत्ति है। ईश्वर की सरकार का वह भय किसे राज्य-व्यवस्था कहा जाता है, मुक्त रूप लोगों के सेवा का जिम्मे नहीं वही सुदृढ-व्यवस्था किया या किसी भी चर्चा कर रहा है। उन्होंने दिए सम्पत्तियों का आग्रह किया या उन्हें बचाने का वह एक प्रयत्न था।

दिए 'बुर्जुआ वर्ग' (Aristocracy) के उद्देश्य-विषय आरम्भ के अधिकृत समुच्च के वैयक्तिक और प्राकृतिक चरित्र पर इसका हानिकार प्रभाव रहा है। राज्य के समान वह भी व्यवस्था-व्यक्तियों को नियंत्रण बना देता है। पर्यटन दिए प्रकार राज्य में कुछ कुछ मजिस्ट्रेट सुधार करने लक्ष्मी छवि को देता है। सभी प्रकार यह व्यवस्था-व्यक्तियों का वीर्य सुनिश्चित द्वारा होता है। तो वह सभी व्यक्तियों के प्रदर्शन के लिए अक्षय होकर निर्बल बन जाता है। कुछ राज्यों में व्यवस्था केनेमाने मजिस्ट्रेट का ग्राह्य होता सम्भव है। ईश्वरों का चर्चना समुच्च की भा भाता है।

मनुष्य-सरीर की रक्षा सम्पत्ति रक्षा की अपेक्षा दिम्बतर है। इसके अतिरिक्त अपनी जीविक-प्राप्ति के लिए किसी प्रकार का काम मजबूरी से करना या अपने परिवार का पालन-पोषण करने की सक्षिप्त प्रकृति सम्पत्ति है। उसके लिए बही सम्पत्ति है, उसने उसे प्राप्त किया है और उसकी यह सम्पत्ति उसी प्रकार रक्षणयोग्य है जिस प्रकार उस व्यक्ति से रहित अन्य किसी व्यक्ति की बाह्य सम्पत्ति रक्षा की वस्तु हो सकती है।

मेरा यह विश्वास रहा है कि समाज के प्रत्येक भाग से महासम्पन्न अक्रियता के प्रत्येक कारण और हिंसा की प्रत्येक प्रवृत्ति को दूर करना सम्पत्ति की यह वस्तु हो या अधिकांश, सर्वाधिक सुरक्षा है और यह समामाधिकार के द्वारा ही सम्भव है। जब अधिकार को सुरक्षा प्राप्त होती, तो परिणाम स्वरूप सम्पत्ति भी सुरक्षित रहेगी। किन्तु जब सम्पत्ति को अतमान मजबूरी ऐकान्तिक अधिकारों का निमित्त बना दिया जायगा तो सम्पत्ति रखने का अधिकार निर्वन्त पड़ जायगा तथा शोष एवं उत्पन्न को उत्तेजना प्राप्त होगी। क्योंकि यह विश्वास करना अप्राकृतिक है कि जिस सम्पत्ति के प्रभाव से समाज के अधिकारों को शक्ति पहुँचती है उस समाज के अन्तर्गत वह सम्पत्ति सुरक्षित रह सकती है।

प्रकृति समय-समय पर अरिस्टोटल (Aristotle) सुक्रेटस (Socrates) और प्लेटो (Plato) जैसे योग्य एवं विवेकविस्मय असाधारण व्यक्तियों को उत्तम क्रिया करती है। ये महानुमान वास्तव में महान या कुत्तान थे। किन्तु जब सरकार कुत्तान व्यक्तियों (Nobles) की निर्माण-शक्ति स्थापित करती है तो उसका यह कार्य दुष्टियों का निर्माण करने के कार्य जैसा ही सुगतापूर्ण है। सरकार के बनाये हुए सभी कुत्तान नकली हैं।

'कुत्तान' की संज्ञा को यदि केवल मजबूती मान लिया जाय तो कदाचित् इसका अन्तर्गत कुछ कम हो जाय। हम प्रयत्नों को निश्चय समझकर समझ कर देखते हैं, उसी प्रकार प्रयत्नों के प्रयत्न को समझ कर सकते हैं। किन्तु 'कुत्तानों' का मूल प्रवर्तन से पुरा है। उस वर्ष का उत्पन्न अपहरण के पेट से हुआ है। सभी देशों में प्रारम्भिक कुत्तान सुन्दरे थे और बाद के बादगार।

सभी लोग इस बात को जानते हैं कि इंग्लैण्ड (अन्य देशों में भी यही बात मिलेगी) में आज जो बड़ी-बड़ी रियासतें हैं वे सभी विजय (Conquest)

बन्दार पर हम सब 'विष्णु' का बत्ता लगायेंगे वहाँ हूँ रहना है और जो एक ही देश के मनुष्यों के—जिनका कुछ ही जंग स्वतन्त्र होना—बीच बन्दार स्थापित करेगा।

यदि सम्पत्ति को कभीसी बनाया जाता है, तो यह स्वतन्त्रता के इत्येक वैदिक सिद्धांत से पूर्णतः दूर बना बना होना। क्योंकि तब ही अधिकार का सम्मान केवल वस्तु के होना और वस्तु वह वस्तु का केवल अधिकारी (Agent) होना। इसके अतिरिक्त सम्पत्ति को कभीसी बनाने का कार्य है उसे बनाने का कारण बना देना। इसका परिणाम यह होता कि सम्पत्ति बनने बिना कुछ को उत्तेजना प्रदान ही नहीं करेगी, बल्कि इसका अस्तित्व भी मिट करेगी। मैं इस सिद्धांत को मानता हूँ कि जिनके पास सम्पत्ति नहीं है, उनके अधिकारों को जीनरों के लिए, जब सम्पत्ति का उपयोग किया जाता है, तो इसका वह उपयोग ऐसी स्थिति में सम्पत्तियों के उपयोग के समान ही सम्पत्तिपूर्ण करने के लिए होता है।

यहाँ तक अधिकारों का सम्मान है प्रकृति के राज्य में सभी व्यक्ति समान हैं किन्तु व्यक्ति का यहाँ तक मान है, सभी समान नहीं है। विवेक व्यक्ति व्यवहार के बानी रखा स्वयं नहीं कर सकते। इस स्थिति में 'अधिकाधिक-बनाम' की संस्था का उत्पन्न प्रति-आत्म स्थापित करना है, जो अधिकार-आत्म के सम्मानानुर हो तथा इसके उन अधिकारों की सुरक्षा हो। यदि उचित कर के बनाने कार्य तो एक देश के मनुष्यों का यही उत्पन्न होता है।

अनेक व्यक्ति बनानी रखा के लिए अपनी प्रति की अनेक कानून की प्रति को अधिक उचित व्यवहार उसकी सहायता देना है, और इसलिए सरकार और विधान के बिनाके द्वारा सभी लोग आशित होंगे और शायद प्राप्त करेंगे निर्माण में सभी मनुष्यों का समान अधिकार होना चाहिए। अमेरिका और जाति के समान विधान देणों और समाजों में इस अस्तित्व अधिकार का उपयोग केवल निर्वाचन और अधिकारिण्य द्वारा हो सकता है और 'प्रतिनिधि सरकार' की नहीं के बराबर होती है।

जब तक मैंने अपनी सभी केवल सिद्धांत की बातों में सीमित रखा। अनेकजन मैंने यह सिद्ध किया कि आधुनिक सरकार को अस्तित्व विरहक अधिकार नहीं है किन्ती भी अधिकार सम्पत्ती सिद्धांत पर इसकी स्थापना

भौतिक शिष्टांतों के चिन्तन द्वारा अपनी देशभक्ति को समय-समय पर नवीन बनाता सभी अवस्थाओं विशेषकर क्रांति की दशा में आवश्यक है। और वह आवश्यकता अब तक बनी रहती है, जब तक सही विचार अभ्यास के द्वारा अपनी स्थापना स्वयं नहीं कर लेते। वस्तुओं के मूल तक जाकर उनही जाम कापी प्राप्त करना उन्हें ठीक रूप से समझना है और उनके सम्भव एवं विकास क्रम को सर्वत्र ध्यान में रखने से हम उन्हें कभी भूल नहीं सकते।

अधिकारों के मूल का अन्वेषण इस बात को प्रकट करेगा कि अधिकार एक व्यक्ति के द्वारा अन्य व्यक्ति को दाना मनुष्यों के एक वर्ग के द्वारा अन्य वर्ग को दिये गये दान नहीं हैं। पहला दावा कौन हो सकता था ? या फिर शिष्टांत के अनुसार दाना किस आधार पर दिये दान देने का अधिकार हो सकता था ?

‘अधिकारों का बीपला-वन’ न तो बीपला करनेवाले की सृष्टि है और न उनका दान। यह सब शिष्टांत का प्रकाशन है जिस पर व्यक्तियों का अस्तित्व है, साब-ही-साब अधिकारों का पुरा विवरण प्रस्तुत किया गया है। प्रत्येक नागरिक-अधिकार का आधार कोई-न-कोई प्राकृतिक अधिकार है और मनुष्यों के बीच उन अधिकारों की पारस्परिक सुरक्षा का शिष्टांत इसके अंतर्गत है। चूंकि मनुष्य के मूल के अतिरिक्त अधिकारों का कोई अन्य मूल नहीं निकालना सम्भव है अतः यह स्पष्ट है कि अधिकारों का सम्बन्ध मनुष्य के अस्तित्वाधिकार से है, और इसलिए सभी मनुष्यों के अधिकार समान होने चाहिए।

अधिकारों की समानता स्पष्ट और सरल है। प्रत्येक व्यक्ति इसे समझ सकता है। अपने अधिकारों को समझने पर वह अपने कर्तव्यों को भी समझ सकता है, क्योंकि जहाँ सभी के अधिकार समान हैं वहाँ प्रत्येक व्यक्ति अपने अधिकारों की सर्वाधिक सकल सुरक्षा के रूप में अर्थों के अधिकारों के रक्षण की आवश्यकता को पूर्णतः स्वीकार करेगा।

किन्तु यदि संविधान के निर्माण में हम अधिकार-साम्य के शिष्टांत से हट जाते हैं अथवा उसमें कुछ संशोधन करने का प्रयत्न करते हैं, तो हम आपत्तियों की एक ऐसी भूत-भूतियाँ में पड़ जायेंगे जहाँ से लौट जाने के अतिरिक्त निर-सन्देह का कोई उपाय नहीं होगा। हमें कहीं रुकना है ? अथवा कुछ शिष्टांत के

होय समाज का संघटन होता है अनुसार बहुमत सबके लिए नियम बन जाता है और अल्पमत उन नियम की व्यावहारिक कार्याकारिता स्वीकार कर देता है। यह बात अधिकार-साम्य सिद्धांत के सर्वथा अनुकूल है क्योंकि वही बात तो यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को मत देने का अधिकार है, किन्तु रिती को यह अधिकार नहीं है कि उसका मत सैप लोगों का धाघन करे। दूसरी बात यह है कि पहले से यह तय नहीं चला कि बहुत व्यक्ति का मत बहुत नियम है बहुत पक्ष में होना कुछ विषयों पर वह व्यक्ति बहुमत में हो सकता है और कुछ विषयों पर अल्पमत में। बरन्त, जब एक स्थिति में वह अपने प्रति कार्याकारिता की जाया रहता है, तो उसी नियम के अनुसार दूसरी स्थिति में उसे अनुवर्तन करना चाहिए।

परंतु मैं व्यक्ति के समस्त मिलने उपाय हुए, उन सबका अनुभव अधिकार साम्य के सिद्धांत के कारण नहीं चला वह सिद्धान्त के उल्लंघन के कारण हुआ। अधिकार-साम्य के सिद्धान्त का बार-बार उल्लंघन किया गया, वह भी बहुमत के द्वारा नहीं अल्पमत के द्वारा और जब अल्पमत में सम्प्रतिबल तथा अप्रतिबल दोनों प्रकार के समुच्च समितित्व थे। इसलिए जब तक के अनुभव के आधार पर भी वर्तमान अधिकार व्यवस्था परिवर्तन की जरूरती नहीं हो सकती।

कभी-कभी यह सम्भव है कि अल्पमत डीक हो और बहुमत मतलब किन्तु अभीही अनुभव इसे सिद्ध कर देना अभी तब अल्पमत बहुमत की और बढ़ता और अधिकार-साम्य तथा मत-स्वातंत्र्य की धारणा किया द्वारा वह बनती रहब डीक हो सकती। इसलिए रिती भी प्रकार हैं विधान का अतिरिक्त भिन्न नहीं हो सकता और अभी अधिकार-साम्य तथा मत-स्वातंत्र्य है वही विधान कभी भी आवश्यक नहीं हो सकता है।

इसलिए अधिकार-साम्य के सिद्धान्त को व्यक्ति और उत्तरिस्थानस्वरूप अधिकार का आधार मानते हुए, संविधान में सरकार के विभिन्न अवयवों की व्यवस्था किन प्रकार हो वह विषय मत की प्रभाव-सीमा के भीतर पड़ता है।

इस प्रकार के प्रश्न पर कई प्रकार की प्रतिक्रियाएं प्रस्तुत की जा सकती है और यद्यपि सर्वोत्तम प्रतिक्रिया का निर्णय करने में अनुभव अभी भी अपर्याप्त है किन्तु मैं सोचना है कि उसने पर्याप्त रूप से यह निर्दिष्ट कर दिया है कि क्या

नहीं हो सकती और यह सरकार सब सिद्धान्तों का सम्मेलन करती है। दूसरी बात जो देने स्पष्ट की वह यह है कि निर्वाचन और प्रतिनिधित्व-पद्धति पर स्थापित सरकार का मूल मनुष्य के प्राकृतिक और दायित्व अधिकारों में है।

मनुष्य अपने इस अधिकार का उपयोग कई रूपों में कर सकता है। प्राकृतिक जीवन की स्थिति में अपना विधान वह स्वयं बना सकता है। छोटे-छोटे प्रजातीय देशों का जहाँ कि कामन बनाने के लिए सभी लोग एकत्रित हो सकते हैं, मनुष्य विधान विषयक शक्ति के अपने अंश को स्वयं में रख सकता है और प्रतिनिधियों की 'राष्ट्रीय सभा' में उसका प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्तियों के निर्वाचन में वह अपने इस अधिकार का प्रयोग कर सकता है। किन्तु सभी देशों में अधिकार का मूल एक ही है। जैसा कि कहा जा चुका है अधिकार विषयक उपयुक्त तीन प्रकार के उपयोगों में से प्रथम शक्ति में अपूर्व है। दूसरा केवल छोटे-छोटे प्रजातांत्रिक देशों में ही व्यवहार्य है किन्तु अधिकार प्रयोग का तीसरा प्रकार मानवीय सरकार की स्थापना के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है।

सिद्धांत के बाव मूल का प्रश्न उठता है और इन दोनों का अंतर जान लेना आवश्यक है। मनुष्यों के अधिकार समान होने चाहिए। वह मूल की बात नहीं वरन् अधिकार की बात है और परिणामतः सिद्धांत की बात है क्योंकि मनुष्य अपने अधिकारों को आपस में एक दूसरे से दानस्वरूप प्राप्त नहीं करता वरन् वे उसके निजी अधिकार हैं। समाज संरक्षक हैं न कि दाता। अमेरिका और फ्रांस के समान विचार समझों में सरकार विषयक व्यक्तिगत अधिकार का उपयोग निर्वाचन और प्रतिनिधित्व के अतिरिक्त अन्य किसी रूप से नहीं हो सकता। इस लिए यह स्थिति में जब कि सरल प्रजातन्त्र अभ्यवहार्य है, प्रतिनिधि पद्धति ही एक मात्र सरकार-पद्धति है जो सिद्धांतानुकूल है।

किन्तु सरकार-धर्म के विभिन्न पुत्रों की व्यवस्था किस प्रकार की होनी चाहिए वह मूल का विषय है। यह आवश्यक है कि सभी मानव अधिकार साम्य के सिद्धांत के अनुकूल हों। जब तक इस सिद्धांत का व्यवहार्य अनुसरण होता रहेगा तब तक कोई भी तात्त्विक भुटि नहीं हो सकती और सरकार के उस अंश में भी गयी गसती विरकास तब टिक नहीं सकती जो मूल की प्रभाव सीमा के भीतर पड़ता है।

मूल के सभी विषयों में सामाजिक समझौते या उस सिद्धांत के जिसके

कुटी पद्धति कोन है। सर्वाधिक कुटी पद्धति यह है, जो अपने विचारों निर्णयों में एक व्यक्ति के साहस और उत्कट भावों के बलीमूठ है।

विधान-मण्डल केवल एक सभा में समाविष्ट होता है तो यह समूह के रूप में है। विचार की सभी स्थितियों में नियन्त्रण रखना आवश्यक इसलिए इसकी अपेक्षा कि सभी प्रतिनिधि एक साथ बैठकर किसी विषय पर विचार करें अच्छा यह होगा कि प्रतिनिधियों को चिट्ठी आसकर वो भावों बाँट दिया जाय ताकि वे दोनों एक दूसरे का विचार और संशोधन कर सकें।

प्रतिनिधि-सरकार का स्वल्प विधेय में सीमित होना आवश्यक नहीं है बिन स्वयं के अन्तर्गत इसकी स्थापना हो सकती है उन उनके मूल में ही सिद्धान्त है। अनुषंगों का अधिकार-साम्य यह मूल है, जहाँ से सरकार उत्पन्न होता है। शाखाओं की व्यवस्था बतमान यहाँ अपेक्षा भावी अनुभवों के सर्वोत्तम निर्देश के अनुसार होगी। जहाँ तक ब्रिटेन की 'राज्य-सभा, जिसे वेस्टमिन्सटर असाब्लियों का अस्पताल' कहते हैं प्रष्टाचार से उत्पन्न होने वाली प्राकृतिक 'मांस-प्रति' है। जनता के अधिकार से उत्पन्न विधान-मण्डल की शाखाओं में से किसी एक और उपर्युक्त राज्य-सभा के बीच का साहस्य मानक-वर्तित के प्राकृतिक अर्थ और नासुरयुक्त मांस-प्रति के बीच स्थित साहस्य की अपेक्षा अधिक नहीं है।

सरकार के कार्यपालिका-विभाग की वर्णों के आरम्भ में ही इस 'कार्यपालिका' (Executive) शब्द का अर्थ निर्दिष्ट कर लेना आवश्यक है। शक्ति को केवल दो वर्णों में रखा जा सकता है अर्थात् कानून बनाने की शक्ति और उसे निष्पादित करने की शक्ति। प्रथम प्रकार की शक्ति अनुषंग की जब शक्तियों के दुर्लभ है जो इस बात पर विचार करती है और निर्णय करती है कि हमें क्या करना है। दूसरे वर्ण की शक्ति अनुषंग की जब ऐहिक शक्तियों के समान है, जो उस निर्णय की निष्पादित करती है।

यदि पहली शक्ति निर्णय करती है और दूसरी उसे निष्पादित नहीं करती तो, यह निर्बलता की स्थिति हुई। यदि दूसरे प्रकार की शक्ति प्रथम प्रकार की शक्ति के पूर्व निर्णय के बिना ही काम करती है तो यह उन्माद की स्थिति होगी। इसलिए कार्यपालिका-विभाग वास्तव में एक कार्यकारी विभाग है तथा विधान-मण्डल के आधीन है, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार स्वायत्त की

नियति में दरीर अतिरिक्त के आधीन रहता है, क्योंकि दो-दो सार्वभौम प्रभुत्वों की, एक कानून बनाने वाला और दूसरा कानून का निष्पादन करने वाला बनना करना असम्भव है।

कार्यपालिका-पक्ष की यह विरुद्ध करने का अविचार नहीं है कि यह काम करे या न करे क्योंकि कानून विरुद्ध काम की जाड़ा देता है यह उसके अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सकती है। कानून के अनुसार काम करना उसके लिए अविवार्य है। इस दृष्टिकोण से देखने पर यह स्पष्ट है कि कार्यपालिका-विभाग में शासन-व्यवस्था के सभी विभाग सम्मिलित हैं, जो कानून का निष्पादन करते हैं और विवेकें न्याय विभाग (Judiciary) प्रयुक्त हैं।

विष्णु गजस-बापट ने 'कानूनों' के निष्पादन के अवीसरण तथा यह देखने के लिए कि कानूनों का निष्पादन विरहातपूर्वक रूप से ही एक प्रकार के अधिकार को आवाहक बना है। कानूनों के शासकीय निष्पादन के साथ इस अवीसरण-अधिकार का जोन स्थापित करने के कारण हम कार्यपालिका-पक्ष से परचाले हैं। 'संयुक्त राज्य' अमेरिका के सभी शासन-विभाग विन्हीं कार्यपालिका-विभाग बना जाता है। कानून के निष्पादन का अवीसरण करनेवाले शासन विभाग के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है और वे विभाग-व्यवस्था से इतने अधिक स्वतन्त्र हैं कि वे केवल कानूनों के द्वारा उनके विभाग का आत्म प्रत्य करते हैं तथा विभाग-व्यवस्था के द्वारा अन्य किसी माध्यम के पक्षक विफलता बचवा निरोधन नहीं हो सकता।

उपरोक्त एवं अनुभवविद्य कुछ ऐसी बातें हैं, जो इस विषय का विरुद्ध करने में हमारा मार्ग-दर्शन करती हैं। पहली बात यह है कि किसी व्यक्ति को आजागर्य अविचार नहीं देना चाहिए; क्योंकि इसके अतिरिक्त कि यह इसके दुर्भावों के अवीसरण में यह कहता है। इसके द्वारा यह मर में सर्व्व और निम्न को अवीसरण दिखती है। दूसरी बात, व्यक्तियों के हार्थों में विरहातवी अविचार नहीं देना चाहिए, चाहे कभी संख्या कुछ भी हो। उपर-उपर पर दिने नवे परिवर्तनों के कारण होनेवाली अनुविचार्य, उन व्यक्तियों के विरहात सब अविचार में रहने के कारण उत्पन्न होने वाली संघट की अवेजा एक अवधारक है।

बीर व अधिभार, स्थापना हुई। सदाचार और अनपेक्ष बाकस्विक बलाओं पर निर्भर है; और जो कभी देखभाल की गयी बार में विरहावस्था हो गयी।

अधिभार के अभाव के होते ही वह सब हुआ क्योंकि अधिभार की प्रकृति और अन्तः प्रकृत धारण को रोकने की होती है। इसी लिए अधिभार ऐसे सामान्य विज्ञान की स्थापना करता है जो इन की प्रकृति और अन्तः की सीमित और निर्दिष्ट रखता है, और जो कभी कभी को आदेश देता है—'तुम सब इस सीमा तक जा सकते हो, इसके जाने नहीं' किन्तु अधिभार के अभाव में अनुभव प्रकृत करने सब की ओर देखते हैं और इसके करते कि विज्ञान सब का साक्ष्य करे, इन सब विज्ञान का साक्ष्य करने लगता है।

रक्त देने की कल्पना अन्तः स्वतन्त्रता के लिए सर्वदा प्रयत्न है। इसके अन्तः अनुभव सर्वोत्तम प्रकृतों के अधिभार को बढ़ा-बढ़ा कर अपना महत्त्व देने से स्पष्ट करते हैं। जो अपनी स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखना चाहता है, उसे अपने अनु को भी असाधारण के अभाव चाहिए। क्योंकि यदि वह अपने इस सर्वोत्तम का अन्तर्भव करता है, तो वह एक ऐसा पूर्ण दृष्टान्त स्थापित करता है जिसका पूर्णतयाव सब ही बोझा रहेगा।

बैरि, मुम्बई १७११ ई०

टॉम पेन

स्वतन्त्रता के कुछ रसा-साधनों की खर्चा करने के उपरांत ये इस विषय को समाप्त करनेवाले क्योंकि स्वतन्त्रता प्राप्ति ही आवश्यक नहीं है, उसका रसास भी उतना ही आवश्यक है।

सर्वप्रथम स्वासम्य-स्थापना का मार्ग निर्दिष्ट करने के लिए निरंकुश शासन को विनष्ट करने में प्रयुक्त साधनों और निरंकुश शासन की समाप्ति के बाद उपबोध में लाये जानेवाले साधनों के भेद को जान लेना आवश्यक है।

उपर्युक्त दो प्रकार के साधनों में से प्रथम प्रकार के साधनों का अधिष्ठान आवश्यकता द्वारा विवक्षित होता है। वे शासन सामान्यतः विप्लव है क्योंकि जब तक निरंकुश सरकार किसी देश में स्थापित है तब तक किसी भी अन्य शासन का उपयोग कदाचित् ही सम्भव है। यह भी निश्चित है कि अन्तिम के आरम्भ में अन्तिमकारी वस व्यक्ति का विवेकपूर्ण प्रयोग करता है, जो सिद्धान्त की अपेक्षा, परिस्थितियों द्वारा अधिक संभावित होता है। यदि इस प्रकार का प्रयोग बराबर होता रहेगा तो स्वतन्त्रता की स्थापना कदापि नहीं हो सकती है, और यदि उसकी स्थापना हो भी पसी तो वह धीमे ही विनष्ट कर दी जायगी। अन्तिम के समय इस प्रकार की जासा नहीं करनी चाहिए कि सभी व्यक्ति एक ही समय अपना मत बतल सकते हैं।

जब तक ऐसा कोई सत्य समझा सिद्धान्त नहीं रहा है जो इतने निर्बल आत्मिक रूप से स्पष्ट रहा हो कि सभी लोगों ने उसमें एक साथ ही विश्वास कर लिया हो। किसी सिद्धान्त की अन्तिम स्थापना के लिए समय और बुद्धि को परस्पर मिलकर कार्य करना चाहिए। इसलिए जो लोग किसी सिद्धान्त या मत की सत्यता में अन्तों की अपेक्षा अधिक शीघ्रता के साथ विश्वास कर लेने में सक्षम हैं, उन्हें चाहिए कि वे उन लोगों को पीड़ित न करें, जिन्हें उस सत्यता को समझने में विलम्ब लगता है। अन्तियों का नैतिक सिद्धान्त है समझना, न कि मष्ट करना।

परि दो वर्षों पूर्व संविधान बना होता जैसा कि होना चाहिए या तो मेरे मतानुसार उन हिंसाओं का निवारण हो जाता जिन्होंने उस समय फ्रांस को बर्बाद किया और अन्तिम के अन्तिम को छति पहुँचायी है। इस स्थिति में राष्ट्र एकता के बचन में होता और प्रत्येक व्यक्ति को अपने कर्तव्य का ज्ञान होता। किन्तु इसके बदले एक अन्तिमकारी सरकार की जिज्ञासा न कोई सिद्धान्त या

बीर व बहिष्कार, स्थापना हुई। अन्धकार और अन्धराय जाकस्मिक बन्धनों पर विरत रहे; और जो कभी देशवर्षित भी नहीं बार में विरहावस्था हो गयी।

हिंदीयान के बन्धन के गले ही यह सब हुआ क्योंकि बहिष्कार की शक्ति और हथियार समस्त छात्रों को एकजुट की होती है। इसी लिए बहिष्कार ऐसे सामान्य विद्रोह की स्थापना करता है जो सब की शक्ति और धर्म को तीव्र और विचित्र रखता है, और जो सभी बलों को बाधित करता है—'युद्ध' सब एक हीमा एक या एकटे हो एकटे जाने लगे। किन्तु बहिष्कार के बन्धन में अनुभव पूर्णता करने सब की और देखते हैं, और इसके करते कि विद्रोह सब को बाधित करे, सब स्वयं विद्रोह का आह्वान करने लगता है।

सब होने की एकजुट हथियार स्थापना के लिए सर्वथा बाधक है। इसके कारण अनुभव बहिष्कार क्रान्तियों के बहिष्कार को बन्धन-बद्ध कर बन्धन बल्लभ रूप से लक्ष्य करते हैं। जो अपनी स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखना चाहता है, उसे अपने धनु को भी आत्मचार से बचाना चाहिए। क्योंकि यदि वह अपने हठ कठिन पर अत्यन्त करण है, तो वह एक ऐसा दुर्बल हथियार स्थापित करता है जिसका भुविध्यान सब ही छोड़ना पड़ेगा।

वैरि, मुम्बई १९११ ई

टॉम पेन